प्रकाशक :—
पद्मराज जैन
जेनरल सेक्रेटरी,
अखिल भारतीय हिन्दू-महासभा
नं० २, चर्च लेन, कलकत्ता ।

सर्वाधिकार सुरक्षित

मुद्रक—
विष्णुदत्त शुक्ल
शुक्ल प्रेस
७।१, बाबूलाल लेन, कलकत्ता ।

प्रकाशक का वक्तव्य

यह समय बुद्धिवाद प्रमाण युक्त ज्ञान और विज्ञान का है इस समय प्रत्येक राष्ट्र या समाज अपनी सभ्यता सस्कृति भाषा और उन्नत दशा मे एक दूसरे को अपनी ओर आकर्षित करने मे अग्रसर है। ऐसे प्रतिद्वन्द्विता मूलक अवसर मे वही जीवित रह सकता है जिसका आदर्श सुदृढ और सुसगठित हो। यह ठीक है कि भारत विदेशीय शासको द्वारा वर्षों से ग्रसित होने के कारण अपने अनेक गौरवो को खोता ही जा रहा है। साथ ही हमारी सस्कृति और भाषा के ऊपर भी विदेशियो ने तरह तरहके अत्याचार किये हैं। आज कहलाने वाले शिक्षित और राष्ट्रीय नेता भी हमारी मातृ भाषाको विनष्ट करनेके पीछे हाथ धोकर लग गये हैं। और उन्हे यह बात असभव-सी जचती है, कि भारतीय हिन्दू ही कभी ससारके एक मात्र सुसभ्य सम्राट् थे, और इसी देशकी भाषा, कला, संस्कृति एव सभ्यताने विश्वको शान्तिका पाठ पढाते हुवे सुसभ्य बनाया था, परन्तु उक्त बातोको लाख यत्न करनेपर भी दबाया जाना असभव हो गया है। विदेशी शासकोसे सदाचार प्राप्त अनेक ऐतिहासिको ने यद्यपि बहुत दिनो तक इसे छिपाया भी, परन्तु स्वार्थियोके वे सब स्वार्थ समन्वित माया जालको ससारके कोने-कोनेसे प्राप्त होने वाले सुप्राचीन, शिला लेख, ताम्रपत्र, स्तूप, और भग्न मदिरोने आज सिद्धकर ससारमे हिन्दुत्व निदर्शन दिखा डाला—भारतीय सभ्यता आज अन्य देशीय और धर्मियोकी तरह स्वार्थ सिद्धिके लिये न थी। यह जहा

जाती थी, वह मित्रता, और उन्नतिके भव्य भाव भरी सुसभ्य संस्कृतिके शांति दायक संदेशको ही लेकर। इसीसे आज ज्यों-ज्यों संसार अनाचार और आडम्बरसे विरक्त होता जाता है, त्यों-त्यों उसे भारतीय संस्कृतिके प्रति श्रद्धा होती जाती है।

दुर्भाग्यतः इस दृष्टिकोणको जताने वाला, और प्राचीन भारतीय आर्य (हिन्दू) सभ्यताको सिलसिलेवार ऐतिहासिक रूपमे झलकाने वाला ग्रंथ मेरी जानकारीमें एक भी नहीं है। मैं इसकी आवश्यकताको अनुभव करते हुवे "विश्वपर हिन्दुत्वका प्रभाव' ग्रन्थ प्रकाशित कर रहा हूं। सौभाग्य है कि मेरे मनोवांछित साधनाकी पूर्तिके लिये मुझे इतिहासके जानकार सुयोग्य विद्वान पं० विश्वनाथ शास्त्रीजी मिल गये।

अब मैं और लेखक अपना परिश्रम तभी सफल समझेंगे जब कि हिन्दू संसार इसे अपना कर हमारे उत्साहको बढ़ायगा।

कलकत्ता
२२-१०-४०

विनीत :—
पद्मराज जैन,
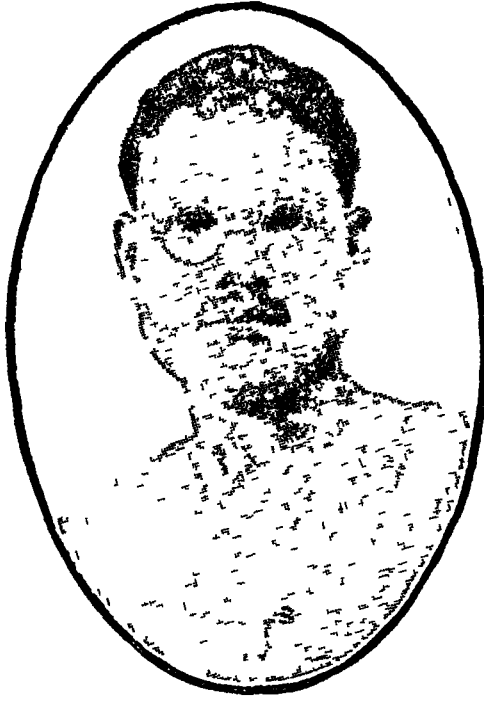
इस ग्रन्थके लेखक :—

पं० श्री विश्वनाथ शास्त्री

(RESEARCH SCHOLAR)

सहायक-ग्रन्थोंकी तालिका

AUTHORITATIVE —

1. Li Bouddhisme, by Filex Neve, (Paris)
2. Weltan ffaffungder Budhifteu, by Baftian, (Berlin 1870)
3. Sur Lis Phongies, by Paw Bicandet (Paris)
4. Observatiouns, Par M. Abel-Remusat (Paris)
5. Medieval mysticism of India, by Kshiti Mohan Sen,
6. Patliputra, by L. A. Waddell, M. B.
7. Vorder Indiochen hallinsel, by A. Bastian
8. Ancient-Indiaschen, by Romeshchandra Dutta. Vol 1,
9. Culture historiche studian, by Bastian.
10 Egypt of Hero dotus, by Johan Kenrick, M A.
11 Angkor, by P. Jeaunerl Di, Beeiski
12. " " by H. G. Gandee,
13 Indian Antiquary.
14. The Cambridge history of India, Vol, 1 to VII
15. Encyclo Pedia Britanica, (Fourteenth Edition).

16. Journal Asiatique Paris.
17. Crawfurd's History of Celebs.
18. Asiatic Researches, (Calcutta & London)
19. Bali in lombok. over zichtder litterature om-ent deze cilandm tot cinde, 19-19,
20. Encyclo Pedia Indica, (Bengali and Hindi)
21. Java Sumatra and the other Islands of the Dutch Est Indies, by A. Cambaton, T. Fisher unwin London, 19-11
22. History of Java, by Sir, T S. Raffies 2 vols. (London).
23. Kawi Balineesche Nender landsche woorden bock, by Dr. H N. vander tuuk. 4 vols Balavia (18-97)
24. Theatre a Japan Annubs du musee Gnimet. Vol XXX,
25. Chinesische Urkunden Zur Geschichte asiens by J. J. M. De Groof (Berlin, 1926)
26. History of India, by Tomson
27. Weber's "Sanskrit literature"
28. Memoirs of India atter Arb. Persian and Chinese writers, by Ranaud,
29. Webers History of sanskrit literature.
30. Max muller's Ancient sanskrit literature.
31 Dr. Bothllngks, Panini, Band. II. P XIIV.
32. Goldstucker's Manava-kalPasutra, Preface.

33. Anand Kintish Kumar Swami the Reg. Vedas Land Nama book. 1935.
34 Introduction to tantra Philosophy, by S. N Das Gupta,
35. International Journal, of America, V. 5,
36. History of the Vaisnvism, by H Chandra Ray Chaudhary. (2 copies)
37. Atlas, spruner-menke hand Atlas. M. & P. 1277.
38. G. Brist the physical Geography,
39. Studies in Indian Antiquties (2 copies) H. Roy Choudhary.
40. V. S. Agrauala, Archeology' muttra,
41. R. Muir and G. Philips Historical Atlas P.
42. The History of the London Missionary. Society, by Rechard lovett, M. A. Vol 1-11,
43. History of Persia,
44. Cunnin gham,
45. Tod's Rajasthan.

सहायक ग्रन्थोंकी तालिका

१—महाभारत संपूर्ण (संस्कृत)
(एशियाटिक सु० कलकत्ता और भण्डा० पूना)
२—अग्निपुराण।
३—मत्स्यपुराण।
४—वृहद्धर्म पुराण।
५—वायु पुराण।
६—श्रीमद्भागवत।
७—भविष्य पुराण।
८—बौद्धजातक।
९—मज्झिम निकाय।
१०—बुद्ध चर्या।
११—मनुसंहिता।
१२—कथा सरित्सागर।
१३—वृहत्संहिता (वा० मि०)
१४—राज तरंगिणी।
१५—मार्कण्डेय पुराण।
१६—हिन्दुस्तानकी पुरानी सभ्यता।
१७—महाराष्ट्र ज्ञानकोष (महा०)।
१८—विश्वकोष। (बंग और हिन्दी)
१९—वाल्मीकि रामायण।
२०—स्कन्द पुराण।
२१—मार्कण्डेय पुराण।
२२—साम्ब पुराण।
२३—निर्वाण तन्त्रम्।

समर्पण

स्वर्गीया-जननी-चञ्चलादेवी

की

स्मृति पर

माँ !

तेरी प्रेरणा और तेरे ही अमर मन्त्रोसे दीक्षित, तुम्हारा एकमात्र यह क्षुद्र पुत्र, आज भारतीय आर्य-गरीमा, भव्य महिमा, और विशाल-सस्कृतिकी चिन्तामें संलग्न है।

किन्तु माँ!

प्रेमस्मरामि सुखदे ! अनघे ! यदाते,
गाढ़ जलं स्त्रवतिनेत्रपथात् समन्तात्।
जिह्वा स्वकर्म विगता नहि भापते सा,
मातर्हि देवी शुभदे ! भवती नमामि ॥

—मातृ-स्नेह-हीनः

त्वमेवहि "विश्वनाथः"।

प्राक्कथन ।

विश्वपर हिन्दू सभ्यताके प्रभावका इतिहास जान लेना सचमुच असाधारण विषय नहीं है। इस विषयका सीधा सम्बन्ध अत्यन्त प्राचीनकालके आदि सभ्य, आर्य समुदायके इतिहासपर निर्भर है। उस समय आजकी नाईं ऐतिहासिक परिभाषा और आत्म प्रशंसाको लिख रखनेकी आकाक्षा एव धरोहर बनानेकी पद्धति आर्योंमे नहीं थी। उन लोगोकी अधिकतर शक्तिया कुछ तात्कालिक सामाजिक उन्नतिके लिये पथ प्रदर्शन करनेमे ही लगती थीं। व्यक्तिगत जीवनका प्रायः अर्धाधिक भाग तपस्या, आचार रक्षा, तथा पार लौकिक अध्यवसायमे सलग्न रहता था। लोक और परलोकके दो पथ सबोके सामने थे। लोकका सम्बन्ध केवल मात्र सदाचार पूर्वक जीवन निर्वाह तक सीमित था, और परलोक पथ सबसे अधिक महत्वपर प्रतिष्ठित था। यही कारण है कि दर्शन, वेदान्त, और आध्यात्मवादकी आर्य ऋषियोने जितनी छान-बीन की, एवं विषय प्रतिपादनमें समय लगाया, उसका अर्धांश भी इतिहास संकलनमे नहीं लगाया गया।

आर्योंकी ग्रन्थ राशियोमें ऐतिहासिक प्रदीप देनेवाले ग्रंथ महाभारत तथा रामायण माने गये हैं, किन्तु ये इतने अधिक विषयोके तथा विशालत्वके सागरमें घुस गये, कि इनसे सहजमे कालका निश्चय प्राप्त कर लेनेकी अभिलाषा वाले, इनसे खिन्न और निराश हो उठते हैं। इन दो ग्रन्थोके अतिरिक्त और भी आर्योंके असंख्य सुप्राचीन ग्रन्थ हैं, और

इनमें इतिहास बतानेवालोंमें प्रधान पुराण ग्रन्थ हैं। इनकी संख्या भी थोड़ी नही और वश परम्परा भी साथ लिये हुए हैं, किंतु इनसे भी आज के नवीन ऐतिहासिकोको असंतोष ही है, और साथ-साथ ये हास्य व्यङ्गके क्षेत्रमें भी अवतीर्ण हो जाते हैं। सबोमें वृद्ध पितामह वेद हैं, परन्तु इनकी भाषा और ढग निराले हैं। पवित्रताके चादरसे इनका कलेवर सघन रूपसे ढ़क गया है।

तब क्या इतिहास नहीं है ?

सच तो यह है कि आजकी नवीन ऐतिहासिक परिपाटी भी, जिसे हिरोडोट्, स्ट्रौवो, बौप, ग्रिम, मूलर, आदिकोने चलाई, वे भी विना आर्य और भारतके इतिहास जाने व्यर्थ और निराधार हैं। इतिहासका मूल संस्कृति है, अतएव इतिहास सकलनके लिये आर्य सस्कृतिका आश्रय ग्रहण नितान्त आवश्यक है।

राजनैतिक इतिहासके लिये पुराण, और काव्यादि नितान्त अभ्रान्त नहीं हैं। रही बात साधन की, इसके लिये सर्वाधिक और सर्व प्रथम आवश्यकता है शिक्षा,संस्कार और धारनाको भारतीय,तथा आर्यत्व भावमे परिणत कर लेने की। इतनेपर भी एक कठिनाई रह जाती है, और वह है सामग्रियोका विशालत्व। इसके लिये धैर्य और प्रतीक्षा उपयुक्त है, जो लगातार पूर्ण-श्रम साध्य है। रही बात तिथि जानने की। यह विपय हिन्दुस्तानमें सर्वदा ही भिन्न विपय रहा है। फिर भी ज्योतिप शास्त्र को ज्ञानका चक्षु जो आर्यो द्वारा प्रधान रूपसे घोषित किया गया है, वह अवश्य काल जाननेके लिये ही। आर्योंकी यह पद्धति भी अत्यन्त निराली,

निश्चय बोधिका और नाश रहित है। इसके द्वारा हमारे सब समयोका निश्चय शुद्ध रूपमें हो जाता है, और यही मार्ग काल-मानके लिये अपूर्व एव उपयुक्त है।

+ + + +

विघ्न-संकुल-दशा।

इस ग्रन्थमे कई अभाव रह गये हैं, कई एक अड़चनोके कारण मैं अपनी इच्छानुकूल इसका प्रकाशन भी न कर सका। प्रवन्धमे भी कई विघ्न और उलट फेर होते रहे। प्रेस भी मुझे संतोषजनक न मिला। इससे प्रकाशन अवश्य सदोष है, और मै पाठकोके आगे सलज्ज क्षम्य हूँ। साथ ही नितान्त सक्षेपकी चेष्टा करते रहने पर भी, मैं इसमें तिब्बत, सिलोन, ब्रह्मा, नेपाल और भारतका इतिहास न दे सका। उक्त चारो देश अभी भी हिन्दू धर्म प्रधान एवं हिन्दूत्व पूर्ण हैं। इनके इतिहास भी लम्वे चौड़े हैं, और होना भी चाहिये ही, साथ ही उन सबोका हिन्दुत्व बना रहना ही उनके हिन्दुत्वके प्रकाशक हैं, और पूर्ण पर्याप्त हैं। इस कारण यद्यपि यहापर उनका इतिहास हमारे ग्रथके विशेष चिन्ता के लिये नही भी हैं, फिर भी यह विचार हो गया है कि इस ग्रंथके दूसरे संस्करणमे सभी अभावोकी पूर्ति अवश्य करनेकी चेष्टाकी जायगी।

अब एक कर्तव्य मेरा और हमारे प्रेमी मात्रोका रह जाता है, वह यह है कि इस ग्रथमें जो कुछ अभाव और त्रुटी दीख पड़े उसे मेरे पास लिख भेजे। मै उसका स्वागत करूंगा, और अगले संस्करणमे उसपर पूरा ध्यान दूँगा। विश्वास है मेरी यह अभिलाषा भी तृप्त होगी, क्योकि अभी तक इस ग्रंथके लिये मै दुर्भाग्यतः किसी भी महानुभावकी बौद्धिक

और ज्ञानकी सहायता प्राप्तमें सर्वथा असमर्थ रहा हूँ। साथ-साथ अपनी अत्यन्त घोर आर्थिक अभाव ग्रस्त दशामें भी इस ग्रन्थका पूर्ण हो जाना मेरे लिये सौभाग्य है, और इसके लिये मैं जगन्नियन्ता जगदीश, तथा अपने आश्रित परिवारके संतोष, को धन्यवाद देते हुए, इसके प्रकाशक उदारनिष्ठ श्रीयुत् बाबू पन्नराजी जैनको भी सहस्र धन्यवाद देता हूँ। बस, शमित्योश्म्।

सदैव आप सबोंका ही :—

लेखक

विषय-सूची

अङ्ग-कोर-वट मन्दिर

इसकी चहार दिवारी १०८×११०० फीट की है। मन्दिर के इस आगे-भागको देखतेही हृदयमें

विश्वपर हिन्दुत्वका प्रभाव

कम्बोडिया (Cambodia) ।

यह प्रदेश आजसे थोड़े ही दिन पहले पूर्ण हरा-भरा हिन्दू-प्रदेश था। इसे उस समय भारतीय हिन्दू उपनिवेश कहा जाता था। यहांपर आर्य धर्मके सुदृढ तथा सुरक्षित महान् आदर्शमय जीवन प्रणालीकी वर्णाश्रम व्यवस्था अति उच्च रूपमे विस्तारित थी। आज यहाके सैकड़ोकी सख्यामे लिखे पुराने समयके शिलालेख, ताम्रलेख, मन्दिर, शिल्प रचना, आचार, व्यवहार तथा भाषाये हमे इसके प्रत्यक्ष प्रमाण दिखा रहे हैं।

स्थान-निर्देश ।

• यह देश वर्तमान मैप (मानचित्र) मे अक्षा० ८° ४७—से आरंभ होकर १५° ३० पर्यन्त तक फैला है। इसके उत्तर लेयस, पूर्वकी ओर को चीन-चीन, दक्षिण श्यामोपसागर एव चीन सागर, और पश्चिम श्याम देश है। पहले यह देश पश्चिम श्याम देशसे पूर्व अनामके दक्षिणांशतक विस्तृत था। यहाका जल-वायु अच्छा है।

× a protectorate within French Indo-china,

• Atlas archeologique de Indo-chin (1901) and Times Atlas,

पूर्व कालीन नामः—

यहाके शिलालेखमे इस देशका नाम अङ्ग चमनिक खुदा हुआ है। कोई-कोई इसे अन्नम (अनाम) भी कहते हैं। विशेषकर यह अङ्ग चम्पा-के ही नामसे प्रसिद्ध था।

भारतवर्षके अन्दर अङ्ग देशमे चम्पा नगर अभी भी है। यह चम्पा-नगर इस समय विहार प्रातके भागलपुर नगरमे है। पुराने समयमे चम्पा-नगर बहुत प्रख्यात स्थान था। यहा लोमश ऋषि, रोमपाद, जन्हु, ऋषि, कुमारिल भट्ट, दाताकर्ण, विष्णु शर्मा, आदि अनेक मनीषि तथा राजन बृन्द हो गये हैं।

बहुत अधिक सभव यही है कि यहाके ही अनुकरण पर इस देशका भी हिन्दू उपनिवेश होनेसे "अङ्ग चम्पा" नाम पड़ा होगा।

महत्व :—

इस देशके शिलालेखो, मूर्तियो तथा मन्दिरोको देखकर संसारके सभी विद्वानोने एक स्वरसे निश्चय किया है कि यहापर आजसे कुछ दिन पूर्व निश्चय इस देशमे वर्णाश्रम धर्म, तथा आर्य बौद्ध धर्मका पूर्ण विस्तार था। यहाके निवासियोका उस समयके समस्त आचरण, रहन सहन और विविध प्रणालिया भारतियोंके ही सदृश थे।

इस समय इसके अन्दर ६५,००० स्कायर मील जमीन है, और १६२६ ई० के गणनानुसार २,४०२, ५८३ जन सख्या है, इसमे तीन हिस्से कम्बोडियन, बाकी, श्याम, अनाम आदिके वासी हैं।

इस उपनिवेशकी नींव ईसवी सम्वतके आरम्भ कालमे पड़ी। यहापर

हिन्दू आचार पूर्ण घटनाओके विवरण अभी तक ईसाके द्वितीय शताब्दीसे मिल रहे हैं। यहा वर्मा उपाधिधारी क्षत्रिय वशजोके राज रहे हैं। यहाके प्रधान राजा क्याचूके विषयमे चीनी ग्रन्थोमे लिखा है कि इसने अपना क्याचू नाम वदलकर भारतीय हिन्दू नाम श्रुत वर्मा रक्खा था।

इसी श्रुत वर्माके समयसे यहाका वर्मा वशीय इतिहास प्रकाश पूर्ण है। इसके समयमे यहा विशेष रूपसे आर्य सभ्यता फैलाई गई। इस राजाका गोत्र कौण्डिन्य था, और यह चन्द्रवशी राजपूत था।

४३५ ई० से ८०२ ई० तक इस वंशका यहा राज्य रहा। इतने समयमे यहा २५ राजाओने राज्य किये।

राजाओंके नामकी तालिकायें।

नाम राजाओके:—	शासन-समय।
१—भव वर्मा (१)	५४८ शाका।
२—महेन्द्र वर्मा, तथा ईशान वर्मा,	५६१, ५८६ शाका।
३—जय वर्मा, (१)	५८६ से ५८९ शाका
४—भव वर्मा (२)	५८९ शाका
५—पृथिवी वर्मा,	(लगभग) ६५० (शा०)
६—इन्द्र वर्मा, (पृथिवी वर्माका पुत्र)	७९९ शाका
७—यशो वर्मा (इन्द्र वर्माका पुत्र)	८-११ शाके
८—हर्ष वर्मा (यशो वर्माका ज्येष्ठ पुत्र)	
ईशान वर्मा, (२)	८३३ शाके

९—जय वर्मा, (२) (ईशान वर्मा का पुत्र)	८५०	”
१०—हर्ष वर्मा (जय वर्माका पुत्र)	८६४	”
११—राजेन्द्र वर्मा (हर्ष वर्माका पुत्र)	८६६	”
१२—जय वर्मा (३) (राजेन्द्र वर्माका पुत्र)	८९०	”
१३—उदयादित्य वर्मा (१)	९२३	”
१४—जयवीर वर्मा	९२४	”
१५—सूर्य वर्मा (१)	९३९ से ९५०	”
१६—उदयादित्य वर्मा (२)	९५१	”
१७—उदयाकर वर्मा	९८८	”
१८—जय वर्मा (४)		
१९—रणधीर वर्मा	१०३१	”
२०—सूर्य वर्मा (२)	१०३४	”
२१—जय वर्मा (वैष्णव)	११०८	”

भारतीय सम्बन्धः—

यहाके एक शिला लेखमें लिखा है कि भारतवर्षका रहनेवाला एक अगस्त्य नामक ब्राह्मणने यहाकी एक यशोमती नाम्नी राजकन्यासे विवाह किया था। यह ब्राह्मण, वेदज्ञ था, और इसे वेद कण्ठस्थ थे। इस विवाहका काल ईसाकी सातवीं शताब्दीका है।

पीछे इसी ब्राह्मणसे उत्पन्न पुत्र नरेन्द्र वर्मा यहाका एक राजा हुआ। दशवीं शताब्दीमें यमुना नदीके तटका रहने वाला एक पं० दिवाकर के यहा आनेपर उनके गुण, विद्वत्ता तथा प्रतिष्ठा पर मुग्ध हो राजेन्द्र

वर्माने लगभग ८८० शाकामे अपनी परम प्यारी कन्या इन्द्र लक्ष्मीका विवाह इनसे कर दिया।

पं० वामशिव यहा भारतसे ७ वी, शताब्दीमें आये। इनकी भी यहा अत्यधिक प्रतिष्ठा देखी जाती है। ये कर्म काण्ड तथा राजनीतिके भी पूर्ण पडित थे। अर्थ शास्त्र और कौटिल्य शास्त्रका यहा उपदेश भी देते थे।

सामाजिक जीवन

यहाका भी सामाजिक जीवन भारतके ही समान था। मृत्युके बाद शरीर जला दिया जाता था, और स्त्रिया कोई-कोई सती भी होती थी। श्राद्ध तथा तर्पण भी यहा होते थे। यहाके निवासियोका विश्वास था कि मरनेके बाद जीवात्मा शिवलोक जाता है।

भारतके साथ ही साथ यहा भी शनैः शनैः छूआछूत तथा मूर्ति पूजा फैली। यहाके निवासी पौराणिक कालमे प्रधानतः शैव सम्प्रदायके थे। यहाकी खुदाईमें शिव, उमा, दुर्गा, क्षीर सागर शायी-विष्णु, गणेश, स्कन्द नन्दी, ब्रह्मा, तथा बौद्धादिकी प्राचीन प्रतिमाये मिली हैं। इन सब बातोको देखकर यह निश्चय हो जाता है कि यह देश हिन्दू देश-था। यहाके राज्यपर भारतीय आर्योंका प्रभाव होनेसे एव ब्राह्मण द्वारा राज्य संचालन होनेसे इसे राजनीतिमें हिन्दू उपनिवेश कहा जाता है।

राजा भव वर्मा तीनो काल (प्रातः साय और मध्यान्ह) संध्या करते थे। संध्याके अंतमे सूर्यार्घ देनेकी यहा भी प्रथा थी। संध्याके अतिरिक्त और भी कई एक उपासनाके अनुष्ठानमे सूर्यार्घ देना यहा पूर्ण प्रचलित था।

स्त्रिया एकही पतिको प्राप्तकर संतुष्ट थीं। ऐसी स्त्रिया समाजमें साध्वी कही जाती थी, एव उनकी प्रतिष्ठा भी होती थी।

ब्राह्मण और क्षत्रिय आवश्यक रूपमें यज्ञोपवीत धारण करते थे। शिखाका सम्मान अत्यन्त उच्च ढंगसे होता था। शिखाधारी कभी भी अपनी शिखा नहीं कटाते थे। देवार्चनके समय शिखा बाधनेकी परिपाटी थी।

अपनेसे बड़े गुरू जनोकी शिखा कोई नहीं छूता था। ऐसा न करने वाला असभ्य गिना जाता था। शिखा छू जानेके भयसे कोई भी अपने गुरू जनोके पास ऊंचा सिर नहीं करता था।

ये लोग आर्य (हिन्दू) धर्मके अनन्य भक्त और पुजारी थे। ये हिन्दू स्मार्त तथा बौद्ध सम्प्रदायको एकही आर्यमें रक्खे हुए थे। परस्पर दोनो सम्प्रदायोंमें विशेष विरोध नहीं था।

अंगकोरका महान मन्दिर, (Angkor)।

यह मदिर अपने ढगका एकही है। ● ससारमे इससे बडा मदिर दूसरा कोई भी नहो है। यह विशाल और सुदृढ़ है। इसकी नींवके कालको आज ससारके प्राय: समस्त पुराविद् गण एक कण्ठसे ईसाकी दशवीं शताब्दीका मानते हैं।

● 'Angkor thom, according to Aymo nier, was bugun about A. D. 860 and finished to worlds A. D. 900 within a rectongular enclosure, Gates,—Enyclo pedia Britanica, P. 928,

a Angkor, Ruins in Cambodia,

यह मंदिर कम्बोडिया प्रदेशमें ही है। इसका शिल्प नैपुण्य बिल्कुल मध्य कालीन आर्यावर्त्तीय है। इसके सामने मिश्रके पीरामिड भी हेय हैं। इस मदिरकी सीढ़ियो, दीवारो, और दलानोमे, सैकड़ो शिला लेख संस्कृत भाषाके खुदे हैं। मंदिरका मध्य भाग मूर्ति रहित हैं। इससे फ्रासिसी विद्वान अनुमान करते हैं कि इस मंदिरमे मूर्ति हीन ईश्वरोपासना होती थी। इस मंदिरके देखनेसे निश्चय होता है कि मंदिर अवश्य ब्राह्मण प्रभाव विशिष्ट है, तथा हिन्दूत्वका पूर्ण द्योतक है।

अङ्कोरवट (Angkorvat)।

अङ्कोट नगरसे दो कोस दक्षिण यह मंदिर इसी देशमे है। मंदिरका आयतन आधा कोसका है। इसकी चहार दीवारी १०८×११०० फीटकी पड़ती है। चारो ओर २३० फीट विस्तृत खदकसे यह घीरा है। इस मंदिरमे जानेके लिये एक विशाल पुल बना है। सेतुके आगे गोपुर है उसके बीचसे मदिरके बाहरवाले आङ्गनमे जाया जाता है। *

---

* and particularly prepossessing fact, it is the whole spirit of Brahmanism and of, a Brahmanical race that haunts Curious Shrines,..........,
To understand Brahmanism one must live in the orient, one must see the ruined temples of angkor then the legends become alive, and the idols, with numerous heads, uncountable arms, with unearthly masks, tell you dimly their arcana, the

नैऋत्य कोणसे मंदिरमे घुसनेपर बाईं ओर सुन्दर दृश्य देखनेमे आता है। भीष्म महाराज शरशय्यापर पड़े हैं। उनके दोनो भागोंमें किरीट मुकुट धारी कुरु और पाण्डव गण खड़े हैं। पीछे गज और रथ-पर वीरगण बैठे इन्हें देख रहे हैं। पितामहके पास दुर्योधन हाथीपर म्लान मुख बैठा है। ये सब मूर्तिया पत्थरकी बनी हैं। और इनके रग अभी भी नये से मालूम पड़ रहे हैं।

मंदिरके पश्चिमोत्तरमे रामायणका चित्र है। इसमें बानर और राक्षसोका घोर संग्राम चल रहा है। बीकट राक्षस वीर रथपर बैठकर बाण छोड़ रहे हैं। बीचमे महाराजा रामचन्द्रजी हनुमानके कंधेपर चढ़कर शर छोड़नेपर प्रस्तुत हैं। इनकी दोनो ओर लक्ष्मण तथा विभीषण भी सजधज कर खड़े हैं। सिंह योजित रथपर रावण रामचन्द्रके बाणसे जर्जरित है।

उत्तर पश्चिम भागमें देवासुरका संग्राम है। विविध वेश भूषामे सजे देवगणके चित्र हैं। सामने अनेक प्रकारके भयकर राक्षस जीजान लड़ाकर लड़ रहे हैं। इनमे सूर्य्य और चन्द्रकी कीरणमयी प्रतिमा अतिशय मनोहर है।

---

creed of the Hindus is based on the simple and clear belief that "there is but one Being, without a Second," this one being taking the form of a Giant universal spirit who is all and does all, the Great Brahman,

—Angkor, by P. J. de Beerski p. 68,

उत्तर पूर्व भागमे ब्रह्मा विष्णु और महेशकी प्रतिमाये हैं। ऋषिगण इनकी पूजा कर रहे हैं।

इस प्रकार और भी अनेक स्थलोमे पौराणिक दृश्य बने हुए हैं। इनमेसे कुछ असमाप्त दशामे हैं। समुद्र मंथन, आकाशमे अप्सराओके नृत्य, यमालयका दृश्य तथा कम्बोजके राज परिवार आदिके दृश्य सबन्धी आर्य भास्कर्यके शिल्प नैपुण्य वास्तवमें चित्ताकर्षक और अपूर्व हैं।

अङ्कोरवटसे दक्षिण पूर्व पाच कोसकी दूरीपर और भी तीन तीर्थ स्थान हैं। इनके नाम बकङ्ग, बकू, तथा लोलि हैं।

बकङ्ग मंदिरमे एक शिला लेख है, जिससे पता चलता है कि इसे इन्द्र वर्माने हरगौरी पूजाके लिये बनवाया था। यह मदिर ३२ हाथ ऊचा त्रिभुजाकार है। प्रत्येक सिह द्वारपर गज मूर्ति बनी है। मंदिरकी चारो ओर ईंटके बने छोटे छोटे आठ मदिर हैं। आठो मदिरोपर सस्कृत भाषा मे खुदे इन्द्र वर्माके नाम शिला लेखपर लिखे हैं!

बकू नामक स्थानके पास ही पास छः शिव मंदिर बने हैं। इन प्रत्येक मदिरोंपर सस्कृतमे शिला लेख खुदे हैं। यहा कोई कोई खम भाषाका भी शिला लेख हैं। इसे परमेश्वर और इन्द्रेश्वर पर समर्पण किया गया है। यहापर ३ शक्ति मन्दिर है। मंदिरकी कारीगरी प्रशस-नीय है।

बकूसे पाव कोस उत्तर चलनेपर लोली नामक जगह है। यहापर ८१५ शाकामें कम्बोजराज यशो वर्माने शिव तथा भवानीके मदिरको बनवाया था। इस मदिरकी दशा इस समय अच्छी नही है, इसके भग्नस्तूप अवश्य आज भी अपनी प्राचीन विस्तृतिको बताते हैं।

बेवोनका ब्रह्म मंदिरः—

वेवोन नगरसे आध कोसपर पतनता फ्रम नामक एक प्रथम श्रेणीका उच्च मदिर है। इसका संस्कृत नाम ब्रह्म पतन है। यहापर ४० फीटका चारो ओरसे विस्तृत एक ब्रह्म मदिर है। इसमे चतुरानन ब्रह्माजीकी मूर्ति प्रतिष्ठित है। अनेक शिल्पियोके मतमे अङ्कोर मदिरसे इसी मदिर का शिल्प नैपुण्य ऊंचा है।

आज यह मदिर वास्तवमे अत्यधिक उजाड है। इसके सम्पूर्ण अगोपर रोमावलीकी तरह विटप और झाड़ियोने अपनी सघन धाक जमा रक्खी है। इसका वक्षस्थल नृसिंहसे हिरण्यकश्यपुके सदृश चीरा गया रूधिराक्त जैसा लाल हैं।

पौराणि धर्मका आरंभ।

५४८ शाकामें भव वर्माने यहा पौराणिक धर्मका विस्तार किया। इसने सर्व प्रथम एक शिवालय बनवाया। इसमे शिवकी पूजाके लिये एक सुन्दर सस्कृत भाषाके विद्वान् ब्राह्मणको पुजारी रक्खा। पुजारीजी शिव-पूजा और आरतीके बाद प्रतिदिन मदिरमे रामायण, अष्टादश पुराण, महाभारत, तथा हरिवशादि ग्रन्थोमेसे किसी एक ग्रथकी कथा भक्त मडलियोको श्रवण कराते थे। स्वय राजा भव वर्मा भी इस कथा-कालमे कथा सुनने मदिर जाया करते थे। राजा भव वर्मा ब्राह्मणोके पूर्ण भक्त और धार्मिक प्रकृतिके पूर्ण आस्तिक थे।

८३३ शाकामे ईशान वर्माने अपनी राजधानीका नाम ईशानपूर

रक्खा। उस समय कई नगरोके नाम बदले गये, जिसमे पाण्डुरङ्ग, विजय, और अमरावतीके नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

भाषा-तत्व।

यहाके प्रायः सभी शिलालेख संस्कृत भाषाके हैं। यहापर पाणिनि और चन्द्रिका व्याकरणका अध्ययन विशेष रूपसे होता था। शिलालेखो पर अब्द प्रायः भारतीय राजाओके ही अब्द है। शक सवत्का व्यवहार विशेष देखनेमे आता है। तिथि प्रायः चन्द्र मासके ही व्यवहारमे आते थे। यहाकी बोल-चालमे अभी भी प्रायः सोलह आनेमे बारह आने संस्कृतसे ही उद्भव शब्द बोले जाते है।

राजा नरेन्द्र वर्मा सस्कृतके एक उच्च कोटिके सम्माननीय विद्वान् थे। गणित व्याकरण और धर्म शास्त्रोमे इनकी विशेष प्रतिपत्ति थी। व्याकरणके प्रसिद्ध ग्रन्थ महा भाष्य, मनुसहिता, दर्शन, और हरिवंश पुराण का इधर बहुत अधिक पठन-पाठन था। भव वर्मा, ईशान वर्मा और नरेन्द्र वर्मा संस्कृतके प्रकाण्ड विद्वान् थे। यहापर भारतीय प० दिवाकर, प० योगेश्वर तथा प० वाम शिवजी व्याकर और अथर्व वेदके विशेष पारदर्शी राज पंडित थे।

यहाके निवासियोके गृह्य सूत्रके अनुसार १६ हो सस्कार होते थे। इनमे यह विश्वास था कि मरनेके बाद जीव शिव लोक जाता है।

चम्पा (Champa)।

इस × हिन्दू उपनिवेशकी नीव ईसवी सम्वत्की द्वितीय शताब्दीमे पड़ी। इस समय इस देशको अनाम कहा जाता है। यह भी अपने समयमे एक अच्छा प्रतिष्ठित राज्य था। यहाके अधिवासी चमू नामसे ख्यात हैं। इसके तीन प्रान्तोमे 'इन्द्रपुर' और 'सिंहपुर' नगर विशेष प्रसिद्ध थे। दक्षिणमे पाण्डुरंग प्रान्त था। इस प्रान्तका वीरपुर नगर विशेष प्रख्यात था। यहा विजयनगर और श्रीविनय नामक दो पोताश्रय (बन्दरगाह) थे। चम्पामे जहाजका बड़ा कारखाना था। यहासे सुदृढ़ जहाज बन-बनकर अन्य देशोमे जाते थे। भारतवर्षमे भी यहाका बना जहाज आता था।

बसोवास।

यहाका चम्पा नाम एक विशेष महत्व रखता है। भारतवर्षके अंग-देश (भागलपुर) की राजधानी चम्पा थी।* इससे बहुतसे विद्वान् यह निष्कर्ष निकालते हैं कि इसी चम्पाके किसी महापुरुषका यह बसाया हुआ हिन्दू उपनिपेश चम्पा है, क्योंकि इसे भी कोई कोई अगचम्पा तक कहते हैं।

× Journal Asiatiqe, Paris 1882-83-84, अङ्ग द्वीप निबोध-त्वं नाना सङ्घ समाकुलन्। नाना म्लेच्छजनाकीर्णं तद्दीपं बहु विस्तरम्। ब्रह्मा पु० ५ ४ अ०।

* चम्पा—हरिवंश पुराणम् (१६।६६।१) विष्णु पुराणम् (४, ४३)। महाभारत (१२,१३४) चम्पां चम्पक मालिनीम् महा० भा० १३-२३-५६। लोम पादस्य नगरी चम्पां चम्पक मालिनीम् रामायण १,१७,३५

ईसाकी ७ वीं, शताब्दीमे इसका नाम भारतीय चम्पासे भिन्न बोध होनेके लिये महाचम्पा पड़ा। ह्-येन-चाङ्गने इसको महाचम्पा ही लिखा है। यहापर पहळे पहल चम जातिके लोग आकर बसे।

अनाम देशकी राजधानी भी इसी चम्पामे थी। मालूम होता हैं अङ्गचम्पाका ही अपभ्रंश (अङ्गमसे अन्नम और इससे फिर) अनाम हुआ है।

पौराणिक मत-विकाशः—

यहाके महाराजा भद्रवर्माने मिसनमे एक मन्दिर बनवाया था। इस मदिरका नाम भी महाराजाके ही नामपर 'भद्रेश्वर मदिर' पडा था। इसके एक पुत्रने भारतमे आकर धार्मिक महत्वसे गङ्गाकी यात्रा की थी। गङ्गाकी यात्रा करनेके बाद इस राजकुमारको ससम्मान पूर्वक वहावाले गङ्गराज कहकर स्मरण करते थे। यहाका धार्मिक आचार-विचार तथा भोजनादिकी प्रणालिया कम्बोडियाके थे। यहापर भी उन्ही सब देव-देवियोकी पूजा तथा उपासना होती थी, जिनकी अर्चना कम्बोडिया वाले करते थे। हर पार्वतीके भक्त यहापर विशेषकर देखे जाते हैं। समय-समयपर हवन और यज्ञ भी सदा ही हुआ करते थे।

यहाके एक शिला-लेखमे लिखा है कि यहाके राजा 'विक्रान्त वर्मा' अश्वमेध-यज्ञसे बढ़कर दूसरा कोई भी अन्य पुण्यकर्म नहीं मानते थे। साथ ही उक्त राजा "ब्राह्मण-हत्या" से बढ़कर अन्य कोई भी महापाप नहीं समझते थे। बड़े पुरोहितको यहापर "श्रीपर" पुरोहित कहा जाता था।

यहाकी उपासनाके ढङ्ग बौद्ध और जैनोकी तरह है।

शिला-लेखकी एकाध बातें

ईसवी सम्वत् ८११ के एक शिला-लेखपर नारायण और शङ्करकी मूर्तिया खुदी हुई हैं। नारायणका आकार बिलकुल श्रीकृष्णचन्द्रका है। इनके हाथपर गोवर्धन पर्वत उठा हुआ है।

११५७ ई० के लिखे एक शिला-लेखमें श्रीराम और कृष्णके वर्णन हैं। यह लेख बहुत ही रोचक और आदरणीय शब्दोंमे लिखा गया है। इसके पढ़नेसे सहज हीमें समझ पड़ता है कि वास्तवमे चम्पावाले भारतके किसी भी वैष्णवसे कम राम और कृष्णकी अगाध भक्ति नही करते थे!

यहापर "जय हरि लिगेश्वर", "श्री जय हरि बर्म लिंगेश्वर" और "इन्द्र-बर्म-शिव-लिगेश्वर" प्रभृति राजाओंके नामोपर शिव-लिङ्ग समूहो-की प्रतिष्ठाएँ हुई थीं। यहासे प्राप्त प्रायः सभी शिला-लेख सस्कृत भाषाके हैं। इससे यहापर सस्कृत भाषाका प्रचार पूर्ण पाया जाता है।

एक आश्चर्य घटना :—

प्रायः देखा जाता है कि शत्रु-पक्षके लोग एक दूसरेकी सभी बातोको जली आखो देखते हैं। यदि कही किसी राजाका विजय किसीपर हो गया, तब तो पराजित पक्षपर सर्वनाश ही आ गिरता है, किन्तु चम्पाके भाग्य-मे यह बात पूर्णतः लागू नही हुई। 'शम्भु' द्वारा जब चम्पा जीती गयी थी, तो उस समय विजीत सेनाके द्वारा चम्पाके प्रसिद्ध बहुमूल्य भगवती-की एक अतिसुन्दर प्रतिमाको अनामियोके हाथ बेच दी गयी। सौभाग्य है कि चम्पावासियोकी यह आन्तरीक श्रद्धासे प्रतिष्ठित भगवती उन भक्त

नोट.—(अनामी भाषामें चम्पाके लोगोंको लुई कहा जाता है।)

प्रवर चम्पा निवासियोके मिट जानेपर भी अभीतक अनामियों द्वारा भक्तिपूर्वक पूजी जा रही है।

यहांका बौद्ध-धर्म—

चीन-यात्री 'ई-चिङ्ग'ने लिखा है कि "ईसाकी सातवी शताब्दीके अन्तमे चम्पा-निवासी बौद्धगण प्रायः आर्य समितिके साथ ही अपना सम्बन्ध रखते थे। इन दोनोमे आपसके प्रेम और विवाहादिके लेन-देन अपूर्व स्नेहमय थे। आगे इन्होंने और भी कहा है कि बौद्ध-सम्प्रदायके आर्य 'सर्वास्ति वादिन' मतमे बहुत ही थोड़े लोग थे।"

चम्पाके बौद्ध और वैदिक धर्मियोंमें परस्परका मेल-जोल सन्तोष-जनक था।

८२६ ई० का एक शिला-लेख दक्षिणी चम्पामें निकला है, इसपर लिखा है कि "बुद्ध-निर्वाण" नामक एक महापुरुषने अपने पिताकी स्मृति-मे दो विहार (बौद्ध-मठ) बनवाये थे। इनमेसे एक विहार तो 'जिन'के नामपर था, और दूसरा 'शकर'के नामपर।

यहाके जहाजोपर काम करनेवाले नाविकगण बौद्ध और वैदिक धर्मी दोनो ही रहते थे, और साथ ही खाते-पीते भी थे। केवल मात्र जब कभी जहाजपर भी अपनी पूजा-अर्जना वे भिन्न-भिन्न ढगसे कर लिया करते थे।

हिन्दू-सभ्यता—

१६ वी, शताब्दीके अन्तमे 'फ्राईर-जबराईल'ने इस देशको देखा था। इस ऐतिहासिक पर्यटकके मतसे उस समय भी वहा हिन्दू-सभ्यता थी।

आज भी इस देशमे कुछ व्यक्ति ऐसे हैं, जो वहाकी देव-देवियोकी पूजा प्राचीन सस्कारवश कर लेते हैं।

यह हिन्दू-सभ्यताका एक उच्च बड़प्पन है कि अन्य धर्म तथा मतके संसर्गमे जानेपर भी हिन्दू-सस्कार सर्वतो भावेन विलुप्त नही होता है।

चम्पा भी इसका एक जीता-जागता उदाहरण है।

चम्पामे ईसाके १ म, शताब्दी पूर्वसे १७ वी, शताब्दीके आरम्भ कालतक हिन्दू-सभ्यताकी ज्योति चमकती रही। इनका सम्बन्ध भारतसे पूर्ण सौहार्द और आदरणीय धार्मिक तथा आचारमय था। उस समय भारतीय भी समृद्धि-सम्पन्न थे। यहाके व्यक्ति उदार और दूरदर्शी थे। इनके हृदयमे विश्वकी कल्याण-कामना सतत जाग्रत थी। ये लोग ससार के कोने-कोनेमें अपनी महान् उज्ज्वल, सुदृढ़, सरल, स्वाभाविक और सुन्दर आर्य-आदेश, वैदिक-सन्देश तथा शास्त्रो और ऋषियोके गहन तत्व ससारमे जा-जाकर फैलाते एव स्थापित करते थे। पीछे इनमे क्रूर-ईर्षा और स्वजन-कलह आया। इनके भाग्य सूर्य-अस्त हुए, आत्म-दौर्बल्यमय सकोच हृदयमे भर आया। इनका विदेशोमे आना-जाना बन्द हुआ। फिर उपरोक्त दुर्बलतासे दुर्बल शासन द्वारा संचालित जन-मतकी उपेक्षा कर सकनेमे साधन-हीन ब्राह्मण समुदाय भी क्रिया-हीन हो गया। बस, फिर तो ससर्ग-हीन उपनिवेशोसे धीरे-धीरे प्रशस्त तथा विशाल आर्य-भाग्याकाश ग्रस्तोदय हो सर्वत्रसे हिन्दू सभ्यताके प्रसारसे हाथ धो बैठा। यही बाते यहा चम्पाके लिये भी हुईं, और चम्पा भी भारतके सहाय्यसे विमुख हो, हिन्दुत्वसे हीन हो गया।

श्याम (Siam)।

भारतके पूर्वांशमे स्थित पूर्व उपद्वीपके अन्तर्भुक्त यह एक विशाल प्रदेश है। इसको विशेषकर श्याम राज्य कहकरही ऐतिहासिकगण स्मरण करते हैं।

वर्त्तमान मानचित्रमे यह अक्षा० ४° से लेकर २२'३०'—एवं देशांतर ९८ से लेकर १०६° ३५" पू० के मध्य फैला हुआ है। इसके उत्तरकी ओर स्वाधीन शान राज्य, पूर्वमे कोचीन चीन और अनाम प्रदेश है। दक्षिणमे कम्बोडिया है।

हिन्दुत्व पूर्ण इतिहासः—

श्यामवासियोंने अपने इस देशके इतिहासको दो भागोमे बांटा है। पहले भागमे पौराणिक आख्यायिकाये हैं, और दूसरेमे वर्तमान युगके इतिवृत्त मूलक-प्रमाण बद्ध घटानावलिया।

पौराणिक आख्यायिकाओके मतमें ईसाके जन्मसे प्रायः ५४३ वर्ष पूर्व इस देशमें भारतवर्षसे दो ब्राह्मण ब्रह्मचारी आये, और यहीं पर वे दोनो सदाके लिये बस गये। इन्होने ही सर्व प्रथम यहापर आर्य सभ्यताके फैलानेका कार्य आरम्भ किया। यह काल भारतके भगवान गौतम बुद्धके प्रचारका था।

दूसरे पौराणिक इतिवृत्तके अनुसार ६५० पवित्राब्द (अर्थात् ४०७ ईसवी) मे यहापर राजा अरूण रथ राज्य कर रहे थे। इस नामसे अवश्य यहा भारतीय सस्कृतिका पता चलता है। राजा अरुणरथके पहले यह देश कम्बोज (कम्बोडिया) राज्यके अधीन था, किन्तु उक्त राजाने श्यामको अपने पराक्रमके बलसे युद्धमें विजयकर कम्बोजवालोसे ले लिया। ५७५ ई० मे यहा एक लायोङ्ग नामक नगर बसाया गया। इसी समयसे यहा बौद्ध धर्मका कुछ आभास मिलता है।

भारतीय वणिक लोग निश्चत इससे पहले ही श्याम देशमे आना जाना आरभ कर चुके थे।

श्याम देशमे बौद्ध धर्म प्रचारका निश्चित् सवत् नहीं रहने पर भी यहा बौद्ध धर्मकी अतिशय दृढ़ता देखी जाती है। यहाके बौद्ध गण भारतकी ही तरह मुक्ति-मार्गके विशेष पोपक थे। यहाके श्रवण भिक्षुकके रूपमे भिक्षा मागकर उदर पोषण कर ससार मात्रके जीवका कल्याण-साधनमें सलग्न रहते थे।

श्यामवासी उसी पुरातन समयसे लेकर आजतक बौद्ध धर्म द्वारा प्रवर्तित "प्रतीत्य समुत्पाद" तथा देहान्तप्राप्तिके उच्चतर सिद्धान्तको धर्मका चरम लक्ष्य अङ्गीकार कर भिक्षु-धर्मको ही संसारका सार मान रहेहैं। योतो

यहावाले बौद्ध लोग भी प्राय: ब्रह्मा और सिंहल वासियोकी नाईं ही बौद्ध धर्मको मानते हैं, फिर भी इनके आनुष्ठानिक क्रियाओमे थोड़ा पंथ भेद भी है।

यहाके एक पुराने राजा फरा मेंकुट लगभग १४०० ई० में यती धर्मके पालक थे। इन्होने अपना अध्ययन अत्यन्त बढ़ाया था, और बौद्ध धर्ममें कुछ सुधार भी किया था।

इनके सुधार किये धर्म-मतको जिन लोगोने सहर्ष स्वीकार किया, वे "धर्मयुत" नामसे कहे जाने लगे, और जिन लोगोने नये सुधारको नही अपनाया वे राजाके प्रेम भाजन होते हुए भी फेरा महानिकाप संप्रदायमे गिने जाने लगे।

धर्मयुत सम्प्रदाय वाले अभी भी बौद्ध धर्म शास्त्रोके नियमको पूर्ण श्रद्धा और विश्वासके साथ मानते चले आ रहे हैं। ये लोग ध्यानयुक्त उपासना तथा आध्यात्मिक चिन्ताओको ही विशेष रूपसे मोक्षका साधन मानते हैं।

पौराणिक धर्म।

यहा शिवलिङ्गकी उपासना विशेपतया होती है। साथ ही पत्थरके छोटे-छोटे टुकड़े और शालिग्रामादि भी बहुत देव देवियोके नामपर पूजे जाते हैं। बौद्ध धर्मी राजाओके बहुत चेष्टा करनेपर भी यहासे उक्त उपासना नही हट सकी। यहापर भारतीय तीर्थोके नामपर बहुत से तीर्थ नगर भी हैं, जहापर यहाकी धर्म पिपासु भक्त मण्डलिया तीर्थके निमित्त जाया करती हैं।

युथिया श्याम राज्यकी प्राचीन राजधानी है, इसका पुराना नाम

अयोध्या था। पीछे यह उच्चारण दोषसे अयुधिया और युथिया हो गया है। यहाके प्रत्येक तीर्थोंमे मठ मदिर तथा सघ राम प्रतिष्ठित हैं।

यहाके सभी मदिरोमे पुजारी और पुजारिन हैं। उन सबोको राजा की ओरसे वेतन मिलता है। मदिरोपर भिक्षुणिया भी बहुतायत रहती हैं। ये लोग दानमें आये हुए अन्नोसे अपना उदर भर लेती हैं। मदिरोकी मरम्मत तथा अन्यान्य पूजादिके खर्च राजकोशसे ही होते हैं।

पूर्व लाव प्रदेशमे नगतिम नामक एक ग्राम देवी हैं। इनकी भी पूजा बड़ी धूमधामसे हुआ करती है। मंदिरोमे विष्णु, गणेश, शिव, आदि बहुत सी देवियोकी प्रतिमाए' पूजी जाती हैं।

समय-समयपर यहा पर्व और उत्सव भी बड़े ही आकर्षक रूपमे मनाये जाते हैं। यहा कार्तिक और वैशाखकी पूर्णिमाके उत्सवानुष्ठान विशेष धूमधामसे होते हैं। कृषि पर्व नामक एक पर्व भी यहा अत्यत्त सजधज कर होता है। इस दिन राज मत्री खेतमे हल जोतते हैं, और राजकन्या उस जोती हुई भूमिमे पीछेसे अन्नोके बीजोको बोती जाती है, इसके पीछे प्रजागण उन बीजोको चुन-चुनकर घर ले जाती है, तथा उसे अपने बोए जानेवाले बीजोमे डाल देती है।

राजा और राजमत्री वर्षमे अवश्य एकाध बार पुराने मंदिरोके दर्शनार्थ यात्रा करते हैं। इससे यहाके मदिरोको बहुत लाभ होता है।

यहापर गृह्य सूत्रके अनुसार संस्कार भी प्रायः सबोमे प्रचलित है। उनमे चूडाकरण सस्कार विशेप महत्वका है। शिखा (चोटी) रखाना यहा प्रधान धर्म समझा जाता है। इसकी रक्षा श्यामवासी प्राण देकर

करते हैं। शिखा छू जानेके डरसे यहा वाले अपने गुरूजनोंके समक्ष कभी भी शिरको पूर्णतया खड़ा नहीं करते।

संतान प्रसव कालमें यदि किसी रमणीका देहान्त हो जाता है, तो उस शवको मंदिरमें जलाया जाता है, और उसके भस्ममें चूना मिलाकर मंदिर पोते जाते हैं।

यहा चन्द्र माससे ही वर्ष गणना होती है। चन्द्र मास ये २६॥ दिनोका मानते हैं। यहाका वर्ष ३५४ दिनोका होता है। बीचके बचे हुए कुछ दिनोको पीछे प्रत्येक सात महीनोमे उसे बढ़ा दिया जाता है, इस प्रकार यहाका मास कभी २६ और कभी ३० दिनोका होता है।

प्राचीन कालमे यहा भी संस्कृत भाषाका पूर्ण प्रचार था।

६७१ श्यामाब्दमे यहा एक शिला लेख मिला है। यह शिला लेख सस्कृत भाषामे है। यहापर पाली भाषाने भी पीछे प्रचार-पाया था सुभाषित् व्रतचिन्तामणि, रामक्यून आदि यहाके नूतन ग्रन्थ हैं, किन्तु इनमे भी बारह आने संस्कृत तथा पाली के शब्द हैं। ग्रन्थके नाम भी संस्कृत शब्दोके मिश्रसे रक्खे गये हैं। रामक्यून ग्रन्थमे रामायण और महाभारतके ही बहुतसे उपाख्यान छाटकर लिखे गये हैं।

१८५५ ई० में यहा एक सोमदत्त राजा थे। इनके समयमे कई एक धार्मिक सुधार हुए हैं। श्यामवासी देवताओको छोड़कर भूत प्रेत डाकिनी, तथा यक्षिणियोको भी पूजते हैं।

इस प्रकार श्याम राज्यके संक्षिप्त इतिवृत्तोको देखकर निश्चय होता है कि श्याम राज्य एक सुन्दर हिन्दू उपनिवेश था। यहा पर अभी भी पौनेकी मात्रामे हिन्दू सस्कृतिकी आभा चमक रही है।

चीन (China) ।

यह देश आज सर्व विदित और वहु विस्तृत है। यहाके राजा भगदत्त महाभारत कालतक वर्णाश्रम धर्मावलंबी थे। यह राजा महाराजा युधिष्ठिरके राजसूय यज्ञमें भारत आया था। महाराज अर्जुन× जब चीन विजयके लिये गये थे, तो इसी भगदत्त राजाने वहुत सरलतापूर्वक उनसे मेलकर लिया था।

भारतीय-सभ्यता का प्रसार।

यहाकी समस्त घटनाका यदि विस्तारपूर्वक उल्लेख किया जाय तो केवल मात्र भारतीय सम्बन्धके ही विपयमे एक वहुत वड़ा ग्रन्थ-रत्न बन

× तत्र राजा महा नासीद्भगदत्तो विशांपते। ते नासीत्छ महद्युद्ध पाँडवस्य महात्मनः। सकिरातैश्च चीनैश्च वृत्तः प्राग्ज्योतिषो भवत्॥ ९॥

महा० स० अ० २६।९

जायगा। १६ वीं, शताब्दी तक चीनमे लगभग ८०० तक भारतीय-ब्राह्मण विद्वान् तथा धर्मोपदेक बौद्ध भिक्षु वहा जाकर बहुत कुछ उल्लेख योग्य कार्य्य कर भारतीय तथा चीनके इतिहासको दृढ़ कर आये हैं।

इनमें दो एक आदर्श महा पुरुषोंका नाम मैं यहां भी ले लेना आवश्यक बोध करता हूँ।

चीनके प्रसिद्ध ऐतिहासिक 'ओकाबुर" के निश्चित मतसे कभी यहा "लोयाग" नामक नगरमें १०००० दस हजार आर्य परिवार निवास करते थे।

ईसवी संवत् से २१७ वर्ष पूर्व भारतसे यहा बौद्ध धर्म गया। ६७ ई० में एक काश्यप मतङ्ग नामक भारतीय बौद्ध विद्वान्ने "द्विचत्वारिंश" नामक बौद्ध ग्रन्थका चीन भाषामें अनुवाद किया।

ईसवी द्वितीय शताब्दीमें "धर्मकाकल" नामक एक ब्राह्मण द्वारा "विनय पिटक" ग्रन्थका अनुवाद वृहद् रूपमें चीनी भाषामें हुआ।

३९८ ई० में बुद्ध भद्र नामक एक भारतीय विद्वान्की प्रतिष्ठा चीन में अत्यधिक देखी जाती है।

४२० ई० के अन्दर संग वर्मा तथा ४२४ ई० में गुण वर्मण (काबुलके महाराजका पौत्र) सिंहल एवं जावा द्वीपको देखते हुए चीन पधारे थे। इन दोनों सज्जनोका यहा सुन्दर ढंगसे स्वागत तथा यहाकी प्रजाके साथ धार्मिक सम्मेलन हुआ था।

४३४ ई० चीनका बड़ा ही संस्मरणीय है। इस समयके भारतीय नारी समाजकी अवस्थाको देखकर यह ईसवी भारतीय नारी समाजके लिए बहुत ही आदर्श विशिष्ट गंभीर, महत्वशील और अनुकरणीय है। इस ईसवी

सम्वतमे भारतवर्षसे अतिशय उच्च चरित्रवती, धर्म मर्यादाशीला, मानव समाजके कल्याण और शांति कामना मेरत भारतीय बौद्ध भिक्षुणी-संघ बौद्ध धर्मके प्रचारार्थ सौभाग्यवान इस चीन देशमें आया था। इस संघ में केवल मात्र महिला रत्न ही धर्मोपदेशिका थीं, और वे सबके सब एक निष्ठ भगवान बौद्धके धर्म तत्वकी सुगंभीर दार्शनिक-ज्ञानवेत्ता थीं।

आर्य सामाजिक आचार।

इस चीनमे अभी भी सूर्यके षाण्मासिक (अयनान्त कालीन) भगवान् मार्त्तण्डके उद्देश्यसे अर्घ्यका दान दिया जाता है। पितृ पुरुषोंके उद्देश्यमे श्राद्धादिकी विधि अभी भी बहुत अंशोंमें भारतीयोंका ही सादृश्य रखता है।

१७ वीं, शताब्दी तक यहा सती प्रथा थी। उनमें भेद केवल मात्र यही था कि यहाकी देविया प्राणाधार पतिदेवके निधनोपरान्त अनाहार या अफीम सेवनकर प्राणोत्सर्ग कर डालती थीं। १७९३ ई० मे चीनके सम्मानास्पद सम्राट "च्यू-एन-चु याङ्ग" ने इस प्रथाको शासन विधान (कानून) द्वारा रोक दिया।

\+ + + +

उपरोक्त चीनके संक्षिप्त इतिहाससे अवश्य यह असाधारण रूपमें निश्चित हो जाता है कि चीन और भारतका केवल मात्र वाणिज्य संबन्ध ही नही था, किन्तु वहाकी संस्कृतिके बनानेमें भी भारतीय वरेण्य विद्वानोंका ही हाथ था। बौद्ध धर्म तो वहा अभी भी है, और रहेगा ही। आज भी सहस्रोंकी संख्यामे बौद्ध धर्मी चीन निवासी धर्म लूटनेकी आकांक्षासे भारत आते ही हैं, किन्तु चीनका धार्मिक राजनैतिक तथा

सामाजिक संस्रव भारतके साथ सुख समृद्धिपूर्ण था। यह एक चिंताका विषय है ?

६७५ से ६७० ईसवी पूर्व यहांपर सर्वप्रथम धातु मुद्रा को भारत-वासियोंने ही चलायी थी।

५८० से ५५० ईसवी पूर्व संवत् में भारतीय वणिको द्वारा इस देश में 'मुद्राशङ्ख' चलाया गया। इस मुद्राशङ्खमे एक ओर चीन तथा दूसरी ओर भारतीय वणिकोके चिन्ह हैं।

४७२ ईसवी पूर्व भारतवासियोके अधिकारवाले चीन देशीय बन्दर-गाहोपर चीन राजाका शासन हो गया था, किन्तु वहाके वाणिज्य-क्षेत्रका पूर्ण नियन्त्रण भार भारतीय बणिक-समाजपर ही था। इस नियन्त्रणके लिए भारतियोके अधिकारमे सेना थी, और नियन्त्रण कार्य वे ससैनिक करते थे। यह क्रम वहा ईसवी पूर्ण २य, शताव्दी तक रहा। पीछे ५३ ईसवी पूर्व कम्बोजके कुन्नि-एन० (कुण्डिन) नामक वणिककी प्रतिद्वन्दिता से यह अधिकार भारतीयोके हाथसे चला गया। इस अधिकारके खोनेमे भारतीयोकी दया परता ही विशेप कारण स्वरूप हुआ है।

भारतीय समाज आज अवश्य प्रसुप्त और अनेक अधिकारहीन है, किन्तु जब था तव भी यह संसारके कल्याणार्थ तथा मित्रत्वके लिए था, यह चीनका इतिहास चीन निवासियोको स्पष्ट पुकार २ कर कह रहा है।

हम आज भी चीनके साथ उसी धारणामे बद्ध हैं। संसारकी दो महान् और विशाल जाति आज पिछड़ी हुई है, विशृङ्खल है, और आत्मा-भाव विहीन है। इतिहास हमे प्राण देनेको प्रस्तुत है। हमे चाहिये हम दोनो फिर एक मन, एक प्राण, और एक विधानसे अपना भाग्य बनावे।

दो महान् जातिके उत्थान अवश्य संसारके लिये मंगलमय होंगे। यह ध्रुव सत्य है।

जिन जिन महापुरुषोंके भारतीय हिन्दू धर्म ग्रन्थोका अनुवाद चीन भाषामें हुआ है, उनके नाम।

ग्रन्थकर्ता।	संख्या
१ मैत्रेय	१०
२ अश्वघोष	७
३ नागार्जुन	२४
४ देव (नागार्जुनके शिष्य)	६
५ वसु वंधु	३६
६ स्थिरमति (नालन्दाके अध्यापक)	३
७ स्थित मति (जयसेनके गुरु)	३
८ देव शर्मा (बुद्ध निर्माण पद प्राप्त, १०० की आयुमें मृत्यु)	१
९ वसु मित्र	७
१० सत भद्र ("बोधि हृदय शीलादन कल्प" ग्रन्थके लेखक)	१
११ शिला दित्य राजा	१
१२ कपिल ऋषि	१
१३ ज्ञान चन्द्र	१

चिनी भाषामे बौद्ध त्रिपिटक ग्रन्थके अनुवादक भारतीय तथा काबुली विद्वान।

१—काश्यप मातग। ये मध्य भारतके रहनेवाले ब्राह्मण श्रमण थे। चीनसे इन्हे ६५ ई० में निमन्त्रण मिला। चीनके तूसाई ईन (Tsai

yin) नगरमे ये ६७ ई० मे पहुँचे। वहासे लोयन (Loyan) नगरके एक मठमें इन्होने एक सूत्रका भाषान्तर किया ही था, कि इनकी वहीं मृत्यु हो गई।

२—कूफालान—ये भारतीय विद्वान हैं। भारतसे तिब्बत होते हुए चीन पहुँचे थे, और इन्हें तिब्बतवाले कूफालान कहते थे, इसीसे ये इसी नामसे प्रसिद्ध हैं। इनका गोत्र काश्यप था। इन्होने ४२ परिच्छेद तक "मिलनका" अनुवाद किया है।

३—लोक रत्न—(श्रमण) ये भारतसे १४७ ई० में जाकर १८६ ई० तक चीनमे ही रहते हुए कई एक ग्रन्थोका अनुवाद करना आरंभ किये थे।

४—शाक्य—(श्रमण) २०७ ई० में ये चम्पा (भागलपुर) से वहा पहुँचे थे।

५—धर्मकाल—(श्रमण) २२२ ई० से २५० ई० तक इन्होने यहा अध्यापन और "विनय पिटक" का सर्व प्रथम अनुवाद किया।

६—काल रुचि—(श्रमण) २८१ ई० मे इन्होने एक सूत्रका अनुवाद किया है।

७—श्रीमित्र (ब्राह्मण) ३०७ से ३१७ ई० तक "नान किङ्ग" में रहे, और ३ ग्रन्थोका अनुवाद किया।

८—स्वधर्म रत्न—(श्रमण) ३८१ से ३९५ ई० के बीच इन्होने अनेक ग्रन्थोका अनुवाद किया।

९—गौतम संघ देव—ये कुभाके (काबुली) श्रमण थे। इनके द्वारा सात ग्रन्थोका अनुवाद हुआ।

१०—बुद्ध भद्र—इस विद्वानने अकेले ७ ग्रन्थोका अनुवाद किया है। इनकी वहीं पर ४२६ ई० मे मृत्यु हुई थी।

११—धर्म प्रिय (श्रमण) ने ३८२ ई० मे एक सूत्रका भाष्य किया।

१२—धर्म प्रिय (श्रमण) ने ३८२ ई० मे एक सूत्रका भाष्य किया।

१३—नंदी—इनके ३ ग्रन्थ अभी भी अनुवादके मिलते हैं।

१४—गीत मित्र—इनका भी अनुवादकमें नाम पाया जाता है।

१५—धर्म बल—(श्रमण) ४१६ ई० में "अमिता युहंत सम्यक्सं बुद्ध" का अनुवाद किया।

१६—कुमार बुद्धि—(श्रमण) ३६६ से ३७१ ई० तक अनुवादका कार्य करते रहे।

१७—धर्म प्रिय—(श्रमण), ४०० ई० के बीच्र इन्होनें "विन या सम्बन्धी मिश्र प्रश्न" ग्रन्थका अनुवाद किया।

१८—कुमार जीव, ४०२ से ४१२ ई० के बीच इन्होंने बहुतसे ग्रन्थो-का अनुवाद किया। ये एक राज कुमार थे। ४०५ ई० में ये तिब्बत भी गये थे, और अनेक सस्कृत ग्रथ भी तिब्बतसे लाये थे। ८०० बौद्ध भिक्षु इनके साथ रहते थे। ये एक महान् बौद्ध विद्वान थे। ४१५ ई० में इनकी मृत्यु हुई।

१९—पुण्यतर (कुभावासी ब्राह्मण श्रमण) ने कुमार जीवके समय एक ग्रंथका अनुवाद किया है।

२०—धर्म यश—(कुभावासी श्रमण) एक ग्रंथके अनुवादक।

२१—धर्म रत्न—४४१ मे ये भारतसे चीन पहुँचे, और एक ग्रंथका अनुवाद किया।

२२—बुद्ध वर्मन (श्रमण) १ ग्रंथके अनुवादक।

२३—बुद्ध जीव (कुभाके श्रमण) ३ ग्रथोके अनुवादक।

२४—कालयश (श्रमण) २ ग्रथोके अनुवादक।

२५—धर्ममित्र(श्रमण) १० ग्रथोके अनुवादक। सभवतः कुभावासी

१६—ईश्वर (श्रमण) ४२६ ई० के एक ग्रथके अनुवादक।

२७—गुण वर्मा (कुभावासी श्रमण) १० ग्रथके अनुवादक।

२८—सघ वर्मा (श्रमण) ने नान किग मे रहकर ५ ग्रथोका अनु-वादक किया।

२६—गुण भद्र (मध्य भारतीय) ७८ ग्रथोके अनुवादक।

३०—धर्म जातयश—१ ग्रथके अनुवादक।

३१—महायान (श्रमण) ये पश्चिम भारतके रहनेवाले थे। इन्होने ५०० जातक और स्थविर पथके विनय नामक दो ग्रथोका अनुवाद किया।

३२—संघ भद्र	}	मध्य भारतीय श्रमण,
३३—धर्ममति	}	एक एक ग्रंथके
३४—गुण वृद्धि	}	अनुवादक।

३५—परमार्थ—उज्जैयिनी से० ५४२ ई० मे चीन जाकर नान किग नगरमे १० ग्रंथोका अनुवाद किया था।

३६—उपशून्य—(मध्य भारतीय राजा)ने चीन जाकर नानकिग नगर मे अकेले ५ ग्रंथोका अनुवाद किया।

३७—किकर (श्रमण) ५ ग्रंथोके अनुवादक।

३८—धर्म रुचि (श्रमण) ३ ग्रंथोके अनुवादक।

३९—रत्नमति (मध्य भारतीय श्रमण) ३ ग्रथोके अनुवादक।

४०—बोध रुचि (उत्तर भारतीय श्रमण) ने ५०८ ई० में ३ ग्रथोका अनुवाद किया।

४१—बुद्धशान्त—(श्रमण) १० ग्रन्थोके अनुवादक।

४२—गौतम प्रज्ञा रुचि (काशीके ब्राह्मण) १८ ग्रन्थोके अनुवादक।

४३—विमोक्ष प्रज्ञा—(श्रमण) ५४१ ई० मे इन्होने ५ ग्रन्थोका अनुवाद समाप्त किया।

४४—धर्म-बोधि—एक ग्रन्थके अनुवादक।

४५—नरेन्द्र यशः—(उत्तर भारतीय श्रमण) ७ ग्रन्थोके अनुवादक।

४६—ज्ञानभद्र—(श्रमण) एक सूत्रके अनुवादक तथा भाष्यकार।

४७—ज्ञान यशः—(मगध देश निवासी भारतीय ब्राह्मण-श्रमण) इन्होने अपने यशोगुप्त तथा ज्ञानगुप्त नामक दो शिष्योके साथ ६ ग्रन्थोका अनुवाद किया है।

४८—गौतम-धर्मज्ञान—(काशी निवासी) १ ग्रन्थके भाष्यकार।

४९—विनीत-रुचि—(उत्तर भारतीय श्रमण) २ ग्रन्थोके अनुवादक।

५०—नरेन्द्र यश—८ ग्रन्थोके अनुवादक।

५१—धर्मगुप्त—५९० से ६१६ ई० तकके बहुग्रन्थोके अनुवादक।

५२—प्रभाकर-मित्र—(क्षत्रिय-श्रवण) ६२७ ई० से इन्होने अनुवाद आरम्भ किया, और ३ ग्रन्थोका अनुवाद किया।

५३—भगवद्धर्म—(पश्चिम भारतीय-श्रवण) १ ग्रन्थके अनुवादक।

५४—अतिगुप्त—(पश्चिम भारतीय-श्रवण) अनुवाद ग्रन्थ १।

५५—पुण्योपाय—(मध्यभारतीय-श्रवण) ये ६५५ ई० मे भारतसे

चीन पहुँचे। इन्होने अपने साथ महायान और हीनयान इन दोनो बौद्ध सम्प्रदायके ग्रन्थोको लाया था। इनकी चिकित्सा-प्रणाली भी अच्छी थी। ६५६ ई० में इन्होने उस समयके चीन-राजाकी चिकित्सा भी की थी। ६६३ ई० में इन्होने चीन-भाषामे त्रिपिटकका अनुवाद करना आरम्भ किया, और पीछे ३ ग्रन्थोका भी अनुवाद कर डाला।

५६—दिवाकर—३ ग्रन्थोके अनुवादक।

५७—बुद्धपाल—(कुभात्रासी श्रवण) ६७६ ई० मे अनुवाद काय आरम्भ, १ ग्रन्थके अनुवादक।

५८—बुद्धत्रात—(कुभावासी श्रमण) १ ग्रन्थके अनुवादक।

५९—रत्न चिंत—(काश्मिरी श्रमण) इनके अनुवादका काल ६९३ से ७०६ ई० तकका है। इस बीचमे इन्होने ७ ग्रथोका अनुवाद किया है।

६०—बोधि रुचि—(मूल नाम धर्म रुचि) ये काश्यप गोत्रीय अग देशीय भारती श्रमण थे। ६९३ से ७१३ ई० तक इन्होने ५३ ग्रंथोका अनुवाद समाप्त किया।

६१—प्रमिति—(मध्य हिन्दुस्तानी श्रमण) १ ग्रन्थके अनुवादक।

६२—वज्र बोधि (दक्षिण भारतीय मलयवासी श्रमण)

७१९ ई० मे इन्होने चीन जाकर ४ ग्रन्थोकी भाषा की।

६३—शुभकर सिंह—शाक्य मुनीके वंशज और नालन्दा निवासी ये ७१६ ई० मे चीन जाकर ४ ग्रन्थोके भाषाकार हुए।

६४—अमोघ वज्र—७१९ ई० मे चीन आये। ये वज्रयान सम्प्रदाय भुक्त बौद्ध थे। ७६५ ई० में इन्हें चीन देशमे त्रिपिटक भदन्तकी पदवी मिली। ७७१ ई० मे इन्होनें अपने भाषान्तर किये ग्रन्थकी चीन राजाको

भेट दी। ७१६ से ७३२ ई० तक यद्यपि ये बज्रबोधि सम्प्रदायके गुरूकी सेवा कर चुके थे, किन्तु कुछ काल पुनः इन्होंने सेवामें मनोयोग दिया, और ७७४ ई० तक ७७ ग्रन्थ और विविध सूत्रोका भाषान्तर करते हुए मृत्युको प्राप्त हुए।

६५—प्रज्ञ—(कुभावासी श्रमण) ४ ग्रन्थोके अनुवादक।

६६—थि-येन-सि-त्साई—(जालधर वासी श्रमण) ६८० ई० मे ये चीन पहुँचे। वहापर इन्होने १८ ग्रन्थोका अनुवाद किया, और अपना नाम भी चीनी का ही रख लिया।

६७—धर्म रत्न—(मगध देशवासी श्रमण) ने १००४ से १०५८ ई० तक १२ ग्रन्थोका अनुवाद किया।

६८ मैत्रेय भद्र (मगध वासी श्रमण) ५ ग्रन्थोके अनुवादक।

चीन देशमें भारतीय ग्रन्थोंके अनुवादक, अध्यापक, और धर्म प्रचारक अन्य देशीय महामहिमोंकी संक्षिप्त मुख्य तालिका।

१ कुफालान (तिब्बती) मिलिदके ४२ परिच्छेद पर्यंत अनुवादक,

२—खान सान हवुई—(कम्बोजी) चीन देशके कार्यका संवत् २४७ से २८० ई० पर्यन्त। २८० ग्रन्थोके अनुवादक और प्रचारक।

३—धर्मदीन—तुखारा या तेहरान के रहने वाले श्रवण थे, और अध्यापन, प्रचार तथा अनुवादकके रूपमे भारतीय बौद्ध धर्मकी सेवाकर गये हैं।

४—शिहकयेन, (चिनी श्रवण) १४ ग्रन्थोके अनुवादक और भूपर्य्यटक।

५—धर्म विक्रम शूर (चिनी श्रवण) ।
६—मद्र श्रवण (श्याम) ।
७—संघ पाल (वर्मा) ।
} बौद्ध धर्मके प्रचारक

८—ह्यून-कान लोयन—(चिनी श्रवण) ७५ ग्रन्थोके अनुवादक, और स्थाविर रूपमे धर्मोपदेशक । ६२६ ई० मे ये हिन्दुस्तान भी आये थे ।

९—देव प्रज्ञा—(कुस्तान या खेटान वासी श्रवण) ६ ग्रथोके अनुवादक तथा प्रचारक ।

१०—शिखानन्द—(खेटानी श्रवण) ६६५ से ६६६ ई० तकमें ६ ग्रन्थोंके अनुवादक ।

११—शिह क्येन—(Shih-k-yen) खेटान वासी श्रवण) ४ ग्रंथोके अनुवादक ।

१२—शह हु, या दानपाल (श्रवण) ११ ग्रथोके भाषान्तरकार ।
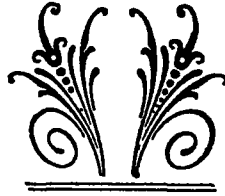
कोचिन चीन (अनाम)।

यह प्रदेश पूर्व द्वीपका एक विभाग है। इसके पूर्व मे समुद्र है। यह वर्तमान मान चित्रके अक्षा० ८°८० से २३° उ० और देशा० १०२° से १०६° पूर्व के वीच वाले चिन्हपर अवस्थित है। इसका उत्तर-दक्षिण दैर्घ्य ४६० कोस और पूर्व-पश्चिम कही १५० और कहीं केवल ५० कोस तककी स्थिति पर सिकुडी एव फैली हुई है।

ईसाकी ७ वीं, शताब्दी तक भारत साम्राज्य इसी समुद्र तक विस्तृत था। ×महाभारतके समय कोचीन चीन कीरात राज्यके अन्तर्गत था। अभी भी इस प्रदेशको "गङ्गा हीन भारत" कहा जाता है। पुराना

× पुण्ड्रा भर्गाः किरातास्च सुदृष्टौ यामुनास्तथा, शका निषादा निषधास्तै-वानर्तंनैऋता ॥ म० भा भी० ६।५१॥

कोचीन चीन (कीरात राज्य कालीन) अक्षा० १° से १८° उ० पर्य्यन्त फैला हुआ था ।

इस देशका हिन्दूत्व इतिहास कम्बोजके ही साथका है । यहां भी चीन और कम्बोजके ही समान बौद्ध धर्म सार्व भौम रूपमे फैला था । उस समयके सम्पूर्ण आचार और व्यवहार यहाके उपरोक्त दोनो देशोके ही समान थे । यहापर भी अनेक भारतीय धर्म प्रचारक और वणिक समुदाय समय समयपर आते रहते थे । कम्बोजका आदर्श यहा वाले विशेष रूपेण अनुकरण करते थे ।

यव द्वीप (जावा Java) ।

यह द्वीप भारत महासागरके मलय द्वीप पुञ्जोमे एक प्रसिद्ध और बड़ा द्वीप है।

यह वर्तमान मान चित्रपर अक्षा० ५° ५२' ३४" से ८° ४६' ४६' उ० और देशा० १०५° १२'४ से १४° ३५' ३८° पूर्व स्थित है।

यह पूर्व और पश्चिममे ६२२ मील एव उत्तर तथा दक्षिणमे १२१ मील तक फैला हुआ है। इस समय यहा हालेण्डके ओलन्दाजोका प्रधान वैदेशिक साम्राज्य है। यहाकी आवादी लगभग सवा ३ करोड की है।

ऐतिहासिक विवेचन :—

जावा नाम जवद्वीपका अपभ्रंश है। हिन्दू गण इस देशसे सदासे परिचित थे। ×

× यलवन्तो यव द्वीप, सप्तराज्योप शोभित।

इस देशके निर्णयमे कुछ एतिहासिकोका मतभेद है। मुसलमान परिव्राजक "इवन वाटूट" ने १० वीं, शताब्दीमे "सुमात्रा"को जावा और वर्तमान जावा को 'मूल जावा' लिखा हैं। जावाकी राज सभामे इस देशको जायि कहा जाता है, और साधारण भाषामें जावा। अरबी भाषा मे इस देशका पुराना नाम जावेज है। ग्रीक ऐतिहासिक "टलेमीने" इस देशको "जाव-दिउ" कहकर लिखा है। चीन पर्यटक "फाहियान" ने "जे-पो-थी" कहा है, किन्तु १३४३ ई० का लिखा एक शिला लेख देखने से इस देशका नाम "जावा" ही पाया जाता है। जो भी हो, किन्तु यह मत सर्व मतसे अधिक है कि इस देशका नाम भारतियो द्वारा "यवद्वीप" कहा गया है, और उसीका अपभ्रंश साधारण लोगोमें जावा नामसे प्रसिद्ध है। हमारे इस मतके पक्षमे चीनके भी पुराने इतिहास ग्रन्थ हैं। चीन निवासी लियङ्ग वंशका इतिहास ५०२ से ५५६ ई० मे लिखा गया है। उसमे लिखा है कि सम्राट् "सीयन चीर" के राज्य समयमें (७३ से ५६ ईसवी पूर्वके भीतर) रोमन तथा भारतनिवासियोने यवद्वीपके रास्तेसे चीनमे दूत भेजा था।

इस ग्रन्थमे एक वात और ध्यान देने योग्य लिखी है कि "लाङ्-इया-सिऊ" देशमे बौद्ध धर्म प्रचलित है, और वहाके लोग संस्कृत भापामे भारतीय ढंगसे वातचीत करते हैं।

सुवर्ण रूपक द्वीपं सुवर्ण कर मण्डितम् ॥
यवद्वीप मतिक्रम्य शिशिरो नाम पर्वतः। रा० कि० कां० ४७ स०।
यवद्वीप मिति प्रोक्तं नाना रत्न करान्वितम्।
तत्रापि द्युति मान्नाम पर्वतो धातु मण्डितः॥	अ० पु०।

चीन निवासी विद्वानोका कहना है कि "लाङ्-इया-सिऊ" शब्द जव द्वीपका ही पर्य्याय है।

१३३२ ई० मे चीन देशके दूसरे मिङ इतिहासकारका कहना है कि जावा वासी १३७६ वर्ष पहले अपने देशका स्थापन काल बताते थे। इससे यह सार अवश्य निकल आता है कि यवद्वीपसे भारतवासी आरम्भ कालसे ही परिचित थे।

भारतवर्षीय सम्बन्ध :—

यद्यपि यह कहना (निश्चित तिथि बताकर) कठिन है कि सर्वप्रथम भारतीय सम्बन्ध इस देशका कब और किस प्रकार हुआ, फिर भी यह अवश्य प्रमाण युक्त है कि जावाका जितना भी प्राचीन तत्व मिला है उससे पूर्व भी इस देशके साथ भारतवर्षका सम्बन्ध रहा है। इस देशका भारतके साथ विशेष सम्बन्ध रहनेसे ही सम्भव है उल्लेख योग्य प्रमाण लिपिबद्ध न हुआ हो।

४१८ ई० मे चीन पर्यटक फाहियान भारतसे लौटते समय यहा उतरे थे। उन्होने उस समयके सम्बन्धमे लिखा है कि "यवद्वीप" (जा-वा-दिउ) मे नास्तिक और ब्राह्मण गण रहते हैं। बौद्धधर्मावलम्बी स्वल्प हैं, अर्थात् उल्लेख योग्य नहीं ही हैं।

जिस नौकापर फाहियान सवार थे, उसका नाविक आर्य था।

हिन्दू उपनिवेश :—

७५ ई० मे कलिङ्ग देशके वीर पुरुषोका एक समूह जहाजपर चढ़कर यव द्वीप आया था, और इसीने इस देशमे भारतीय उपनिवेश भी स्थापित किया था। इन लोगोने जावाकी अच्छी उन्नति की। यहाकी आर्थिक

स्थिति सुधारपर ही इन लोगोका विशेष ध्यान गया। परती पड़ी हुई ज़मीन को इन्होने उपज़ाऊ बनाया, और उसमे किसानो द्वारा खेती कराई।

थोड़े ही दिनोमे यहापर इन लोगोने बडी-बडी अट्टालिकाए बनवाई। इन लोगोके द्वारा भारतके साथ जो वाणिज्य सम्बन्ध स्थापित हुए, वे बहुत दिनोतक चलते रहे।

इस विषयमे मि० एल० फिन्स्टनने लिखा है कि "जावाके इतिहासमे स्पष्ट रूपसे वर्णित है कि कलिङ्ग देशवासी भारतमहासागरके द्वारा यहा आये, और यहाके लोगोको सुसभ्य बनाया। वे लोग जिस दिन यहा आये थे, उसे चिरस्मरणीय दिन बनानेके लिये एक युगका आरम्भ किया गया। वह युग ई० संवत् ७५ से प्रारम्भ होता है।" फाहियान द्वारा लिखे विवरणसे इसके अक्षर अक्षर सत्य सिद्ध होते हैं।

१८२० ई० मे क्रफोर्डने जो जावाका इतिहास लेखक है, उसने भी कलिङ्गवासी हिन्दू वीरोका जावामे आना लिखा है। ×

इस घटनाके ५०० वर्ष वाद पुनः यावा द्वीपमे गुजरात निवासी हिन्दुओके झुण्डका झुण्ड वहा पहुँचने लगा। ५ वीं, शताब्दीमे गुजरातियोके द्वारा इस देशमें हिन्दू राज्यकी स्थापना हुई। *

मि० फर्गूसन साहबके मतसे तथा डा० रामकृष्ण भण्डारकरके मतसे भी उपरोक्त मत मिलते है—ले०।

१६६६ ई० में टामारनियरने भी कलिग लोगोंका जाना लिखा है।

Indian Antiquary, Vol. V. P. 315, Bomby, Gazetture, Vol. I, Pt, 1, P 493, and sir stamford Raffls, Java, Vol. II, P 83.

६०३ ई० मे गुजरात राजकुमार कुसुम चित्रके पुत्र भू विजय सेवल चल यहापर स्थाई निवास बनाकर रहने लगे। ये लोग जिस स्थानपर रहने लगे उसका नाम पहले मेन्दान था, पीछे इसका नाम ब्रह्मवनम् रक्खा गया। यही स्थान सर्वप्रथम यहाके हिन्दू उपनिवेशका मूल स्थान है।

गुजरात और मारवाड़में अभी भी एक कहावत कही जाती है "जो जाय जावा तो कभी नही आवा। आवे तो सातो पीढ़ी बैठके खावा"

इससे सम्भव है कि वहासे आनेवाले प्रचूर धन ले आते थे जिससे सात पीढ़ी तकके खानेका प्रबन्ध पूरा हो जाता था।

गुजरातियोके जावा जाकर पूर्ण लाभवान् होनेकी बातोको सुनकर पीछे दलके दल भारतीय वहा पहुँचने लगे। यह काल ईसाकी ७ वीं, शताब्दीका था।

८५० ई० मे सुलेमान, तथा ६१५ ईसवी मे "मासुदी" नामक यात्री जावा गये थे। ये दोनो यात्री मुसलमान हैं। इन दोनोके लिखे जावा सम्बन्धी वक्तव्य एक-से ही हैं। उन्होने लिखा है "+जावाके आग्नेय गिरिके आसपास रहनेवाले मनुष्योके रंग सफेद हैं। इन सबोके कान छिदे हुए तथा शिर घुटे हुए हैं। ये लोग सबके सब हिन्दू तथा बौद्ध धर्मके उपासक हैं। इनके व्यापार बहुत बड़े बड़े पदार्थोंके होते हैं। ये लोग धनाढ्य हैं।"

१६१० ई० मे फ्रांसके फिनोट (M. L Finot) साहबको, तथा १६१३ ई० मे ओलन्दाजके करण (H. Kern) साहबको

× Reinalabs, Adulfida, occxc,

एक शिला लेखमे श्री विजय और कटाह नामक दो देशोका नाम मिला था। १०१२—१०४२ ई० में इधर दक्षिण देशीय चोलवंशज महाराजा राजेन्द्र चोलके शिला लेखमें भी श्री विजय तथा कटाहपर विजय प्रासका वृत्तान्त लिखा है। इसपर फ्रासके प्रसिद्ध विद्वान् मि० गोडेज (M. G. Goedes) साहबने अत्यन्त परिश्रमकर निश्चय किया है कि जावाके वर्त्तमान केडा बंदरको तथा सुमात्राके पेलम बैंक स्थानोका ही पुराना नाम क्रमशः कटाह और श्री विजय था।

७३२ ई० के लिखे किदोई गावसे प्रात एक शिला लेखमे राजा सन्नके पुत्रका विजय वृत्तान्त मिला है। यह राजा हिन्दू था। उनके लेखमे हिन्दू चिन्ह हैं।

यहाके "दाइङ्ग" नामक स्थानमें ईसाकी ६ वीं, शताब्दीके लिखे शिला लेख और कई हिन्दू मदिर मिले हैं। पम्बा नामके मंदिर ईसाकी १० वीं, शताब्दीके बने हुए हैं। इस मंदिरकी रचना अत्यधिक खर्चीली है। इससे ईसाकी १० वीं, शताब्दीमें जावाके सम्पत्तिकी प्रचूर वृद्धि मालूम होती है।

६०० ई० के लिखे ताम्र पत्र द्वारा यहांपर मातरम् शब्द जन्मभूमि वाचक मिला है। ६१६ ई० मे यहा एक दृढ़ भक्त हिन्दू राजा सि-उ-दोक (शिव दत्त) बड़ी निष्ठाके साथ धर्म सेवा तथा सुशासन कर रहे थे।

ईसाकी १२ वीं, शताब्दीमे जजवाजा नामक एक श्रेष्ठ वीर यहा राज्य करते थे। ये चतुर्भुज विष्णु भगवानके वैष्णव भक्त थे। इनके समयमे पूर्व जावा प्रदेशने कला और साहित्य सम्बन्धमे विशेष विकाश पाया था।

१२२२ ई० मे राजा विष्णु वर्द्धन जान्दि जागोके सुप्रसिद्ध मंदिर

में समाहित हुए हैं। ये बौद्ध थे और बौद्धगण इनकी पूजा करते हैं। इसके बाद यहाके और भी अनेक राजाओंका वर्णन मिलता है, और ये सब प्रायः बौद्ध थे।

धार्मिक स्थिति :—

जावाके लिपितत्व, स्थापत्य, तथा साहित्यसे पूर्ण निश्चय है कि ३०० ई० तक यहा वैदिक (स्मार्त) धर्म पूर्ण प्रचलित था। ४२७ ई० मे गुण वर्माने जावामें (शि-पो नामसे उल्लेखित) बौद्ध धर्मका यहा प्रचार किया।

गुण वर्मा काश्मीर देशके मूल निवासी थे, अतः संभव है कि उन्होने वहा सर्वास्तिवादी बौद्ध धर्म चलाया हो। इसके बाद तो बहुतसे, बौद्ध धर्मी हिन्दू जावामे बौद्ध धर्म प्रचारार्थ जाने आने लगे। ×

ईसाकी ११ वी, शताब्दीमे यहा जैन धर्म भी प्रचलित हुआ था। यहाके एक खजूराहा नामक स्थानमे जैन मदिर थे, और अभीतक कुछ कुछ लोग वहा जैन उपासना करते हैं।

यहाके आर्य वैदिक धर्मके सम्बन्धमे कुछ आभास सर्वप्रथम पूर्ण वर्माके लेखसे पाया जाता है। इस शिला लेखसे यह पता चलता है कि यहापर ईसाकी ५ वी, शताब्दीमे विष्णु (सूर्य) पूजाका ही प्राबल्य था। पीछे पौराणिक धर्मका सचार हुआ, और ८ वी, तथा ९ वी, शताब्दीमे शैव धर्म चला। "पव मानम्"- तथा "दियेङ्ग" नामक दोनो ही स्थानपर ब्रह्मा, विष्णु, गणेश, दुर्गा, नन्दी आदि बहुतसे हिन्दू देवी देवताओंकी मूर्तिया प्रतिष्ठित हुई।

× Nanjio catalogue, Nos, 137, 138.

पवमानममे महा गुरूकी एक प्रतिमा शिव रूपमे पूजी जा रही है।

ईसाकी १० वीं, शताब्दी तक यहा एक मात्र शैव धर्म था। पीछे ११५० ई० मे पन्तारनका वैष्णव मदिर बना। बस, यहींसे यहापर वैष्णव धर्मका प्रारभ समझना चाहिये। यहा के मंदिरोमे इधर उधर बहुतसे पौराणिक उपाख्यानोके आधारपर चित्र बनाये गये हैं।

१३ वी, शताब्दीमे बौद्ध धर्म यहा खूब बढ़ने लगा, किन्तु ब्राह्मण धर्मके साथ इनका उस समयतक प्रेम भाव ही था।

यहापर इन दो धर्मियोके मेलका विशेष कारण यह था कि बौद्ध और शिवको साधारण जन-समूह एकही तत्व समझते थे। अवश्य इस मतके प्रचार करनेवाले भारतीय उच्च श्रेणीके दूर दर्शी थे। धार्मिकगृह कलह वे विदेशोमे नही ले जाते थे। साथ ही उनके लगन, उनकी राजनीतिया तथा आदर्श आज भी ससारको चकित करनेवाली तथा भारतके मुखको उज्वल करने वाले थे।

१४ वी, शताब्दीमे यहा मुसलमान धर्म आया, और धीरे-धीरे बढ़-कर आज समस्त जावा मुसलमान मय है, फिर भी वहाके निवासियोपर प्राचीन हिन्दुत्व सस्कार इतना प्रबल है कि, वे सब मुसलमान होते हुए भी, आजतक उत्सवोके समय बरबदर तथा पवमानम्मे इकट्ठे होकर हिन्दू देवोपर पुष्पाञ्जलि चढ़ाते हैं। हिन्दुओके पुराण ग्रन्थोमे वर्णित राक्षस, भूत पिशाच, आदिसे अभी भी ये डरते हैं। कट्टरसे कट्टरमुसलमान भी सम्पत्तिवान होनेकी लोलुप आशासे लक्ष्मीका पूजन हिन्दुओ जैसा ही करता है। उसके हृदयमे अभी भी मक्का और मदीनाकी अपेक्षा भारत-वर्षके प्रति विशेष श्रद्धा और आदर है।

वहाकी वसु धरा अभी भी प्राचीन आर्य सभ्यताकी झलमलाहटमय-झलक हिन्दू-मन्दिरोंमे दे रही हैं। शिला- लेख, भाषा, आदर्श, एवं उत्सवादिकोंमें हिन्दुओंकी प्राचीन रीतिया तथा भास्कर कलाके निर्माण पूर्णमात्रामे उपनिवेशकी धाकको बता रही है।

यहांके भास्करपूर्णहिन्दू आदर्शके होते थे। मंदिर और चित्रोको देखकर यह सुगमतासे समझ पड़ता है कि कलाका संगठन भारत-वासियो द्वारा ही हुआ है, हा यहापर अनेक चित्र और मूर्तिया ऐसी भी हैं, जो समय-समयपर चीन देशसे आई हैं।

जावाके प्राचीन कीर्ति-रत्नोमे "जान्दिकाला सन" का बौद्ध मंदिर प्राचीन और अपने ढंगका निराला ही है। यह मंदिर ७७६ ई० को "पवमानम्" में बना था। यह मदिर तारादेवीके नामपर समर्पित है। इसके पासमें ही महायान पथी बौद्धोके रहनेका एक सुन्दर दो मंजिला "सङ्घराम" और जान्दिशेवूका मंदिर है। इसके भीतर २४० पूजाके भिन्न भिन्न मंदिर हैं, और इन प्रत्येक छोटे-छोटे मंदिोरमें एक-एक भगवान बुद्धकी समाधिस्थ प्रतिमायें थी। इस प्रकार और भी बहुतसी वर्णन योग्य सामग्रिया इसमें हैं। जिनके पूर्ण विवरण यहापर आजाने अस-म्भव हैं।

८५० ई० में यहाके बरबहर नामक स्थानमे एक विशाल साश्चर्य विशिष्ट मदिर बना है। इस मदिरके बनानेवाले अज्ञात हैं, फिर भी इसे देखकर इतना निश्चय होता है कि वे महानुभाव अवश्य अतिशय धनाढ्य और परमोच्च कलाप्रिय थे।

बौद्ध उपासक गण इस मंदिरकी प्रदक्षिणा करते थे। प्रदक्षिणा

करते समय उन्हें यहा प्राय: २००० हजार बौद्ध भगवानके बाल्यकालसे निर्वाण समयतककी मूर्तिया देखनेको मिलती थीं।

इस मदिरकी भित्तिशिला समुद्र पृष्ठसे ८०० फुटकी ऊंचाईपर प्रतिष्ठित है। यह मंदिर सम चतुरस्त्राकार है, और सात भागोंमें बटा हुआ है। १८८३ ई० मे इस मदिरमे आग लगी थी, अतएव इसके कुछ भाग टूट गये हैं, भूतलके नींवकी लम्बाई और चौड़ाई ६२०, फूट है। इसके पहले खडके प्रत्येक भागोका एक-एक पार्श्व ४९७ फूट लम्बा है। इसी प्रकार दूसरे खडका ३६५ फूट है। सातवे खडपर एक विराट गुम्बज ५२ फूटका है। इस प्रकार इस मदिरके भी वर्णन करने योग्य अनेक ही विषय हैं, और इससे भिन्न और भी सैकड़ो मदिर तथा स्तूपादि हैं। वर्त्तमानमे ये सब मदिर दिनो दिन गिर रहे हैं। केवल ये भग्न-पंजर हमे अपने पुराने आप्त पुरुषाओंकी कीर्ति स्तम्भ दिखानेको ही अभीतक ठहर रहे हैं।

पौराणिक मंदिर।

उक्त बरबहरसे ३ मील उत्तर-पूर्व दिशामे एला नदीके किनारेपर एक विशाल मंदिर है। यह मदिर राखकी ढेरमे छिपा था। १८३४ ई० मे महाशय हाई मैन साहबने इसका उद्धार किया। इस मदिरकी चारु-कला बड़ी ही प्रशंसनीय और मन मुग्धकर है। इसमे ब्रह्मा, विष्णु, और शिवकी मूर्तिया हैं।

विष्णुके पास प्रस्फुटित कमलपर अष्टभुजी लक्ष्मी महारानी विराज रही हैं। लक्ष्मीकी चारो ओर बहुत-सी देवबालाये इन्हें पखे झेल रही हैं। इसी प्रकार और भी कई एक मूर्तिया, तथा चतुर्भुजा और द्विभुज

धारिणी देविया विराजमान है। इस स्थानका पुराना नाम मान्धाता है, आज इसे यहावाले मन्दात कहते हैं। कृष्ण भगवान्‌के कदम्ब वृक्ष तल वंशी वाद्यकी मूर्त्ति बहुत ही नयनानन्दकर है।

ब्रह्म वनम्:—

अवश्य आज यव द्वीपमे हिन्दू-जन गणका वास नहीं है, फिर भी आज जितनी भी दशामे भग्नहिन्दू प्राचीन कीर्तिया है, उन्हे देखकर एक बार उस देशका हिन्दू भाव नस नसमे जाग्रत हो जाता है।

इन्ही भाव प्रधान स्थानोंमें यह एक ब्रह्मवनम् भी है। पुण्य मय तपोवनके चित्र यद्यपि आज कल्पनाके हो गये हैं, किन्तु यह वास्तवमे अभी भी शरीरमे ब्रह्म भावको प्रचूर मात्रामे दे ही देता है।

यहा शतशत निदिध्यासनासक्त दीर्घ नखश्मश्रु-शोभित निमिलित नयन तपस्वीगणोंके खोदित चित्र हमे उस कालके कठिनतर श्रमसाध्य जीवनमय ब्राह्मणोको दिखा ही देता है।

कितने महान् थे वे ?

× × × ×

इस ब्रह्म वनमके सम्बन्धमे निश्चय हुआ है कि यह स्थान ईसाकी पाचवी शताब्दीमे बना। यह स्थान १० वर्गमील जगहमे विस्तृत है। यहापर इतनी मूर्तिया है कि किसी भी व्यक्तिके लिये उसका गिनना कठिन है। इस स्थानको आज अंग्रेज लोग भारतका काशी कहते हैं ×

× Which has been styled the Benares of Central Java.

See—Transactinos of the Batvain Socity Vol. III,

उपरोक्त सभी स्थानोको छोड़कर अभी और भी वहुतसे अपूर्व-अपूर्व मन्दिर और मूर्तिया वहा हैं। मै अव यहा वहुत विस्तारके कारण उन सवोके विपयका उल्लेख नही कर रहा हूॅ।

भाषा और साहित्य।

ई० स० १३ वीं, शताब्दीतक हिन्दू-सभ्यता यहा रही। उस समय यहा वहुतसे ग्रथ भी सस्कृत भापामे लिखे गये हैं। उनमेसे अनेक ग्रथोके नाममात्र केवल और ग्रन्थोमे पढनेको मिलते हैं। जो ग्रन्थ आज प्राप्त हैं, उनमेसे एक "तन्तु पदे लारन" नामक सृष्टि-तत्व-विषयक गम्भीर और सुन्दर मीमासनीय ग्रथ है। अर्जुन-विवाह नामक काव्य सुन्दर रसात्मक है। वहाकी सस्कृत भापाके अक्षरोमे 'फ' और 'भ' वर्णका अस्तित्व नहो है। कवि-रामायण, माणिकमय, सूर्य-केतु, 'मानव-शास्त्र आदि ग्रन्थ वहाके अभी भी मिलते हैं।

यावाके प्राचीन ऐतिहासिक ग्रन्थका नाम "उशनयव" है। इस ग्रन्थ द्वारा अनेक हिन्दू राजाओके वर्णन पढनेमे आते हैं। इस ग्रन्थसे यह भी प्रमाण मिलता है कि यवद्वीपमे ब्राह्मणादि चारो वर्ण कर्मानुसार पूर्ण प्रतिष्ठित थे। साथ ही उस समयका समाज एकदम भारतीय ढगका ही था।

बलि द्वीप (BALI DWIPA)

यह छोटा-सा द्वीप यवद्वीपसे पूर्वकी ओर डेढ मीलकी दूरीपर बसा हुआ है। वर्त्तमान मान-चित्रके अक्षा० ८' से ९' दक्षिण तथा देशान्तर ११४° २६' से १५' ४०' पूर्वके बीच है। यवद्वीप और बालिद्वीपको एक नाली बीचमे अपनी धारासे अलग किये हुई है। अग्रेज विद्वान इसे जावाका ही एक अग मान कर "छोटा जावा (Little Java)" कहकर पुकारते हैं।

यह द्वीप पूर्व और पश्चिम दिशामे ७० मीलतक लम्बा एव ३५ मील चौड़ा पर्यन्त १६८५ भौगोलिक वर्गमीलके भू परिमानमे है।

यहापर ४ हजारसे १० हजार फुटतकके ऊँचे-ऊँचे बहुत ही छोटे बड़े पर्वत समूह हैं। यहाकी एक "गुनङ्ग अनङ्ग" नामकी पर्वत-चोटी १२३७६ फुटकी समुद्र तलसे ऊँची है।

वर्त्तमानमे यहापर चार वर्णके लोग रहते हैं। उन्हे यहाकी भाषामे ब्राह्मण, सत्रिय (क्षत्रिय), वेश्य (वैश्य) और शूद्र कहा जाता है।— इनमे उपाधि भी क्रमशः नामके अन्तमे इदा, देव, गुष्ठि तथा कइलकी लगती हैं। यहापर केवल मात्र चार वर्णोंको छोड़कर अन्य और कोई जातिया नहीं हैं।

ब्राह्मण।

यहाके ब्राह्मण अपनेको भगवान् द्विजेन्द्र वहुदण्ड पदण्डका वंशधर कहते हैं। उक्त ब्राह्मणोका पूर्व निवास यव द्वीपके केदरी नामक स्थान मे था। यहासे ये मजपहित चले गये। पीछे मजपहितसे बलि द्वीप आये। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि भगवान् द्विजेन्द्र भारतसे अपने कई एक सगियोके साथ यहा आये थे। द्विजेन्द्रको वहुत सी स्त्रिया थी। उनमेसे पाच स्त्रियोके गर्भसे उत्पन्न सतान पाच भागोमे बट गये थे। इन्ही पाचो संतानके नामपर पाच ब्राह्मणोकी मुख्य शाखा यहा है। उन शाखाओके क्रमशः ये नाम हैः—(१) कमेमु, (२) गेलगेल, (३) नुआवा, (४) मास, और (५) कायशून्य। इन पाच शाखाओका नामकरण पाच ग्रामपर है+ और इनमे कमेमु द्विजेन्द्रकी ब्राह्मणी स्त्रीसे उत्पन्न हैं, गेलगेल क्षत्रियाके गर्भसे, द्विजेन्द्रका औरस क्षत्रियाबाल विधवासे उत्पन्न नुआवा है। वैश्यसे मास शाखाकी

बहुतसे विद्वानगण यहांपर पहले राक्षसोंका निवास बताते है और "मजपहित"से कुछ हिन्दुओंका यहां आकर उपनिवेश बसाना स्वीकार करते हैं। यहांपर अभी भी वर्णाश्रमधर्मी हिन्दू शुद्ध रूपमें ही हैं, अतः मै यहांके प्राचीन मतवादोंको नहीं लिख रहा हूँ।—लेखक

उत्पत्ति तथा शूद्राके गर्भसे काय शून्य शाखावाले ब्राह्मणोकी उत्पत्ति है। इस तरह भिन्न-भिन्न पाच प्रकारकी उत्पत्ति होनेपर भी सच्चरित्र, साधु-प्रकृति, धर्मशील, निर्भिक, स्पष्टवादी, विद्वान् और शास्त्रज्ञ ब्राह्मण ही सर्वत्र श्रेष्ठ पदपर पूजित होते हैं।

इस द्वीपमे सबसे अधिक ब्राह्मण ही वर्ण है। सभी ब्राह्मण राजा और क्षत्रियोके अधीन हैं। राजके सभी प्रकारके कार्योंको करते हुए भी वे सत्कार पूर्वक पूजित होते हैं। ब्राह्मण अभी भी राज कन्यासे विवाह करते हैं। राजा लोग ब्राह्मण कन्यासे कभी भी सम्बन्ध नहीं कर सकते। यह यहा राज, धर्म और समाज तीनो नीतिसे बाधित है। यहा विशेष सम्पत्ति वान् भी ब्राह्मण ही हैं। शास्त्रज्ञ विचक्षण विद्वानोको यहा गुरु द्वारा "पडित दव्य" और "पदण्ड" की उपाधिया मिलती हैं। उपाधिके लिये ब्राह्मणोको बहुत अधिक शारीरिक तपस्या, कष्ट, एवं गुरु सेवा करनी होती है। उपाधि धारी "पदण्ड" ही राज्य पुरोहित और राज्यमे दण्ड देनेके अधिकारी होते हैं। इन्हीकी आज्ञासे नीच कर्म करनेवाले पापी दण्ड पाते हैं। राज पुरोहित ही राज गुरु भी होते हैं, और समस्त राज-कार्यके संचालनमे इनका मत राजाको ग्राह्य होता है।

ब्राह्मण समस्त वर्णोकी स्त्रीके साथ विवाह कर लेते हैं, किन्तु यज्ञ और देवार्चनमे केवल ब्राह्मण माता पितासे उत्पन्न ब्राह्मणी स्त्रिया ही अधिकार पाती हैं। सन्तान किन्तु सबोका ब्राह्मण श्रेणी भुक्त हो जाता है। सभी स्त्रिया ब्राह्मणके साथ विवाह होनेपर गौरव बोध करती हैं। पुरुष ब्राह्मणोकी ही तरह ब्राह्मणी कन्याओको भी सुशीला, तथा पूर्ण विदुषी होनेपर "पदण्डा" और "पडिताकी" उपाधि मिलती है।

गौण रूपमे ब्राह्मणोंमें भी शैव-ब्राह्मण, बौद्ध-ब्राह्मण, और भुजङ्ग-ब्राह्मण, ये तीन भेद हैं। इनमे नामके अनरूप ही तीनो भिन्न-भिन्न देवोके विशेष उपासक हैं, और संख्यामे शैव ब्राह्मण अधिक हैं।

यहाके "पदण्ड" ब्राह्मणोका घर और भारतीय किसी उच्च कर्मनिष्ठ ब्राह्मणोंका घर एक सा ही है। इनके घर भी भारतीय ब्राह्मणोकी ही तरह पूजा, पाठ, पंचयज्ञ, स्वस्त्ययन और शान्ति पाठ होते रहते हैं। ये महा मान्य पदण्ड ब्राह्मण सदा राष्ट्र और आर्य संस्कृतिके लिये प्राणोत्सर्ग किये हुए हैं। इनमे धार्मिक प्रेम, राष्ट्र-सेवा, समाजकी कल्याण कामना, तथा ईश्वरपर विश्वास अटूट और आदरणीय होता है।

यह सब होते हुए भी, भारतियोके आन जानके अभावसे अब इनमे भारतवर्षका स्नेह कम हो रहा है।

ब्राह्मणोंका अत्यन्त सभ्यता-प्रेम।

चीन देशके प्राचीन इतिहास ग्रन्थ बताते हैं कि बलि द्वीपने ईसाकी ६ ठी, शताब्दीमें हिन्दू-धर्मके विश्व शान्तिमय सभ्यताको प्राप्त करनेका सौभाग्य प्राप्त किया था। तबसे इस द्वीपने हिन्दू-धर्मका एक तत्व प्राप्त किया, और वह तत्व था मोक्ष पदका साधन। यहा हिन्दू संस्कृति आकर केवल पनपी ही नही, अपितु इसने यहा अपना एक अभेद्य दुर्ग भी स्थापित किया। ईसाकी १५ वीं, शताब्दीमे जिस समय जावा मुसलमान धर्मके स्वाभाविक धर्म प्रचार नीतिकी रुद्र नीतिपर दीक्षित हो रहा था। मुसलमानोसे जावा स्वशासन भी खो चुका था, तथा उसकी कठोर नीतिसे यहां की प्राचीन हिन्दू संस्कृति मिटाई भी जा रही थी। साथही जावासे बाहर ब्रह्मा, चीन और कम्बोडिया भी मुसलमानोसे भर रहा था। हिन्दू संस्कृतिके मूल

स्तम्भ भारत भी मुसलमानोसे आक्रान्त था, और यहाका भी अनेक युगासे संपोषित आर्य-धर्म म्लान हो रहा था। उस भयावह कालमे भी वलिके बलवान् वीरगण संस्कृति-रक्षाकेलिये अपना सर्वस्व वलि देनेको प्रस्तुत थे, किंतु आर्य संस्कृतिका मिटना सह्य नहीं कर सकते थे। हुआ भी यही, जावा आदि उपरोक्त सभी देशोमे मुसलमान जम गये, किंतु वलि द्वीप आज भी पूर्ण हिन्दू ही है, और एक दिनके लिये भी आजतक मुसलमानी साम्राज्य वहा नहीं बन सका। इस आदर्श कार्यका पूर्णतः श्रेय वहाके "पदण्ड" ब्राह्मण राज पुरोहितोपर ही है, क्योकि इनकी ही पूर्ण मन्त्रणासे वहाका शासन होताहै। वास्तवमें इस युगमें भी यहाके ब्राह्मण अपने हृदयस्तलस्थ अत्यन्त हिन्दू (आर्य) सभ्यताके प्रेमका परिचय दे रहे हैं। उनके इस राष्ट्र प्रेमको समस्त विश्व आश्चर्यकी दृष्टिसे देखता है, और उन्होने जो अक्षुण्ण भारतवर्षीय सभ्यता की रक्षा जान लडाकर की है, इसके लिये वे भारतवर्षसे सदा साधुवाद सह अर्चनाके पूर्ण सुयोग्य हैं।

सत्रिय (क्षत्रिय)।

यहापर भी सदाचारी क्षत्रियोका अभाव सा ही है। उशनभव ग्रन्थ से पता चलता है कि यहाके कोरिपान, गगलङ्ग, केदरि, और जङ्गला नामक चार प्रदेशोपर क्षत्रियोका राज था। यहाका केहरि राज्य यव द्वीपका भी राज्य था, और यव द्वीपमे यह राज्यभाग सबसे बड़ा भी था। यहापर पीछे वैश्योका राज्य हो गया था। वे वैश्य गण वहा माहिप नामसे ख्यात् थे। क्षत्रियोमें "देव अगुङ्ग" नामक क्षत्रिय बड़ी श्रेणीकी और विशुद्ध समझी जाती है। इनकी क्षत्रियत्वमे श्रेष्ठता सबके सब अविरोध मानते हैं। यहाके "आर्य डामर", शाखाके क्षत्रिय एव उनके छः और साथियोके

वंशज आचार भ्रष्ट होकर वैश्य वर्णमें परिणत हो गये हैं। "कोङ्ग कोङ्ग" वंगली, और गियान्यर नामक तीनो स्थानोमें अभी भी अगुङ्ग क्षत्रिय ही राज्य करते हैं। यहाके कुछ क्षत्रिय गणोंका शूद्रासे भी सहगमन सम्बन्ध समाजके समर्थनसे देखा जाता है, किन्तु पंडित समुदाय इस कार्यका समर्थन उच्च शब्दोंसे नहीं करता है।

क्षत्रियोकी संख्या यहा कम रहते हुए भी क्षत्रियत्व पूर्ण है। इन्हें संग्रामसे स्वाभाविक प्रेम है। गुलाम होकर रहना ये स्वप्नमें भी सह्य नहीं कर सकते। समाजके रक्षाका सुप्रबन्ध करनेमें ये सदा तत्पर रहते हैं। ब्राह्मणोको छोड़ और ये किसीसे नहीं डरते। वचनकी रक्षा करनेका भी इनमें एक महत्वका गुण है।

वेश्य (वैश्य)।

यहापर क्षत्रियोसे वैश्य वर्ण अधिक संख्यामे है। यहाके करङ्ग-असेम, वोले ले गु गमेङ्ग इ, तवानान, वदोङ्ग, और लम्बक, आदि स्थानोंमे अब भी वैश्य लोग राज्य करते हैं। तवानान और वदोङ्गके राजा गण क्षत्रिय आर्य डामरके वंशज होते हुए भी कर्म परिवर्तनसे वैश्य हो गये हैं।

दहा और मज पहितके क्षत्रिय वर्त्तमानमें "माहिष" "कावो" वैश्य "स्वङ्ग" 'पति" "देमाङ्ग" तथा "तुमङ्ग गुङ्ग" नामोसे प्रसिद्ध हैं। इन वैश्योके भी आर्य डामर और पतिके वश घरानोको छोड़कर अन्य सभी शूद्र हो गये हैं।

कृषि, गोरक्षा वाणिज्य तथा शिल्पके कर्म वैश्योके लिये धर्म शास्त्र-से प्रधान माना जानेपर भी, यहाके वैश्य इसे हेय दृष्टिसे देखते हैं। जो

लोग थोड़ा बहुत व्यवसाय करते भी हैं, तो वे उसे अफीम सेवन तथा मुर्गे की लड़ाईके व्यय निर्वाहार्थ ही करते हैं। मुर्गेकी लड़ाई ये लोग विशेष चाहसे देखते और लड़ाते हैं। इस समय यहा दूसरी जातिवाले भी व्यवसाय करने लगे हैं।

शूद्र।

शूद्रको सेवाके अतिरिक्त, धर्म कर्ममे अपनी शक्तिके व्यय करनेका अधिकार नहीं है। इनपर राज्यके सेवाका बड़ा भारी भार है। सेनाके लिये खाद्य सामग्री जुटानेका भार इन्हींको पूर्णतः दिया गया है।

जगह जगहके तहसीलदार यही लोग प्रायः होते हैं। राज्यके करको भी यही लोग उगाहते हैं। गावकी देख रेख भी प्रायः इनपर ही छोड़ा जाता है।

इन शूद्रोके अन्दर "सङ्गल" शाखावाले शूद्रोंको स्मृति और पुराणादिके पढ़नेका अधिकार है। कारण यह है कि इनके पूर्व पुरुष ब्राह्मण थे। एक प्रवाद है "किसी प्रसिद्ध पदण्डका एक भृत्य छिप छिपकर उनके पूजा-पाठको सुना करता था, कुछ दिन सुननेके बाद उसे वे सब पाठवाले मत्र स्मरण हो गये। थोड़े दिनोके बाद इस भराडाके फूटने पर पदण्डने उसे शूद्रपनसे छुड़ा दिया" और वैदिक धर्मके ग्रन्थोके अध्ययनकर सकनेका उसे उसीदिनसे अधिकार मिल गया।

धार्मिक विचारधारा

यह बात पहले ही कही जा चुकी है कि भारतवर्षीय दो संप्रदायोने यहा अपना अपना प्रचार बढ़ाया। इनमे बौद्ध और शैव थे। साथ ही यह भी सत्य है कि बलि द्वीप निवासियोंने जितनी अधिक संख्यामें शैव धर्म

को अपना या उतनी संख्यामें बौद्ध धर्मको नहीं। इसमें सबसे बड़ी बात यह थी, कि शैव सम्प्रदायके प्रधान प्रचारक महा महिम ज्योतिष गणक द्विजराज प० प्रवर त्रितुष्टि थे। त्रितुष्टी यहापर ईसाकी १ ली, शताब्दीमें पहुँच गये थे। त्रितुष्टि संस्कृत भाषाके एक अति उच्च श्रेणीके विद्वान थे। इन्होंने यहा ज्योतिष विद्याका भी प्रचार किया था। इनकी प्रसिद्धि यहा इतनी हुई की वलि द्वीप वाले इन्हें सदा स्मरणमे रखनेके लिये, इनके मरनेके बाद त्रितुष्टि संवत् चलाया। आज यह संवत् वलि द्वीपमें आजिशक (आदि-शक) के नामसे चलता है।

बस, यही कारण था कि यहापर बौद्धोंके प्रभाव पूर्ण रूपमें न फैल सके, और धीरे-धीरे विलीन भी होते गये। आज वे लोग धार्मिक आचारोंमे कहातक पहुँच गये हैं, यह नीचेके कुछ विवरण- देखनेसे सहजमें समझ पड़ेगा।

× × × ×

आज बौद्ध लोग सब प्रकारके मासोको खानेमें अभ्यस्त हो गये हैं, किन्तु शैव सम्प्रदायवाले भारतके मैथिल ब्राह्मणोंकी नाईं गाय, कुत्ता, बिल्ली और नील कराठादि जीवोंके मासोको नहीं खाते हैं। यहाके पंडित लोग बुद्धको शिवका छोटा भाई समझते हैं। अनेक पड़ोसी मुसलमानों को देखकर अब मुर्दोंको जलानेमे हिचकते हैं। भूमिमें गाड़नेकी प्रथा अल्प मात्रामें है। वैवाहिक सम्बन्ध मर्यादाके बंधनसे रहित सा हो गया है। सती प्रथा सार्वजनिक नहीं रही।

इस प्रकारके और भी बहुतसे आचार विचारोंमें परिवर्तन होते हुए भी, हिन्दुओंकी मूल संस्कृति अभी भी सुरक्षित एवं सुसंगठित है। ऊपर

के ही वृत्तान्तोसे यह मालूम पड़ता है कि पुराने समयमे यहा हिन्दू और बौद्धोमे साम्प्रदायिक मतभेद न था। आजकी तरह विदेशोमे या घरमे हिन्दू धर्मी साम्प्रदायिक कलह कभी भी नही करना जानते थे। इसके लिये बलिद्वीप भी एक साक्षी स्वरूप है। बलिमें आज भी राजा तथा राज पुरोहित की मृत्युपर शैव अपने शिव निर्माल्यको और बौद्ध अपने बुद्ध पूजाके जलको मृतकके देहपर छिडकते हैं। यहाके अनेक ग्रन्थोमे बौद्ध और शैवोके परस्पर सौहार्द्र पूर्ण धार्मिक उपाख्याने भरे पड़े हैं।

शिवोपासक होते हुए भी ये लोग भारतीयोके ही समान प्राचीन वैदिक धर्मपर प्रगाढ़ आस्था वान हैं। यहाका पुरोहित समाज अभी भी दो प्रकारकी उपासनामे सलग्न है। इन दो उपासनाओमेसे एक सार्वजनिक उपासना है, जिसे सर्वसाधारणमें किया जाता है, और दूसरी उपासना गुप्तोपासना है। यह सार्वजनिक रूपमे न होकर निर्वाचित रूपमे व्यक्तिगत होता है।

बलिमें सूर्य पूजा—

हिन्दू जातिकी सभी उपासनाओमे सूर्य पूजाका महत्व और इतिहास गुरुत्व पूर्ण एवं सुप्राचीन है। वेदने सूर्यको संसारकी आत्मा कहा है, * अतएव मै बलि निवासियोके भी सूर्य उपासनाका ढंग आपको न दिखानेका लोभ संवरण न कर सका।

बलिके ब्राह्मण गण सूर्यको ही शिव मानते हैं। क्योकि शिवके तीन नेत्र × ही सूर्यके रूपान्तर समझे जाते हैं।

---

* सूर्य आत्माजगतः,—यजुः, ७—४२।

×"त्र्यम्बक यजा महे सुगन्धि पुष्टि वर्द्धनम्"—यजुर्वेद, (३—६०)सायण भाष्य देखिये।

यहाके प्रत्येक विद्वान् प्रति अमावास्या तथा पौर्णिमाको प्रातः ६ घडी से आरम्भकर १० घड़ी तक बिना कुछ खाये पीये ही अपने अपने घरोमे अति सावधानी और सार्वसाधारणके संपर्कसे रहित हो सूर्योपासना करते हैं। पूजाके अंतमें तीन अञ्जलि अर्घ सूर्य नारायणके निमित्त पूर्वाभि मुख हो समन्त्र देते हैं।

उक्त दो दिनोके अतिरिक्त सप्ताहके ५ वे, दिन भी कालिवनमे साडम्बर सूर्य पूजा होती है। इस पर्वको यहा वाले "पलिनेशिय" कहते हैं।

पूजाके निमित्त प्रत्येक कर्मनिष्ठ विद्वान्गण स्नानादिकर पूर्व मुख पद्मासनसे आसनपर बैठ जाते हैं। सामने नैवेद्य, अक्षत, घटी, धूप एवं दीपादि पूजाके उपकरण सजाकर मन्त्रोच्चारण पूर्वक पूजा कर्म आरम्भ करते हैं। साङ्ग और सविध पूजा करनेके पश्चात् पुजारीके शरीरमे देवता का आवेश होता है। देवावेश होनेपर अनेक पडित गण इस देहाभ्यन्तरस्थ देवकी अर्चना फूलोंसे करते हैं। बादमे देहस्थ देव प्रसाद बाटते हैं, और इसे राजा तथा सर्व साधारण श्रद्धा पूर्वक ग्रहण करते हैं।

पूजाके अवसरपर जो जल काममे आता है, वह तो यतीर्थ कहा जाता है। इस जलको सर्व साधारण गण अपने अपने मस्तक और शरीरपर मलते हैं। इस जलसे शरीरका मर्दन अत्यन्त पवित्र माना जाता है।

इनके घरोमे वेद, ब्रह्माण्ड पुराण, और कवि ग्रन्थोकी आलोचना सदा होती रहती है। ये लोग अपने पुत्रोको और क्षत्रिय बालकोको सदा उच्च शिक्षा देते रहते हैं। ज्योतिषका फल भी ये पूछनेपर सबोको बता दिया करते हैं। इनमें कुछ लोग पञ्चाङ्गके गणक और राजकार्यके पारदर्शी होते हैं, किन्तु इन सभी धार्मिक कार्योके करनेका पूर्ण आधिपत्य

(विशेषतया) पदण्डो× को ही है। कई एक अनुष्ठानमें तान्त्रिक क्रिया भी होती है।

यहा वाले गायत्री मंत्रका केवल द्वितीय चरण ही जपते हैं (भर्गो देवस्य धीमहि)। यज्ञोपवीत धारणके मन्त्र भी कुछ अन्य दशामें ही यहाँ पाठ होता है, यथा—ॐ (शिवसूत्रम्) यज्ञोपवीतम् परमं पवित्रम्, प्रज्ञाय आयुष्यं बलं मस्तुतेजः"। भारतवर्षमें यह मन्त्र काठक आरण्य, वैखानस तथा पारस्कर गृह्य सूत्रमें इस तरह है,—

"ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत् सहजं पुरस्तात्, आयुष्य मग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तुतेजः ॥" ●

प्रणव (ओ३म्)।

वैदिक त्रैतवादका रूप यहा प्रच्छन्न रूपसे प्रचारित है। इसे यहा "ओङ्ग" शब्द कहा जाता है। यहावाले भी इसे सम्पूर्ण त्रिशक्तिका बीज मानते हैं। भारतमें जिस प्रकार यह त्रैत मूल "अ"+उ+म् के संयोगसे बना है; ठीक इसी प्रकार यहा भी यह "अङ्ग"+"उङ्ग"+और "मङ्ग" शब्द समूहोके सयोगसे (=ओङ्ग) बनता है। इसका अर्थ यहा शिव, परमशिव, तथा महाशिव, एव ब्रह्मा, विष्णु और महेश होता है।

ब्रह्माकी यहां पच देवोमे उपासना तो होती है, किन्तु उनके मंदिर अलग नहीं बनते हैं। किसी विशेष विधिपर यदि ब्रह्माके मंदिर बन भी जाते हैं तो विधिकी समाप्तिपर वह तोड़ दिया जाता है। सूर्यदेवका

● यज्ञोपवीतके सम्बन्धमें पूर्ण ज्ञानके लिये मेरी लिखी "यज्ञोपवीत मीमांसा" पढ़िये। ले०

×पदण्डोंमें शैव पदण्डः और बौद्ध पदण्ड दोनों होते है।

यहा वालोपर बड़ा भय है। सूर्यकी उपासना अत्यधिक सावधानी और कुछ प्रकार भेदसे होती है।

सती प्रथाः—

यहाकी भी स्त्रिया (केवल शूद्राको छोड़कर) पतिकी मृत्युके बाद सहमृता होती थीं। इस समय यह प्रथा यद्यपि यहा भी उठसी गई है, फिर भी इनके प्राचीन प्रथा जानने योग्य हैं। यहाके प्रभाव सम्पन्न व्यक्तियोंमें बहु विवाहकी प्रथा अत्यधिक मात्रामें थी। राजा नग्गुर शुक्ति ने पाच सौ स्त्रियोसे विवाह किया था। कुछ दिन पूर्व यहा एक पतिके मरनेपर अनेक स्त्रियोसे मृतकके प्रज्वलित चिताग्निपर प्रसन्नतापूर्वक देह-त्यागकी प्रथा, वास्तवमें एक कठोर कष्ट वरणका आदर्श उपस्थित कर देता है। इस कार्यके लिये ये देविया महाभारत और पुराणादिके बहुतसे उपाख्यानोंको बड़ी चाहसे पढती और सुनतीं हैं।

इन स्त्रियोंकी सती क्रियायें दो प्रकारसे होती हैं। पहली प्रथामें स्त्रिया पतिकी जलती हुई चिताग्निपर मचानके ऊपरसे हंसती हुई कूद पड़ती हैं। इस प्रथाका नाम यहा "सती" है।

दूसरी प्रथामें स्वामीकी चितासे भिन्न दूसरी चिता बनाकर जलने की है।

स्त्रिया जलनेके पूर्व श्वेत वस्त्र पहनती हैं, और श्रृङ्गार करती हैं। किन्तु आभूषण, शरीरसे उतार देती हैं। जिस समयसे स्त्रिया सह मरनकी इच्छा प्रकट करती हैं, उसी समयसे उन्हें घरवाले पितृ-पुरुषोकी नाईं आदर करते, और सुन्दरसे सुन्दर भोजनादि द्वारा सत्कार भाव प्रकट करते हैं। इनके दाहके समय उपस्थित जन मंडली कवि भाषामें रामा-

यण और महाभारतके सुन्दर-सुन्दर अंशोका गान गाते हैं। यह प्रथा बलिमे उच्च धार्मिक और सुलक्षण स्त्रियोका समझा जाता है। जलनेके समय किसी प्रकारके विषादोको प्रकट न करनेवाली वीर रमणिया मुक्ति-धामकी अधिकारिणी समझी जाती हैं।

यहाके वरूणदेवका सम्बन्ध मृत्यु सम्बन्धी प्रथासे है। इन "सतियो" के तथा और भी मृतक शवके दाहानुष्ठानके अवसरपर, वरूण देवके समुद्रतीरस्थ मदिरमे कुछ अनुष्ठान ये लोग करते देखे गये हैं। मृतक-संस्कारके समय वरूणदेवके मदिरमें मृतकके निमित्त उपरोक्त अनुष्ठानका करना आवश्यक है।

अन्त्येष्टि-क्रिया।

यह कर्म यहा भी सोलहवें संस्कारका अन्तिम संस्कार है। यहाके दाह और श्राद्धमे बहु द्रव्य व्यय होते हैं। तत्काल शरीर दाह यहा साधारण लोगोके लिये करना दु साध्य है। यहाके दाहमें जो आडम्बर होता है, वह राजा और साधारण लोगोमे दो प्रकारसे है। राजा लोग सम्पत्तिवान् होनेके कारण शीघ्र जलाये जाते हैं, और साधारण-जन कुछ विलम्बसे। जो इससे भी द्रव्यहीन जन हैं, वे अपने मृतक-शवको भूमिमे गाड़ देते हैं, पीछे द्रव्य हाथमे आनेसे उस शवको भूमिसे निकालकर जलाते हैं। कभी-कभी यह कार्य मृतकके वशधरगण करते हैं, और इस प्रकार वर्षोंके बाद भी यह कर्म किया जाता है। दाह करना जरूरी है। जबतक दाह नहीं होता, वह ऋण सा मृतकके उत्तराधिकारी पर बना रहता है। जबतक दाह नहीं होता है, तबतक मृतक प्राणीकी मुक्ति भी नही होती है। अमुक्त आत्मा ही कुत्ता होता है। यहा

वाले भी पुनर्जन्म मानते हैं। मुक्तिसे कुछ कम विष्णुलोक और शिव-लोककी प्राप्ति है। यही यहाका स्वर्ग है।

मृतकको प्रायः जलानेके पूर्व घरमे ही रखा जाता है। गाड़नेवाले भी अधिकतर घरमे ही गाड़ देते हैं। जिस घरमे मृतक गाड़ा जाता है, उसमे कोई फिर कुछ दिनोतक नही रहता है। भूतोका कही अड्डा न हो जाय, इसलिये केवल कभी-कभी कोई उसमें चला जाया करता है।

मृतक-शवको दाहके पूर्व स्नान कराकर, फिर चन्दन, कपूर आदि सुगन्धित द्रव्य लगाये जाते हैं। इसके बाद बासकी ठठरीपर उसे उठा-कर दफनानेके स्थानपर या जलानेके स्थानपर श्वेत वस्त्रोसे ढँककर ले जाते हैं। दफनानेके समय कुछ रुपये उसके सिरहाने रखकर गाड़ देते हैं। इन लोगोकी धारणा है कि इस रुपयेसे वह तबतक अपना भोजन-व्यय चलायगा, जबतक जलाया नही जाता। इस कार्यमे व्यय बहुत कम होता है। गाड़नेके समय शवके मुखमे "ओ३म्" तथा स, व, त, इ, अक्षरोको लिख देते हैं और सोनेकी एक अगूठी रक्षार्थ दे देते हैं। दाह प्रथामे मृतकके दाह-स्थानतक एक बहुत ही सुन्दर और कलापूर्ण एक सेतु निर्माण कराया जाता है। फिर उसपर एक मेरुके समान चूड़ाकार ३ या ११ महलोका सुन्दर मन्दिर बनाया जाता है। इस मन्दिरके भीतर और बाहरको अकथनीय शोभामय आडम्बरोसे सजाया जाता है। इसके ऊपर शव रखकर कुछ देर ब्राह्मण मन्त्र-पाठ करते हैं। पीछे वहासे "गियान्यर" नामक ईंट और पत्थरोसे परिवेष्टित दाह-स्थानपर शव जाता है। पीछेसे १०० स्त्रिया तोय जलके पूर्ण कुम्भोको लिये चलती हैं। यहा दाहके लिये थोड़ी भूमि लाल रगसे सजाकर

पहलेसे अलग बनी बनाई रहती है। उसपर सिहका आकार बना रहता है। यह सुन्दर आकारवाला पृथक स्थान राजाओके शव-दाहका है और साधारण पशु आकारका बना स्थान सर्वसाधारण जन-समुदायके दाहका है। यहापर पुनः मृतकपर इस तोय जलका अभिषेक होता है, फिर एक काष्ठ-बक्समे शवको रखकर प्रदीप्त अग्निमे जला दिया जाता है। यहापर मृतकके जीवनमे व्यवहार किये गये वस्त्रादि लुटा दिये जाते हैं। पश्चात् मास-मासमे इसी प्रकार शव-यात्रा वहा जाती है, और श्राद्धानुष्ठान होता है, बस यह कर्म पूर्ण हो जाता है। यहा भी शूद्रोको मासभर तथा द्विजोको आठ दिनके अशौच लगते हैं। इस प्रकार यहाका सम्पूर्ण अनुष्ठानका मूल भाग पूर्ण भारतीय रीतिपर होता है। उक्त बातें बहुत सक्षेपमे लिखी गयी हैं। बहुत-सी विधियां वहा और भी इसके साथ-साथ होती हैं।

भाषा तथा साहित्य-भण्डार।

यहाकी भाषा भिन्न प्रकारकी है। इसमे १८ ही वर्ण होते हैं। बलि द्वीपकी भाषामे अकारका स्पष्ट उच्चारण होता है, किन्तु इसके पड़ोसी जावाकी भाषामें अकारके स्थानपर उकारका उच्चारण होता है। "ङ" और "ए" मे पार्थक्य रहते हुए भी ये दोनो उच्चारणमे विशेषकर अनुनासिक हो जाते हैं। "भ"[1] के स्थानमे "ब" तथा कभी-कभी "अ" के स्थानपर "ङ" वर्णका उच्चारण आ डटता है। अन्त्यस्थ "व" का तो एकदम ही अभाव है।

[1] भारतमें भी बगाली समुदाय अगरेजी क्रममें भ (BH) के स्थानपर व (V) बोल देते हैं। अन्त्यस्थ 'व' बगलामें भी नहीं है।

भाषाके व्यवहार दो भागोमे हैं। शिक्षित भाषा और अशिक्षित भाषा। इनमे पहली प्रकारकी भाषाको सभ्य समुदाय बोलता है, और दूसरीको साधारण जन-समुदाय। बलिकी शिक्षित भाषा विशेष रूपमें व्याकरणसे परिमार्जित होती है। इसका सुन्द (सुन्दर द्वीप) और यव द्वीपकी भाषासे बहुत-कुछ सादृश्य है। यव द्वीपवाले यहाकी भाषाको समझ तो अवश्य लेते हैं, किन्तु बोलना थोड़ा उनके लिये कठिन-सा हो जाता है।

इन दो भाषाओंके अतिरिक्त भी यहा एक ग्रान्थिक पवित्र भाषा है। इसमे यहाके धर्म-ग्रन्थ तथा साहित्यादिके ग्रन्थ लिखे गये हैं। इसके उच्चारण और अर्थ-ज्ञानके लिये उन्हें विशेष रूपसे अध्ययन करना होता है। यह भाषा "संस्कृत" है। बलि द्वीपमे जो ब्राह्मण आये और अपनी सेवासे यहा आर्य-संस्कृतिका अक्षय बीज बो गये वे निश्चय संस्कृतके असाधारण विद्वान् न थे, और उन्होने अपना कुछ धर्म-ग्रन्थ भी साथ लाया था।

यहापर स्मार्त और बौद्ध दोनो समुदायके महामहिम प्रचारक विद्वान् आये। अपने-अपने सम्प्रदायमें उन्होंने यहाके भावुक प्राणियोको दीक्षित किया। इन्हें उस समयके उच्चतम सभ्यताके गहन गिरिशृङ्गपर अधिरूढ किया। संसारके कल्याणमय स्वादिष्ट निर्झरिणीका प्राकृतिक स्रोत-स्रवित अमृत सम जलका सींचन और आचमन कराया। फिर भी उन्होने यहाके साथ अन्याय नही किया। धर्मोपदेशकी उज्वल वाणीधराको यहाकी भाषामे ही प्रवाहित किया, जिससे उनकी उदारताके पूर्ण परिचय मिलते हैं, और साथ-साथ आजके कुछ हिन्दू भिन्न धर्म-प्रचारकोके लिये आदर्श वे भी छोड़ गये हैं। यही कारण है कि बलि द्वीपसे आज

से आज भी आर्य संस्कृति न मिट सकी। इस प्रचारके ही सिलसिलेमे मुझे एक और आदर्श देखनेमे आता है। वह यह है कि यहा बौद्ध और ब्राह्मणो (स्मार्त) मे साम्प्रदायिक विभिन्नता रहते हुए भी आपस मे प्रगाढ प्रेम था। "प्रम्बनन" और "बुड़ोबुदर" के खण्डहरोमे ऐसे प्रमाण पाये गये हैं कि "यवद्वीपमे बौद्ध तथा ब्राह्मण एक ही स्थान पर रहकर अपने अपने सम्प्रदायका अलग अलग प्रचार करते थे। इन दोनोकी पूजा पद्धतिया भिन्न २ होती हुई भी, मन्त्र सब के एक थे। कवि भाषामे रचे हुए ग्रन्थोके कुछ भाग शैव ब्राह्मणोके रचे हैं, तो कुछ बौद्ध भिक्षुओके एक ग्रन्थमे दो पृथक दृष्टिकोणके रखने वाले आचार्योंकी ये सम्मिलित रचनाये कितनी बड़ी गौरवशीला हैं।

कवि भाषा क्या है ?

निकट होनेके कारण यवद्वीपके अत्यधिक संख्यक मनुष्य बलिद्वीपमे सदा रहते आते हैं। इससे बलि निवासियोके साथ साथ यवद्वीप मे और सुन्दर द्वीप निवासियोमे भी सरलतया आर्य संस्कृति पहुँची, एव इन सबोके भी अन्तस्तल तक अमिट होकर रही। भारतीय आचार्योने यहाकी उस समय की प्रचलित मातृ-भाषामे ही संस्कृत शब्दोको भर दिया। इससे वहा वाले संस्कृत धर्म ग्रन्थोको भी कुछ शीघ्रता तथा सरलतासे समझने लगे, एव उनकी अपनी मातृ-भाषा भी सदा प्रति पालित रही।

पीछे इन्ही संस्कृत मिश्र भाषामे धर्म, विज्ञान, गणित, राजनीति, काव्य और विविध प्रकारके ग्रन्थ रचे जाने लगे। आज उसी मिश्र भाषाको वहाके भाषा विद् गण "कविभाषा" कहते हैं।

बलिद्वीपके साहित्यके मुख्यतः ६ भाग किये जा सकते हैं।

१—वेद, (इस द्वीपमे इसी नामसे ख्यात) यथा = मूलवेद मन्त्र तथा अनुष्ठान पद्धति या कल्प शास्त्र)।

इस विभागके १७० ग्रन्थ अभी तक प्राप्त हैं।

२—आगम, धर्मशास्त्र, शासने पद्धति (जिसमे जीवन यात्रा संबधी नियम वर्णित हैं) और नीति शास्त्र, इस विभागके ६३ ग्रन्थ अभी तक प्राप्त हुए हैं।

३—वरिग, (ज्योतिप), उपदेश, जगत-सृष्टिके वर्णन, रूपक कथा, व्याकरण, छन्द, पुराण, शिल्प; और ओसद (औपध) सम्बन्धी ग्रंथें। इस विभागमे ५६२ ग्रंथ अभी तक मिल चुके हैं।

४—इतिहास, (इसमे महाभारतके विविध पर्वें हैं) ककवी (इसमें वहा की भाषा और संस्कृतके रचे गद्य तथा पद्य मय ऐतिहासिक उपाख्याने हैं) किदंग (इसमे वहाकी संस्कृत मिश्रित कविभाषाके साहित्य हैं) और गंगुरीतन (इसमे फुटकर साहित्य हैं) इस विभागके १५६ ग्रंथ अभी तक मिलें हैं।

५—वरद, (एतिहासिक रचना) ग्रथ संख्या ३५।

६—तन्त्री (उपन्यास) प्रायः सस्कृतमे हैं। इस विभागमे ६ ग्रन्थ अभी तक मिले हैं।

इन सब ग्रन्थो (१०३५) के बीच जिन जिन विपयोके वर्णन और नाम हैं, उन्हें क्रमशः उक्त संख्याके ही प्रकारसे यहां दिये जाते हैं।

१—वेद। चतुर्वेद, धर्मवेद, ऋग्वेद, सिन्धु वाक्य, वेद अर्घ, वेद परिक्रम, वेदशास्त्र, अर्घ मत्र, वेद परिक्रम, अर्थसार, अर्घ सूर्य सेवन,

अष्टक मन्त्र, अस्त्र मत्र, आत्म-रक्षा, वायुस्तव, ब्रह्मस्तव, पशुपति मत्र, पूजा आयुर्वेद, पूजा क्रम, पूजा सार संहिता, शिवस्तव, उमास्तव, विष्णुजव, इत्यादि।

२—आगम। अधिगम, आगम, अष्ट व्यवहार, देवागम, देव-दण्ड, मानव शासन, नगर क्रम, पूर्वाधिगम, सार समुच्चय, विविध-सार, विविध तत्व, विधि वाक्य, देव शासन, धर्मकृत शासन, धर्म लक्षण, पुत्र शासन, शीलक्रम, शील शासन, शिव शासन, तत्व गमन, वन गमन, नीति शास्त्र, नीति सार, राजनीति इत्यादि।

३—वरिग। भगवान् गर्ग, चतुर्वीर, कालचक्र, षड ऋतु, वीर कुसुम, आदि पुराण, अष्ट भूमि, अष्ट पाताल, आत्म प्रसंसा, आत्म तत्व, भुवन कोश, भूवन पुराण, भूवन संक्षिप्त ब्रह्मोक्त विधि शास्त्र, ब्रह्ममूर्ति, ब्रह्मतत्व, ब्रह्म वश तत्व, ब्रह्माण्ड पुराण, चन्द्र भैरव, चद्र-भूमि, चतुराश्रम, चतुईष्टि, चतुयुंग, दश वायु, दश शील, देव तत्व, धर्म समाधि, धर्म योग दीप माला, एकादश रुद्र, गणपति, गुरु बुद्धि, जय पुराण, कुण्डलनी, महेश्वरी, महेश्वरी शास्त्र, नैष्टिक ज्ञान, परम रहस्य, पूर्ण चद्र, पूर्व भूमि, रोग विनाश, समाधि योग, सार समु-दय, सार समुच्चय, सरस्वती, शिव मूर्ति, सेवक-धर्म, शिव तत्व, शिवरात्रि कल्प, शिव विजय, तत्वक्षण प्रयोग, भार्गव शिक्षा, दशकाण्ड, दशाक्षर, नवकाण्ड, परिभाष्य, स्मर क्रीडा, स्वर तन्त्र इत्यादि।

४—इतिहास। आश्रम वास पर्व, आदि पर्व, अगस्त्यपर्व, भारत वंश तत्व, भार्गव विजय, दुर्योधन आश्रम कपिपर्व सभापर्व, कौरवाश्रम, कौरव प्रसाद, मोसल पर्व, प्रास्थानिक पर्व, सभा पर्व, स्वर्गारोहण पर्व, वनवास

पर्व,विराट पर्व,अभिमन्यु विवाह,हरिवंश,अर्जुनप्रसाद, अर्जुन सहस्र भुज, अर्जुन विजय,अर्जुन विवाह, भारत युद्ध, धर्मसुत सोम,खाडव दहन, कवि जानकी,कौरवाश्रय,कृष्ण,नरक विजय,पाडु विवाह,पार्थ विजय, राम काण्ड, रामायण, रत्न विजय, शत्रुघ्न स्मर दहन, सुभद्रा विवाह आदि।

इन ग्रन्थोके अतिरिक्त और भी कई संस्कृत ग्रन्थ वहा हैं। इनमे प्रायः बहुत से ग्रन्थ वहा वालोका भारतके संस्त्रवसे रहित हो जाने पर, तथा संस्कृत ग्रन्थोके अर्थ ज्ञान पर विशेष ध्यान न रखनेके कारण ही, आज कुछ ग्रन्थ अशुद्ध भी हो गये हैं। इनमेसे एक उदाहरण यहा दे देना ही पर्याप्त होगा।

चतुर्वेद नामक ग्रन्थको भारतीय चारो वेद (ऋग्, यजु, साम, और अथर्व) नहीं समझना चाहिये। इनका लेश मात्र भी सम्बन्ध यहाके ग्रंथो से नही है, और इसका दूसरा नाम यहा "नारायणथर्वोप निपद शिर" है। इसका आदि पाठ इस प्रकार हैं—"अथ पुरूषो वैनरयन कमयत्वं प्रज-सृज्यति मनस सर्वेन्द्रियाणि चिकमयु ज्योतिरप पृथिवी विश्वसच दरनि नरयन एत द्वदस दित्य रूद्रवसव सर्वेन्द्रियाणि सिघसि सदैव स्वयत्यन्ति प्रलियन्ति एत ऋग्वेद सिरोदिते"।

यह मन्त्र भारतवर्ष के नारायणोपनिपदमें इस प्रकार है।

"अथ पुरुषो हवै नारायणो इकामयत प्रजाः सृजेयेति। नारायणात् प्राणो जायते मनः सर्वेन्द्रियाणिच। खवायु ज्योतिरापः पृथिवी विश्वस्य धारिणी॥ नारायणाद् द्वादशादित्य रूद्रोवसवः सर्वाणि छन्दासि नारा-यणादेव समुत्पद्यन्ते। नारायणात् प्रवर्त्तन्ते नारायणो प्रलीयन्ते एतद् ऋग्वेद शिरोदधीते"।

पंचाङ्ग

यहापर.शाली वाहन शक चलता है। इससे यहाके दिनोका निश्चय भारतीय पंचाग से सुविधा पूर्वक हो जाता है। मास गणना हिन्दी पचागो की नाई चान्द्र मासमे चालू है। वर्षारम्भ सौर माससे आरम्भ होता है, जो कि प्रायः मार्च (चैत्र या वैशाख) मे पड़ा करता है। ३५ दिनोका मास होनेसे प्रायः १० महीनोका ही वर्ष हो जाता है। ग्रहणके सम्बन्धमे राहुसे ग्रसा जानेकी धारणा है, और इसे अशौचप्रद माना जाता है।

सुमात्रा,

(Sumatra, The Eastern Archipelago)

यह द्वीप वर्त्तमान मान चित्रके अक्षांश ५° ३६″ उ० और ५°५७″ पश्चिममे अवस्थित है। १६७, ४८० स्कायर वर्गमील तक यह फैला हुआ है।

इस समय यह द्वीप मलय और चीन सागरको भारत महा समुद्रसे पृथक रखकर पेनङ्गकी एक सामान्तर रेखासे आरम्भ होकर बण्टमकी समान्तराल रेखा तक फैला है।

इसकी लम्बाई ६२५ भौगोलिक मील है, चौड़ाई गढमे ६० मीलकी है। वर्गफल प्रायः १२८५६० वर्गमीलकी है। इस द्वीपके पश्चिम प्रांतमें जो एकदम छोटासा एक लगा हुआ ही उप द्वीप है, उसे इसमें जोड़ देनेसे ५,००० मील और भी यह द्वीप वढ़ जाता है।

यहा पहाड़ोकी अधिकताये विशेष हैं। सभी पहाड़ोमे लम्बक ही सबसे दीर्घोच्च (१२३६३ फुटका) है, तथा यह बहुतसे छोटे-छोटे राज्योमे बटा हुआ है। इनमें अचीन, दिल्ली, लङ्कात् तथा सिपाक राज्य बड़े और प्रसिद्ध हैं।

भारतीय इस द्वीपसे बहुत प्राचीन समयसे ही परिचित हैं। महाराज रामचन्द्रके समयमें भी भारतवासियोका इस देशमे जान आन था। बाल्मीकि रामायणमें इस देशको "सुवर्ण द्वीप" कहा जाता था।

ब्रह्माण्डादि पुराणोमे इस द्वीपको मलय द्वीपके अन्तर्गत माना गया है॥ पहले यहापर सोनेकी प्रचूरता थी। भारतीय वणिक समाज यहासे सोना खरीदकर भारत लाया करते थे।

ओलन्दाज गवर्मेन्टके द्वारा प्रकाशित इस देशके विवरणसे पता चलता है कि ईसवी सवत् की ८ वीं, शताब्दी तक "वर्मा" उपाधि धारी आर्य क्षत्रियगण यहापर राज्य करते थे।

१२६५ ई० मे आदित्य वर्मा नामक बौद्ध राजा यहा राज्य करते थे। इनके समयमे धार्मिक दशा यहाकी अति उन्नतिपर था। १८०५ ई० मे यहा मुसलमानोका अधिकार हुआ और तबसे ही हिन्दू सस्कृति मिटाई जाने लगी।

इस देशके बहुतसे स्थानोमें अनेक पौराणिक तथा बोधी देव और देवियोके प्राचीन मदिर अभीतक बने हुए हैं। इनमे अधिकाश तो प्राय भग्नकी ही दशामे आ पड़े हैं। मदिरोमे शिव, विष्णु, सूर्य, इन्द्र, वरूण,

---

ग्रीकके भौगोलिक भी इसो मलयको Chersonesusaria अर्थात् स्वर्ण द्वीप कहते हैं। ॐ"तथा काञ्चनपादस्य मलयस्या परस्यहि।" ब्रह्मा० पु० ४८ अ०।

बौद्ध, लक्ष्मी, भवानी, पार्वती तथा गणेशादिकी प्रतिमायें देखनेको अभी भी मिल जाती हैं।

मंदिर और प्रतिमाओंके सम्बन्धमें कुछ शिला लेख भी पाये गये हैं। शिलालेखोके पढनेसे यहापर हिन्दू और बौद्ध धर्मो ब्राह्मण, तथा श्रमणोका अधिकार मिलता है।

आज भी मङ्गल, इन्द्रगिरि, इन्द्रपुर आदि नामोपर यहा ग्रामादि बसे हुए हैं। नदियोंके नाम भी प्रायः इसी तरहके संस्कृत भाषाके हैं।

संगीत चर्चा।

यह देश संगीत तथा नृत्यके लिये विशेषतया प्रसिद्ध है। युवतियोके नृत्यअवसरकी भाव भंगियां, एक अपूर्व आकर्षण प्रदान करती हैं, जो संसारमे और कहीं भी देखनेको नहीं मिलती है। गानमें इनका कण्ठ स्वर मधुरताकी अपूर्व वर्षा करता है। ये किसी महान् व्यक्तियोके गुण और चरित्र वर्णनका गान गाया करती हैं। गान इनके अन्तस्तलसे स्वयं निकलते हैं, और कविता इन लोगोका स्वाभाविक रहस्य है। उसमें धार्मिकता और सदाचारका भाव भरा रहता है। रस, उपमा, अलकार, ध्वनि, व्यङ्ग और सरसताका समावेश भी बहुत सामान्य नहीं रहता है। उद्गारमे स्वाभाविकता रहनेसे दर्शकोमे विशेष आकर्षण होता है, और मनोरञ्जनके साथ साथ हृदयग्राही भी होता है।

वाद्य यन्त्र भी विविध भातिके स्पष्ट, मधुर, एवं मात्रा पूर्ण बजने वाले होते हैं। काष्ठमाला यन्त्र अपूर्व है और जल तरंगके समान अविकल कलरव ध्वनि प्रदान करता है। इस कठिन वाद्य यन्त्रको यहाके बच्चे बच्चे बजा लेते हैं। मृदङ्ग "मृजङ्ग" के नामसे ख्यात है। इसका

आकार पखावजके समान होते हुए भी मुंहपर कुछ बड़ा आकारका है।

जापानसे लेकर सुमात्राके चारों ओर तक हिन्दू सभ्यताके अल्प प्रभाव युक्त द्वीपपुञ्जः—

मलय (Maley Pannin) इससे थोड़ी दूरपर ही पूर्व छोटा द्वीप

बीन्टाङ्ग (Bintang) नतुना (Natuna) पुलोमलोय (Pulo-maloe) पुलोनियास (PuloNias) वेटोव (Batove) मान्टावी (Mantawı) सिपोरा (Sıpora) नोर्थपेग (North Pagh) साउथ पेग (South Pagh) इङ्गानो (Engano) बका (Banka) विलह टोन (Bilhton)

जावाके पास मदुरा (Madura) लम्बक (Lobak) सुम्बावा (सुम्बक) (Sumbawa) कम्बोडो (Kambodo) फ्लोरीस (Flores) सेलिबस (Celebes)

बोरनियो (Borneo) पालावान (Palawan)

लूजौन (Luzon) पोलिलो (Polillo) मीण्डोरो (Mindoro) बुसुअंगा (Busuanga) बूरीआज (Burias) फेरीर इन्कु (Earir Inque) टीकाओ (Ticao) सिबुयान (Sıbuyan) तबलास (Tablas) मसबाटी (Masbatı) पानीय (Panay) निग्रोस (Nıgros) केबू (Cebu) बोहोल (Bohol) सामार (Samar) कालबा योग (Calba yog) लयली (Layle) दीनागाट (Dinagat) सुरीगाओ (Surıgao) गुई नान (Gue-

nan) मल होन (Mal hon) बुकास (Bucas) मिन्डा नाव (Mindanao) बासिलान (Basilan) सुलू (Sulu) ताम्वी (Tamvi) मेङ्गिस (Mangis) तुलुर (Tulur) तालन्तसी (Talantsi) मोरो या मोरटी (Moro or Morty) मोलूक्का (Molucca) बाचयान् (Bachian) पोप्पा (Poppa) वारियो (Wario) शिलावती (Selawati) मयसोल (Maysol) ज़ुला (Xulla) बोयरो (Boero or Burn) सीराम (Ceram) अम्बूना (Ambuna) क्लोवी (Clove) बन्दा (Banda) देखिये हार्मथ एटलास (The Harmoorth Atlas Page 123—124)

कोरिया

एशियाका एक विस्तृत राज्य । यह वर्तमान मान चित्रके अक्षां० ३३° से ४३° उ० और देशान्तर--१२४ से १३० पू० के मध्य चीन के उत्तर-पूर्व दिशामे है । कोरियाके उत्तर मन्चूरिया, एव रूस राज्य, पूर्व पीत सागर और पश्चिम जापान सागर है । भूपरिमाण ८५,००० वर्ग मील है । जनसख्या लगभग १ करोड़ की है । यहाका प्रधान नगर "होनियङ्ग" या "सो उल" है ।

यहाके सभी अधि वासी अभी भी बौद्ध धर्मावलंबी हैं। यहापर चीनके साथ ही बौद्ध-धर्म भारतसे आया था । चीन देशमें बौद्ध-धर्मके भारतीय तथा कुभा (काबुल)वासी प्रचारक श्रवण गणोमेसे अनेक कोरियामें भी ठहर-ठहरकर बौद्ध सदेशका प्रचार करते थे, किन्तु इनके प्रचार फुटकर थे, और वह जम नही पाता था । पाचवीं शताब्दीमे यहा चीन परिव्राजको

के द्वारा बौद्ध धर्म जम गया। इस समय इसे राजकी ओरसे सहायता मिलने लगी। बौद्ध संप्रदायने कोरियामें बहुतसे उत्तम-उत्तम सुधार किये। मास भक्षण भी उस समय यहा निषेध किया गया। पीछे १४ वी, शताब्दीमे यहा कनफुची धर्मके साथ बौद्ध धर्मका सघर्ष हुआ, और इससे बौद्ध धर्मको कुछ हानी हुई। वहाके कई एक मठ मंदिरोपर भी कनकुचियोका अधिकार हो गया।

सन् १५९० ई० से १६१० ई० तकमे यहा प्रायः डेढ़ लाख कैथोलिक ईसाइ आये, और वे सब अपने स्वाभाविक शिक्षाके अनुसार धर्म प्रचारके रूपमें राजानीति सत्ताको हाथमें करने लगे। १६०४ई०से कैथोलिक लोग यहाके राज्यतन्त्रपर अपना अधिकार संस्थापन करनेका प्रयत्न आरंभ किये। पीछे इन्होने कोरियाके विरुद्ध धर्मयुद्धकी घोषणा कर दी। इस युद्धमे इन्हे कुछ सफलता भी मिली, और दश आना अश इनके अधिकारमें आगया। इन सबोके इस षड़यन्त्रके विरुद्ध १८८८ ई० मे कोरिया के राजाने "कोरिया राज्यके किसी भी अशमे ईसाईयोके नहीं रहने देनेकी आज्ञा प्रदान की।" इस समयोचित आज्ञाका पालन वहा वालोने हृदयसे किया और तबसे वहा ईसाई धर्मका पैर उखड़ गया।

यहा चीनकी ही राजनीति चलती है, और यहासे चीन सम्राट्को कुछ कर भी मिलता है। कोरियाकी अधिकाश जनता बौद्ध धर्मावलम्बी है, और कोई कोई कनफुची मतको भी मानते हैं।

ईसाकी पाचवी शताब्दीमें यहा चीनके किसी श्रवण प्रचारकोने बहुत दृढ़ रूपमे बौद्ध धर्मका प्रचार किया, और इसी श्रवणके समय वहा बौद्ध धर्म सार्वजनिक रूपमे हो गया।

यहाकी भाषा जापानियोके सदृश होती हुई भी स्वर वर्णमें चीन और ब्रह्म भाषा सी है। यहाकी भाषामें बहुतसे ग्रन्थ है, और उनमे बौद्ध जातककी कथा, तथा त्रिपिटकके तत्व हैं। कोई कोई ग्रन्थ भारतीय महाभारत और पुराणोके उपाख्यानोसे भी भरे हैं।

यहाका बौद्ध मंदिर चीन देशके मंदिरो सा है, और घटे तथा दीप दान की प्रथा पूर्ण भारतीय सा है। यहावाले भारतवर्षको तीर्थ भूमि मानते हैं, और उन्हें भक्ति पूर्वक यह ज्ञान है कि हमारे धर्मका आदि स्त्रोत भारतवर्ष है।

यहाकी सामाजिक प्रथा भी चीन देशकी सामाजिक प्रथाके ही सदृश है। कोरियाके भी कई एक प्रचारक जापानमे गये थे, और जापानमें बौद्ध धर्मका प्रचार इनके द्वारा भी हुआ था। यहावाले अवश्य बौद्ध-धर्मके नाते हिन्दू हैं, और हिन्दू संस्कृतिके प्रचारकभी हो चुके हैं।

६३८ ई० मे नालन्दा महा विद्या-पीठके अन्दर "आर्य वर्मा" और "हुइ निए" नामक दो विद्वानोंको अध्ययन करते हुए देखा जाता है। ये दोनो विद्वान् कोरियाके रहनेवाले थे। इनमे एक ७० और ६० वर्षकी उम्र तक भारतमे रहे। ६५० ई० मे "यू आन ताई" नामक कोरियाके एक उच्च प्रचारक भी तिब्बत होते हुए नालन्दामे आये थे। यहा इन्होने संस्कृतका विशेष रूपसे अध्ययन किया।

"यू-आन-हाऊ", नामक एक छात्र कोरियाका नालंदामें कुछ दिनोतक था।

"ह्वुं-इ-लुन" यह कोरियाके मूल निवासी थे। इनका भारतीय नाम "प्रज्ञावर्ग" पड़ा था। इन्होने भारतमे दर्शन शास्त्रका गम्भीर अध्ययन

किया था। इनकी शास्त्रार्थ शैली अत्यधिक प्रखर होती थी। अहमदाबाद में ये १० वर्षतक रहकर पीछे कई एक देशोमे प्रचार करते थे। इनका कण्ठ मधुर था, उपदेश इनके तत्वमय गंभीर होते थे। कोरियावासी विद्वानोमे इनका नाम उच्च श्रेणीमे है। उस समयके भारतवासी विद्वान् इन्हें सत्कारकी दृष्टिसे देखते थे।

———

जापान (Japan)।

यह देश आज समस्त एशियामे समुन्नत, बलिष्ठ, औद्योगिक, कर्म-तत्पर, कार्य-कुशल, आदर्श, सुसभ्य तथा स्वतन्त्र है। यहापर आज भी बौद्ध-धर्मने राष्ट्र-धर्मका अधिकार पाया है, और इस देशके हजारो नर-नारी प्रतिवर्ष भारतमे भगवान् बुद्धके विविध लीला-क्षेत्रके दर्शनार्थ आते हैं। इन लोगोकी पुण्य-भूमि भारत ही है और इस भूमिके प्रति तीर्थ-भावसे ये श्रद्धा-निवेदन करते हैं। भगवान् बुद्धके अनुयायी और भारतको पुण्य-भूमि माननेके नाते ये अवश्य हिन्दू हैं, और इनमे हिन्दुत्वकी भावना भी अनेक अशोमे परिपूर्ण है।

यहावालोने इस समय तो ससारभरमे शिल्प तथा वाणिज्यमे असाधारण विजय पाया है। शिल्पके कई एक वस्तु यद्यपि नवीन युगके आदर्शपर ही बनते हैं, फिर भी इन लोगोके निज व्यवहारकी वस्तुओमे

विकसित प्राचीन मगध साम्राज्यकालीन रूप खचित चित्रादि आज भी नेत्रोको आन्तरिक आनन्द प्रदान कर देते हैं।

यहाके मंदिरोपर आज भी महाराजा धर्म-सम्राट् अशोकके धर्म-चक्र, मणिबन्ध, कमलदल एवं ताण्डव चित्र अंकित हैं। मंदिरके गुम्बजोपर कलश तथा चक्र प्राचीन बौद्ध-संस्कृतिके मनोहर दृश्य प्रदान करते हैं। साथ ही मठोंमे भारतीय ढंगका घण्टा भी बजा करता है। यहाकी सुकोमल महिलाओंके सुहास्य मुख-मण्डलके ऊपर प्राचीन मागधी रमणियो जैसी केश-जालोका *"खोपा" बंधन मन-मुग्धकर होता है।

भारतवर्षीय अजन्ता गुफाकी नं० १ कोठरीमें घुसते समय बाईं ओर जो चित्र हमे भगवान् बोधिसत्वके देखनेको मिलते हैं, ठीक उसी तरहके यहा भी "होरी ऊजी" मदिरमे पाया जाता है। इसी प्रकारके सैकड़ो चित्र यहापर भारतीय कलाके हैं। ७०९ ई० से ७८४ तक यहाके नारा-युगकी तो प्रायः एकदम ही भारतीय कलामण्डित मदिर और शिल्प-रचनाएँ हैं।

यहाकी भाषाओमे सस्कृतके ही सदृश व्यञ्जन वर्णों में स्वर लगते हैं, जैसे—गये, गा, गी, गू, गे आदि।

यहाके बौद्धगण मास-भक्षणका निषेध अभी भी उच्च धर्ममे परिणत करते हैं।

जापान शब्द चीन देशके "एक अद्भुत" शब्दका अपभ्रंश है। इसका असली रूप निफन है। इसका अर्थ है "उदीयमान सूर्यका देश।"

*खोपा—केशोंको तीन लरोंमें गूथकर पीछेकी ओर बांधना।

जापानमें बौद्ध-धर्मः—

यद्यपि जापानका सम्बन्ध भारतके साथ बहुत प्राचीन रह चुका है, फिर भी बौद्ध धर्म यहा पर सीधा भारतसे न जाकर चीनसे गया है, किंतु जापानने चीनसे भी बढकर बौद्ध धर्मकी निष्ठा प्राप्त की। यह इसका चकित करने वाला निर्विवाद आदर्श है।

जापानमे चीनसे बौध धर्म जानेका काल ५५२ ई० माना जाता है, किंतु यहाके अनेक उपकरणोके देखनेसे यह बात संदिग्ध-सी जान पडती है। सम्भव है बौद्ध मतावलम्बी थोड़ी संख्यामे पहले हो, पीछे (५५२ ई० मे) इस धर्मने यहा पूर्ण विस्तार लाभ किया हो, और इसी युगको जापानमे बौद्ध धर्मका आरम्भ काल समझा जाने लगा हो।

यहापर बौद्ध धर्मकी बारह शाखाए हैं, परन्तु उनके नाम समय समयपर बदलते रहे हैं। पुराने शाखाओके नाम निम्न हैं—१—कुशा, २—जोजित्सु, ३—रिट्सुवारिसू, ४—सनरन, ५—होसो, ६—केगोन, ७—टेण्डै, ८—सिङ्गन, ९—जोदो, १०—जेन, ११—ब्रशिन, १२—निचेरन।

उपरोक्त शाखाओमेसे १, २, ३, और ४ थी, शाखा निर्मूल हो गयी है। इस समय जो १२ शाखाएँ गिनी जाती हैं:—१—होसो, २—केगोन, ३—टेण्डै, ४—सिङ्गन, ५—युजु वा नेम्बुत्सू, ६—जोदो, ७—रिञ्जै, ८—सोदो, ९—ओवाकू, १०—शिन, ११—निचेरन, और १२ जी, इनमे भी ७वी, ८वी, तथा ९वीं, शाखाएँ जेनकी ही उपशाखाएँ मानी जाती हैं। ५वीं,और १२वी, शाखा केवल नाममात्रकी हैं। पहली तालिकाकी १ से ८ शाखाको जापानी लोग प्रायः हासू कहा करते

हैं। ये शाखाएँ चीनसे आई हुई मानी जाती है। इन आठोमे नारा और हैयान युगके बौद्ध धर्मका वैशिष्ट अभी-भी देखनेमे आता है। शेष चार शाखाओका आविर्भाव ११७० ई० के बाद हुआ है। जापानके हिन्दुत्व-बौद्धिक विवेचनार्थ, जापानी ऐतिहासिक मि० ताका कुसुका एक लेख पढ़ने योग्य है।*

प्रत्येक शाखाके आरम्भका समयः—

१—सानरन ६२५ ई०, सप्तम शताब्दी।
२—जोजित्सू ६२५ ई०, " "
३—होसो ६५६ ई०, " "
४—कुशा ६६० ई०, " "
५—केगोन ७३५ ई०, अष्टम शताब्दी।
६—रित्सु ८४५ ई०, " "
७—टेराडै ८०५ ई०, नवम शताब्दी।
८—सिङ्गन ८०६ ई० " "
९—युजुनेम्बुत्सू ११२३ ई० बारहवीं शताब्दी।
१०—जेदो १०२ ई० " "
११—शिन १२२४ ई० " "

जेन शाखा भी चीन वासियोंके द्वारा हीचलायी गयी थी, इसका आरम्भ काल ७ वी शताब्दीका है। यह शब्द ध्यान शब्दका अपभ्रंश है।

*Parmartha (A. D. 499-569) or Kulanath as he was sometimes called, was a Brahmin of the Bhardwaj family of ujjayini, west India, in 539 A. D. the Emperor

of China, Wu-ti (502-549) Sent a mission to Magdha, North India, in search of a Lerned Budhist and the original maha yan lexts. the Indian cort dispatched Parmartha, Who was then slaying at Magdha, with 240 bundles of Palm-bat lexts, leisides 64 works which he afterwards translated, His arrival in Nanhai falls in the year 546 A. D, while his visit to the then capital Chin-yeh did not take place untel 548, when the Emperor Wu-ti Gavehen a hearty welcome with due honour,

(२) जापानकी संस्कृति और भाषाके जन्मदाता भारतीय थे।

Seeing that such an attempt Necessitates a compitent knowledge of Indian (Budhist) and chinese (confuchian) literature as well as the old and new litrature of Japan. before he come to tokyo, he had already shown himself a scholar brilliance both in Sanskrit and Chines, and his subs quent study of Japanese, "

Is it possible, he asks to assume that the 'Kenyogen" or "double meaning" of Japanese poetry (P 27) may in any way be connected with that form of "ALANKAR" of the Indian "KAVYA" which is exactly in the same Mathod? Our learned authei says nothing about it. So far as I am able to aticipate it, I for myself, too cannot at present prove any connection on this point,

But I should like to emphasize the fact the in fluence of India, material or inbllectual, must have been much Greater in an earlier period than we at present consider to have been the case, there were, for instance, several Indians whom the Kuroshiwo current, washing almost the whole southern coast, brought to the Japanese shore, we hear of the Black and Red Devils who taught magic or charms in Japan, the naked ascotic who lived in a Grotto of warm Spring in kii, the south-Gazing as cetic of fushime, the Young bare footed Priest who taught a "TANTRIK" magic in yechizen, and the like, though all of these may not in variobly have been Indians. that there was a communiction of trade between India and China from about 400 A. D. down to 800 A. D is a proven fact, Not to speak of any doubt ful records, we read in the Chines and Japanese books, Budhis or other wise, of Indian march-ant ships appearing in the China Sea, We know definitily that Fahin (399-415 A D) returned to China Via Java by an indian boot which drifted owing to a mon-soon, right up to shanting, and further in the tangdy-nasty an eye witness tells Osthat there were in 750 A D many Brahman Ships in the Canton River beside other Foreign Vessels, Persian, MAG. etc., and

It cannot be denied that several Indians came to Japan, Specialy in view of so many Indians finding their way to China by sea, to Comfine myself more stricty to our question, I can odduce a fact in Japanese history. In 736 A D in the nara period, which is our authors "Blulezeih" of Japanese poetry, there came a Brahman Bodhisema Bharadvaja by name who is generally known as the 'Brahman Bishops" in company with a priest from Champa (Cochin-Chiha) named "to che" (Buttetsu),

The Brahman, ship wricked, landed at champa, met the latter and sailed together further north ward; both arrived in osaka, came to Nara where they seem to have met another Indian ascetic, recoynizenly each other by a chorns of mnsic they were playing, and were well received by the then ruling Emperor, the Brahman remained in Nara about twenty-four years (736—750) teaching Sanskrit anh preaching the Budhist doctrine taught in "Gand-vyuha"

J Taka Kusu,

Journal of the Asiatic Society, Page 869—872 (1905)

१२—निचेरन १५३ ई०　　"　　"
१३—जी　　१२७५ ई०　　"　　"

जापनामें बौद्धोके प्रधान दो सम्प्रदाय हैं। एकका नाम है महायान और दूसरेका हीनयान। इन दोनोमे केवल कुसु, जोजित्सू, तथा रित्सू शाखाओंको छोड़कर शेष सबके सब महायान सम्प्रदायकी ही शाखाये हैं। जिनमे बहुत सी आज विनष्ट और गुप्त दशामे हैं। "निचेरन" शाखा जापानकी मौलिक सम्पत्ति है। इसने "आ×मिदा" उपासनाके विरुद्ध शाक या ऐतिहासिक बुद्धकी पुनः उपासना चलानी चाही थी। इसके प्रतिष्ठाता निचिरेन जापानी इतिहासके एक चमकते हुए रत्न थे। इन्होने धर्म-प्रचारके साथ-साथ यहाँके राजनैतिक क्षेत्रमे भी बहुत-सा कार्य किया था। इस मतके मानने वाले "आमिदा" से कम थे, किन्तु इनके कार्य बहुत कुछ जापानके सुधार और राष्ट्र भावनपरक हुए है।

इसके अतिरिक्त और भी छोटे छोटे दो-चार धर्म सम्प्रदाय है-। जिसमे जिन्तो सप्रदाय विशेष उल्लेखनीय है। इसका प्रधान सिद्धान्त साम्यवाद है। इसमे मूर्ति पूजा तथा तन्त्र मन्त्रादि के विधान नहीं हैं। यह स्वर्गकी सीढियाँ भी किसीको नही दिखाता, और न तो नरकका हृदय विदारक भय ही। जापानके लोग धार्मिक वाक-वितण्डा पसन्द नहीं करते यहा सब अपने अपने कार्यमे ही सदा लगे रहते हैं। धर्मके लिये आपसमे कलह कदापि ही कही होता है।

×आमिदा भी एक शाखा ही है। इसके माननेवाले जापानमें बहुत है। यह शुद्ध धार्मिक सम्प्रदाय है।

ये लोग धर्मको राजनीतिसे अलग रखते हैं। कुछ दिन पहले धर्मके नामपर राजनैतिक स्वार्थ लुटने वाले ईसाई पादरी यहा दण्ड भी पा चुके हैं।

इस समय जापान पाश्चात्योके अनुकरणमे संलग्न है, अतएव यहासे भारतीय प्राचीनताके आदर्श मिट रहे हैं।

सामाजिक प्रथा।

यहाका वैवाहिक सम्बन्ध भारतसे मिलता जुलता-सा है। कन्याके लिये वर पिता माता ही ठीक करते हैं। पुरोहितोके द्वारा विवाह सम्बन्ध पूर्ण होता है। यहा विवाह सम्बन्ध शुद्ध सामाजिक प्रथा समझी जाती है, और इसका उपयोग सन्तानके लिये है।

मृत देहके सत्कारमे यहा कुछ वैचित्र है। जापानी रीतिके अनुसार मुरदेको २५ घंटे तक घरमे ही रक्खा जाता है। इस समय मृत व्यक्तिकी आत्माको परलोकमे मगल प्राप्तिके लिये पुरोहित फल धूप और दीपादिसे पूजा करते हैं। इस पूजामें फूल चढाना निषेध हैं। फूल केवल "शव की अर्थी" सजानेमे लगाया जाता है। पूजाके समय पुरोहितोके उच्चारित मन्त्र चीन भाषाके हैं। पूजाके बाद मुरदा पुरोहितके सामने लाया जाता है, और फिर उसे एक डोलीमे रखकर वस्त्रसे ढक दिया जाता है। मृत व्यक्तिके आत्मीय कुटुम्ब सब साफ सुथरे कपड़े पहनकर मुरदा के पास चारो ओरसे मडलाकारमे बैठ जाते हैं। इस समय सबोके मुखपर प्रसन्नताकी आभा रहती है। जापानियोके सिद्धान्त हैं कि जो

जन्म लेगा वह अवश्य मरेगा, इसलिये शोक, रोना और छटपटाना आदि व्यर्थ हैं *।

जापानियोंमे शवके दाह और गाड़नेकी दोनो प्रथा है। साधारणतः मृतकको उसके जन्म स्थानमें ही गाड़ देते हैं, यदि कोई दूर देशमे मरा हो तो फिर उसे जला देते हैं।

उपरोक्त प्रथासे जपानियोमे उत्कट जन्म भूमि प्रेमका आदर्श टपकता है १।

समाधि या दाहके वाद ४१ दिनो तक यहा अशौच माना जाता है। मृतकका पुत्र अपने पिताके नामको एक काठ पर लिखकर घरमे रख छोड़ता है, और ४१ दिनो तक प्रतिदिन प्रातः तथा सायं समय काठके पास पितरके नामपर भोजन रख नैवैद्य चढाता है। प्रत्येक मास-मासमें समाधि स्थल पर पितरकी पूजा और भोजनादि मृतकके श्राद्धाधिकारी चढ़ाते हैं। इस प्रकार यहा मृतक श्राद्ध भी होता है। कहीं कहीं तो भावुक लोग अपने मृतक पिता माताकी प्रतिमा भी वनाते हैं, और कई एक वर्षों तक उसकी पूजा किया करते हैं।

इन सवोंके अतिरिक्त यहा भौतिक उपासना भी वाहुल्येण प्रचलित है। नक्षत्र, आकाश, चन्द्र, मेघ, क्षेत्र, बीज, और अनेक नामोके भिन्न-भिन्न देवी तथा देवोकी शक्ति आदिकी पूजा, अभी भी जापान निवासी करते हैं।

---

*यह सिद्धान्त भारतके उपनिषदोंका है। गीतामें लिखा है.—जातस्यहि ध्रुवोमृत्युर्ध्रुवजन्म मृतस्य च, तस्मात् परिहार्यर्थे नत्वं शोचितु मर्हसि ॥

१—जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसि ॥

जापानमे अधिकतर कोरिया और चीनसे ही बौद्ध-धर्म पहुँचा, किंतु चीनकी अपेक्षा जापानने ही बौद्ध-धर्मको सार्वजनीन रूपमे दृढतासे अपनाया।

व्यक्ति गत जीवनके लिये सामाजिक संस्कारोके सम्पादक या आचार्य यहा भी एक भिन्न श्रेणीके ही व्यक्ति होते हैं। इनका सन्मान अभी भी भारतीय ब्राह्मणोके ही ढगका होता है।

सिलेबस—

भारत महासागरस्थ पूर्व द्वीपपुञ्जके अन्तर्गत यह एक बड़ा द्वीप है। वर्त्तमान मानचित्रके अक्षां० १°४५ से ५° ४५′ उ० तथा देशा० ११३°१०′ से ११६° ४५′ पू० के मध्यमें यह अवस्थित है। यहांका भूपरिमान ५७२५० वर्गमील है। इस द्वीपकी लम्बाई ७६८ मील और चौड़ाई १०० मीलकी है। इसके दक्षिण भागमे वोनि नामका उप-सागर है, पूर्वी तथा पश्चिमी भागमे "गोरङ्गतलु" या "तोसनी" और "कोड़ला" या "तोमैक" नामक उपसागर है, एवं इसके उत्तरी भागमें रटी नामक उपसागर है। चारो ओर उपसागरोसे घिरा यह प्रदेश चार प्रायः द्वीपोके आकारमे सुसगठित है। यहापर कई छोटे-बडे पर्वतगण दडायमान हैं। नदिया और ह्रद भी शोभा वढानेमे दक्ष हैं। धातुओ-के खान तो अपरिमित हैं। जगलोमे गृह निर्माणोपयोगी काष्ठ प्रचूर

पाये जाते हैं, और साबू, कोको, मिर्च, लवङ्ग, सुपारी तथा कपूर आदिका यह व्यवसाय क्षेत्र है।

सुमात्रा, जावा तथा बोर्नियोके ही जातिके लोग यहा बसते हैं, इनके मुखपर दाढ़ी और मूँछ नहीं होते। शरीरके रग पीले और लोम लम्बे होते हैं।

जंगली प्रदेशोकी रहनेवाली जाति याक् (यक्ष) कहलाती है। कुछ जंगली लोग नर मांस भोगी भी हैं।

उन्नतिशील जातियोके लोगोने मलय और यवद्वीप निवासियोकी सभी शिल्प कलाये सीख ली हैं। स्त्री और पुरुप समान रूपसे काम करते हैं।

मि० डि० कूटे, के लिखे अनुसार यहा १६ वीं, शताब्दी तक हिन्दू धर्मी और सभ्यताके लोग थे। ये लोग हाथ बाध ऊपरकी ओर मुंहकर भगवदाराधना करते थे। शव-दाहकी प्रथा इनमे थी, और कुछ-कुछ है भी। यहाकी भाषामे बहुतसे धर्म तत्व मूलक सस्कृत शब्द हैं।

१६०३ ई० मे सर्व प्रथम यहाका एक राजा मुसलमान हुआ, और पीछे १६१६ ई० मे उसकी प्रजाने इस्लाम ग्रहण किया। उसीके बादसें यहाके अचार और व्यवहारमे बहुतसा अन्तर आ गया।

बोर्निओ (Borneo)*

भारत महासागरके अग्नि दिशाका यह एक बड़ा उपद्वीप है। यह वर्त्तमान मानचित्रके अक्षा०-७° द० और ४° २०' उ०, १०८° ५३' तथा देशा० ११६°२२' पू० रेखापर स्थित है। २४६, ८६० स्क्वायर मील की परिधितक यह फैला हुआ है।

यहापर ईसवी संवतकी ६ ठी, शताब्दीमे हिन्दू उपनिवेश स्थापित हुआ था। उस समयसे लेकर १५ वी, शताब्दी तक हिन्दू सभ्यता और हिंन्दू राज्य इस देशमे था। बादमे मुसलमान धर्मियोका आन जान आरम्भ हुआ। इधर भारतवर्ष अपने गृह कलहमे व्यस्त था, और बाहरके सम्बन्धसे विमुख था। इस सम्बन्ध हीन दशामे यहा मुसलमान

* a Great is land of the Malay Archi Pelogo,

राज्य सस्थापित हो गया। इस देशके अनेक स्थानोमे अभी भी कुछ हिन्दू मदिर भग्न प्राय दशामे वर्त्तमान हैं। इस देशमे हिन्दू सस्कृति यद्यपि गई, किन्तु उसका पूर्ण विकाश होते न, होते ही हिन्दुओंके आन जानसे यह देश हीन हो गया।

इस समय यहा डच तथा ब्रिटिश प्रधान शासक हैं। इनके अतिरिक्त और भी दो विदेशियोके शासन है।

इसके ईशान कोणेपर तिरून (तेड़ाग) नामक एक जातिका वास है। जो प्रायः जंगलमे रहती हैं, और ये लोग नर मास भक्षक हैं।

आचार व्यवहार—

यहाके मूल निवासियोंके आचारादि बलिद्वीप और यवद्वीपके जैसे है। स्त्रियोमे सतीत्व अभी भी है। स्त्रिया पतिकी सेवा धर्म समझकर करती हैं। ये चर्खेसे प्रेम विशेष करतीं, और यहाका चर्खा भारतीय चर्खेके आकारका होता है। १० वीं, शताब्दी तक यहा पर मुरदे जलाये जाते थे। यहाके कुछ पवित्र गानमें रामायण और महाभारतके अंश मिलते हैं। यद्यपि यहासे हिन्दू धर्म और सभ्यता इस समय बिल्कुल उठ गयी है, किन्तु यहाके व्यवहार, मंदिर, और भाषा आदि प्राचीन हिन्दू संस्कृतिका प्रकाश कर देते हैं। *

---

*The only archeslogical remains are a few Hindu temples, and it is probable that the early setlement of the South-Eastern portion of the island dates from about the sixth Century A, D. Borneo the Primitive Hinduisum,—Encyclo Pedia Britannica, V. 3.9 12,

फिलिपेन (Philippine Island)

अर्द्धां० ४° ४१' तथा २१ १०' द० एवं दे० ११६° ४०' और १२६°३४' पू० की रेखापर अवस्थित है। वर्त्तमानमे यहाकी जन संख्या लगभग १२,०००,०००, मनुष्योकी है। अभी भी यहापर ईसाई, मुसलमान और बौद्ध आदि प्रधान धर्मके लोग ही विशेष सख्यामे हैं। यूरोपियन लोग आज यहा अधिकतर आकर बस गये हैं, जिनमे अमेरिका, जर्मन, स्पेन, ब्रिटिश, फ्रास, स्वीज, चीन, जापान, आदि देशके लोग हैं। ईसाई धर्म इस समय यहा विशेष फैलावपर है। पादरी सर्वदा अपने चंगुलमे फसानेके लिये इधर उधर याहके मूल निवासियोंमे चक्कर काटते रहते हैं। कुछ दिन पहले यह देश भी हिन्दू देश था, और अनेक भारतीय विद्वानोके उपदेशसे आध्यात्मिक, तथा महान् उज्वल सभ्यताके प्रकाशसे सभ्य संसारमे चमकता था। यहाका इतिहास

यद्यपि पूरा पूरा उपलब्ध नही है, फिर भी जो कुछ उपलब्ध है, उससे यहाकी सस्कृतिका सुन्दर परिचय मिल जाता है। जो सभ्यता यवद्वीप या चीनादि देशोमे फुली फली थी, वही इस देशमें भी आकर अपने उदार और स्नेहपूर्ण गोदमे फिलिपेन वालोको बैठाकर विभव तथा ज्ञानसे भर गई थी।

हिन्दू सभ्यताके साथ-साथ सस्कृत भाषा भी आई थी। आज हिन्दू चिन्हके नष्ट होनेपर भी, संस्कृत भाषा यहाकी भाषामे मिलकर अवश्य अपना इतिहास और अमर जीवनको जता रही है। ×

प्राचीन भाषाका यहा एक कोष ग्रन्थ है। उसमें संस्कृत शब्द बाहुल्येण दीख पड़ते हैं। उदाहरणार्थं दो एक शब्द यहा दे दिये जाते हैं, यथा—शासन, अपराध, राजा, मन्त्री, चिन्ता आदि।

अब यहा अग्रेजी शिक्षा और रहन-सहनका विशेष प्रचार होनेसे मूल भाषा भी प्रति दिन नष्ट हो रही है। यहाके रक्तमे यूरोपियन रक्त भी अब मिल रहे हैं। इनकी संख्या भी यहा अल्पत्व हीन हो गई है।

मूल निवासियोमे राम, शिव, बौद्ध, आदि देव देवियोके नाम आ जाते हैं, किन्तु ये सब अतिद्रुत भावसे विनष्ट भी हो रहे हैं।

× A Hindu influence on doubtedly comeby way of the Malay Peninsula, Java and other island nearly and probably reached back to the early centuries of the chreistan era, the Hindnus influenced the life of the people intimately, Mamy Sanskrit words in the languages and dialects of the people of the philippines.

—Encyclo pedia Britannica, Vol 17 P. 730,

कान्धार (Kandhar)

पहले इस देशका संसार प्रसिद्ध नाम गान्धार था ×। आजकल अंग्रेजो ने इस देशको कान्दहार कहना आरम्भ किया है। यह स्थान वर्त-मान उपलब्ध मान चित्रके अक्षा० ३१° ३७' उ० और देशान्तर ६५" ४३° पू० पर स्थित है। यहासे काबुल ३ मील दक्षिण पूर्वके कोनेपर है। महाभारतमे यह देश विशेष प्रसिद्ध हुआ। रामायण कालमे भी इस देशका संम्बव भारतके साथ समान भावसे था, किंतु उस समय इसका कोई विशेष महत्व परिलक्षित न हीं होता ३७० मील हेराटसे दक्षिण पश्चिम यह हिन्दू देश आजकल बिल्कुल मुसलमान धर्ममे है। इस समय यह अफगान वालोसे शासित होता है। ११ वीं, शताब्दी

×"तिलभारा मसीराश्च मधुमन्तः छकन्दकाः, काश्मीराः सिन्धु सौवीरा गान्धारा दर्शकास्तथा। म० भी० अ० ६, श्लो० ५३।

मे सुलतान महमूद गजनी यहा चढ़ आये थे। उस समय भी यह देश पूर्ण हिन्दू प्रदेश ही था, और यहाके बहुतसे सुरम्य स्थान स्मार्त तथा बौद्ध सम्प्रदायके सुन्दर भास्कर खचीत कलापूर्ण मंदिरोसे सुशोभित थे। १३ वी, शताब्दीमे जगेज खा यहा सदल बल पधारे और उसी समयसे यहाके हिन्दू मदिर शोचनीय दशामे आ पहुँचे। उधर मुसलमान धर्म भी द्रुतवेगसे अपना प्रसार कर रहा था। १५०७ ई० मे तैमुरके समयमे मदिर नष्ट होने लगे और आज एक प्रकारसे यहा विल्कुल ही हिन्दू धर्म न रहा, एव मदिरादि भी निश्चिन्हसे ही हो गये।

१७४१ ई० तक भी यहांके कुछ मुसलमान राजा अपने नामके

गान्धार देशकी राजधानी कभी रामचन्द्रके भाई भरतके पुत्रकी स्थापित नगरी तक्षशिला, (रा० ७।१०१, म० आ० ३,२०,१७२ देखे) भीरह चुकी है। कहीं कही पुष्करावतीका नाम भी राजधानीमें आता है। पश्चात् नृतत्व वेत्ता मि० जे० वी० हाल डेन (Prof G. B. Haldane) ने मानव जातिकी आदि उत्पत्तिके चार-केन्द्रोंमेंसे एक केन्द्र गान्धारको भी माना है। —The Statesman of Calcutta 22 2-31,

The countiy of the Gadhara his along the Kabul rivor between the Kumar and the Indus. Its capital was Purusha pura, Now called peshawar, T R Kiishna A Chaiya,

गान्धारि या गान्धार शब्द ऋग्वेदके १।४।१।१७।१३।५।४।४ ॥ जैमिनी ब्राह्मण २।३२।६ ।.प्रश्नोपनिषद् ६।१ में आता है ॥वा० रा० ४-४३-२४॥ अथर्व वेद ५ २२-१४ ॥ ऋ० १-१२-६-७ ॥ ऐत० ब्रा० ७-३४ ॥ शतपथ ब्रा०८ १-४-१० ॥ छान्दोग्योपनिषद् ६-१४-१ ॥ इसके अतिरिक्त गान्धार जनपदका उल्लेख पाणिनी सूत्र, हरिवंश, विष्णु पुराण आदिमें भी आता है।
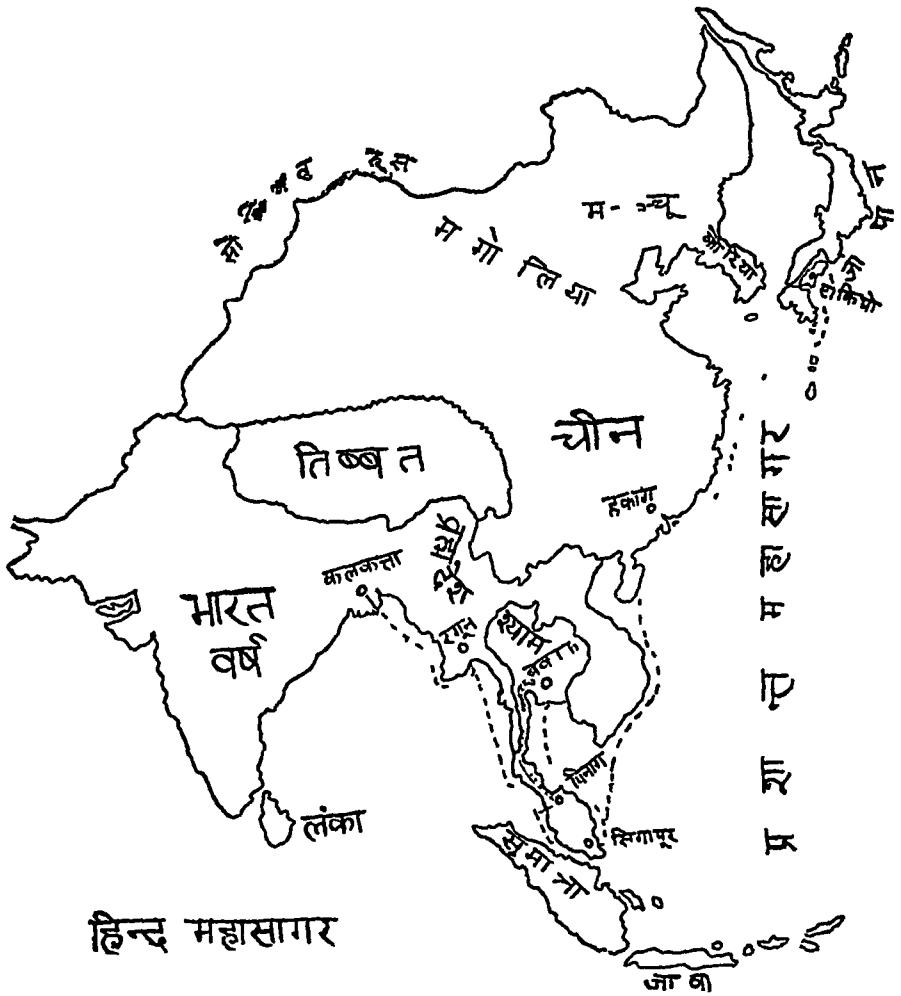
पितृ-भू-पुण्य-भू-के आदर्श पर प्रतिष्ठित तात्कालिक हिन्दू-राष्ट्र

पीछे हिन्दू उपाधि "शाह" लगाते थे। उनमें अहमद शाह, नादिर शाह शाह अब्बास तथा जमान शाह आदिके नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

आर्यत्वका प्राचीन इतिहास।

मत्स्य पुराणके अनुसार पहले ययाति वंशीय (क्षत्रिय) आरद्द राजाका पुत्र गान्धारने अपने नाम पर इस स्थानको बसाया था। हिन्दू शास्त्रोंमे इस स्थानका बाहुल्येण वर्णन पाया जाता है। बौद्ध-शास्त्र और जैन धर्मियोके अरिष्टनेमि नामक पुराणान्तर्गत हरिवंश नामके ग्रन्थमे यह स्थान (गान्धार) पुण्यस्थल माना गया है। ग्रीक देशके स्वनाम धन्य ऐतिहासिक विद्वान मि० स्ट्रोबो ने "गान्दारीटिस" नामसे इस देश का वर्णन किया है। दूसरे ग्रीक निवासी महा विद्वान् हिरोड्टने इस देशको "हैक तेयस" और तीसरे ऐतिहासिक मि० टालमीने गान्धारी तथा गान्दारी लिखा है। चीन परि ब्राजक फाहियानने "कि० एन० तो-वेगु" और थ्रू-एन-चु-यङ्गने "कि-एन-तो-लो" के नामोसे गान्धार देशका वृत्तान्त लिपि बद्ध किया है।

चीन परिब्राजक थ्रू-एन-चुयङ्गके समय गान्धार देशकी परिधि पूर्वमे तथा पश्चिममे १००० लि०, (चीन माईल) एव उत्तर दक्षिणमे ८०० लि० तक फैला हुआ था। इस समय इसके सीमाका निर्देश इस तरह होता है, पश्चिममे लमघन, और जलालाबाद, पूर्वमे सिन्धु नदी, उत्तरमे स्वात एव बुनिका पर्वत, तथा दक्षिणमें कालबाघ था।

× पौराणिक इतिहासके आधारसे यह भी जान पड़ता है कि

× वि० पु० ३८५, ३८६। भा० पु० ९,११,१२॥ रघु0 १५-८९॥
"गन्धारिभ्यो मूजवद्भ्योऽङ्गेभ्यो मगधेभ्यः"। अ0 वे0 ५-२२-४१।

गान्धार देश बहुत वर्षोतक तक्ष शिलाके राजा द्वारा शासित रहा है। अयोध्याके सम्राट् भगवान रामचन्द्रके आदर्श प्राण प्रिय महाराज भरतके पुत्र तक्ष राजाके शासनाधिन पहले यह देश था।

महा भारत कालमे महाराज सुबल यहा राज्य करते थे, और उनकी धर्म पत्नी गान्धारी इसी महाराज सुबलकी कन्या थी। × महाराज सुबलको १३ सन्तान थे, और ये लोग विविध कार्यके करनेवाले थे। इनमें सबसे बड़ा सन्तान शकुनि था, जो धूर्ततामे अपना एक ही स्थान संसार पर उस समय रखता था। इसीके चलते धृतराष्ट्रकी सभामे धर्म प्राण महाराज युधिष्ठिरको बाध्य होकर जूआ खेलना पड़ा था, एवं चालोंमे फस उन्हें पराजित भी होना पड़ा था। शकुनिके १३ भाईयो के नाम निम्न हैं—शकुनि, वृषक, बृहद्बल, अचल, शरभ, सुभग, विभ्र, भानुदत्त, गज, गवाक्ष, चर्मवान्, आर्जव, और शुक।

सुबलको एग्यारह कन्याये भी थीं, और वे सबके सब महाराज धृतराष्ट्रके साथ व्याही थीं। उन एग्यारहोंके नाम निम्न प्रकार पाये जाते हैं:—गान्धारी, सत्यव्रता, सत्यसेना, सुदेष्णा, सहिता, तेजःश्रवा, सुश्रवा, निकृति, शुभा, शम्बठा, और दशार्णा ❀।

१२० से १२६ ई० तक यह देश शिल्प रचनाके लिये ससारमे सबसे उन्नत गिना जाता था। उस समयकी बनी मूर्तिया अत्यन्त कला पूर्ण और सुनिपुणकारू खचित हैं।

× ददौतां धृतराष्ट्राय गान्धारीं धर्मचारिणीम्, गान्धारीं त्वथशुश्राव धृतराष्ट्रं त्वचक्षुषाम्॥

—महाभारत, आ० प० अ० १०३, श्लो० ११, (पूना भ० इ० द्यूट)

❀ तस्या सहोदराः कन्या, पुनरेव ददौदश। गान्धार राजः सुबलो भीष्मेव

एकाध पुरानी बातें ।

वर्त्तमान कान्दाहारसे प्राचीन गान्धार ४ मील पश्चिम चेल-जिनाक पहाड़के नीचे था। उसकी तीनो ओर समतल भूमि, तथा एक ओर बड़े-बड़े दुर्गम पर्वत थे। इस दुर्गम पर्वतके कारण गान्धार देश बड़ा भयानक था, और सहसा यहासे कोई जीत कर न जा सकता था। इसीलिये कहीं-कहीं यह अजेय नामसे भी स्मरण किया जाता था। यहाके मेषोमें अत्यधिक लोम होते हैं, और कुछ विद्वान् वेदके भी एक मन्त्रको इसीके अर्थमे घटाते हैं ×। वेदमे आये कुभा नदीके नामको भी यही वहती हुई कही जाती है, और इस देशको पूर्ण आर्य निवासका एक समृद्ध तथा प्रसिद्ध केन्द्र माना जाता है। इस कुभा नदीको अलेक्जेण्डरके आक्रमण कालमे यहा कुफेन नामसे पुकारा जाने लगा।

यद्यपि आजका कान्दाहार प्राचीन गान्धारके सदृश विस्तृत और प्रख्यात नही है, फिर भी वहाकी कुफेन नदी, मेषके ऊनकी अत्यधिक प्राप्ति और भौगोलिक समताएं आदि, कुछ न कुछ प्राचीनताकी झलक दे ही देती हैं।

वरितस्तदा ॥ सत्यव्रतां सत्यसेनां सुदेष्णा च सुसंहिताम्। तेजःश्रवां सुश्रवां च तथैव निकृति शुभाम् ॥

शंभुवां च दर्शार्णां च, गान्धारी देश विश्रुताः।
एकद्वा प्रतिजग्राह धृतराष्ट्रो जनेश्वरः ॥

—महा० भा० आ० प० अ० १०३ (भण्डारकर पूना)

× "सर्वाहमस्मि रोमशा गान्धारीणामिवाविका" (ऋ० १, १२६, ७)

चीन पर्यटक फाहियान, सुङ्ग-यून, और यूएन-चाङ्ग आदि महामान्य यात्री यहा आये थे, और उन्होने इसका वर्णन भी लिपिबद्ध किया है। उस समय यह गान्धार वर्त्तमान पेशावर तथा काबुल तक फैला हुआ था। उस समय भी यहा बौद्ध धर्म और बौद्ध तथा स्मार्त्त धर्मके देव तथा देवियोकी प्रतिमाएं मन्दिरोंमे प्रतिष्ठित थे। उन्हीं परिव्राजकोके मतसे यह भी जाना जाता है, कि यहापर हिन्दू धर्मके महान् विद्वान् बसु बन्धु (बोधि सत्व), असङ्ग (बोधि सत्व), नारायण देव, धर्मत्रात मनोर्हित और पार्श्व प्रभृति जन्म ग्रहण कर, इस भूमिको कृतार्थ और चिरस्मरणीय कर गये हैं। उपर्युक्त विद्वान् बौद्ध-शास्त्रकार, प्रचारक, तथा चीन और जापानमे बौद्ध धर्मके मूल प्रतिष्ठताके पदको भी अलंकृत करनेवालोमेसे हैं।

अधिकार।

जितना भी यहाके प्रामाणिक साहित्य उपलब्ध होते है, उनकी आलोचनासे यह पता चलता है, कि इस देशपर अन्य देशवालोका भी अधिकार समय समयपर सदा हुआ है। अयोध्या निवासी महाराज भारत के अधिकारसे लेकर, भीष्म-पितामह तकके अधिकार अवश्य घरौआ और आत्मीय थे।

चीन यात्री सुंग-युनके समय (५२० ई०) यहा हूण जातिके द्वारा बहुत बड़ी क्षति हुई थी। हूण लोगोंने यहाके मनोहर स्थान और वस्तुओको उजाड़ कर अपने अधीनमे किया था, फिर मालव राज 'ले-लि-को' शासनाधिकार प्रदान कर चला गया था। उस समय यहाकी

राजधानी पेशावर बनी, और इसी समयसे गान्धारकी बची-बचाई श्री भी एकदम विनष्ट हो गयी।

यू-एन-चङ्गके समय यहा 'कपिश' राजा लोग राज्य करते थे, और राजधानी पेशावरमे ही थी। ईसाकी १ली, शताब्दीमे कुषण वंशीय महाराज कनिष्क× ने यहा विजय कर अपना अधिकार जमाया। इनके समयमें यहाकी राजधानीका मुख्य स्थान तक्षशिला हुआ।

१७८३ ई० मे यहा एक फास्टर नामक अंग्रेज आया था, और उसके लिखे वर्णानुसार उस समय यहा अनेक हिन्दू व्यापारी व्यापार करते थे। ये सब व्यापारी यहीके रहनेवाले थे, और वे सब हिन्दू धर्मके माननेवाले थे।

सोलह राज्य।

अनेक बौद्ध ग्रन्थोंमें भारतीय सोलह आर्य राज्योका उल्लेख है। उन सबोके पाली नाम निम्न है:—

अग, मगध, कासी, कोसल, वज्जी, मल्ल, चेती, वंसा, कुरू, पाचाल, मत्स्य, सूरसेन, अस्सक, अवन्ती, गान्धार और कम्बोज। इस गणनासे गान्धार अवश्य विशुद्ध भारतवर्षीय राज्योमे एक प्रधान था।

तक्ष-शिला।

यह स्थान यद्यपि आज पंजावमे है, किन्तु पुराने समयमे यह एक बहुत ही प्रसिद्ध और बड़ा स्थान था। महाभारत कालमें यहासे गान्धार

× रावलपिण्डी (पजाब) जिलेके माणिक्यल गाँवसे प्राप्त एक प्राचीन रोमक मुद्राके आधारपर। —०

देशतकका शासन होता था, × तथा जनमेजयने भी यहा ही सर्प-यज्ञ किया था• ।

इस नगरका भग्नावशेष अभी भी ६ वर्ग मीलतक फैला हुआ देखने को मिलता है। इस भग्न खण्डहरोमे अनेकों बौद्ध-मन्दिर और स्तूपादि पाये जाते हैं। ग्रीक लड़ाकू राजा अलेकजेण्डरके समय यहा तक्षशिला नामक राजा राज करता था, और इसने उस समय सामान्य ईर्षाके कारण भारतीय रण-पुङ्गव शूर-शिरोमणि महाराज पुरूको नीचा दिखानेके लिये अलेकजेण्डरसे मेल कर लिया। अनुमान है कि यदि यह अलेकजेण्डरसे नहीं मिलता, तो पुरूको कभी भी ग्रीक राजा नहीं जीत सकता था। अलेकजेण्डर यहा तीन दिनतक रहा था, और पूर्ण सम्मान भी पाया था।

चीन परिव्राजक भी यहा आये थे, और ३ दिन रहकर आदर उपभोग किये थे। उस समय यहा ताकरी भाषा प्रचलित थी, और मध्यभारतकी भाषा बोली जाती थी।

महाराजा अशोकके समय यह मगध साम्राज्यका विद्रोही बना था, किन्तु अशोकके प्रतापसे पुनः यहा राजभक्ति जम गयी। पंजाब विजयके समय महाराज अशोक इसी नगरमें रहते थे, और उनके परम धार्मिक तथा सोम्य स्वभाववान् सुन्दरतम पुत्र कुणालने अपनी विमाताके षड़-यन्त्रसे यहीं दोनो मनोहर आखें निकाली थी।

× म० भा० १।३।२२ ।

• स्वर्गारोहण पर्व, अ० ५। वाराही संहिता स०१४.२६,

भारतीय बौद्धगया इसे तक्षशिर कहते हैं। ईसाकी १ ली, शताब्दीमें इसे अमन्द्र भी कोई कोई कहते थे।

ईसाकी १ली, शताब्दीके पूर्व यह 'यू-फ्रे-टाइडिस' राज्यके अधीन था। ई० सम्वतके १२६ वर्ष पहले अवर नामक शक राजाके भी अधीन था। पीछे यह कुषण साम्राज्यके अधीनमे आया, और इस वंशके प्रसिद्ध राजा कनिष्कने अपने शस्त्र-बलसे इसे जय किया। इनकी मुद्राएं तथा बहुतसी उत्कीर्ण लिपिया शाह धेरी नामक स्थानमे मिली है। उन लिपियोमेसे जिसे रावर्ट साहबने पाया है, इस नगरका नाम तक्षशिला ही खुदा हुआ है।

रामायण कालमें भी इस नगरकी यही स्थिति थी। महाराज रामचन्द्रजीके द्वारा भरत जब गन्धार देश जीतनेके लिये भेजे गये थे, तो यहा भी भरतकी लड़ाई हुई थी, पीछे महाराज भरतने इस तक्षशिलामे अपने पुत्र भरतको बैठा दिया, और इसी समय यह गन्धारकी राजधानी बनी थी। *

अध्यापन।

यह विद्यापीठ ब्राह्मण, जैन, और बौद्ध तीनोका ही शिक्षा केन्द्र रह चुका है। यहा प्रायः १६ वर्ष×की अवस्थापर ही बालकगण अपनी प्रारम्भिक शिक्षा समाप्त करके आते थे। यहापर छात्रोको कठोर नियममें रहना पड़ता था, और इस सुशासनके नाते ही यहा, दूर-दूर देशसे विद्यार्थी-समूह सर्वथा आ-आकर अध्ययन करते थे। यहापर दो प्रकारके

---

*भरतश्च युधाजिश्च, समेतौ लघु विक्रमैः। गान्धर्व नगरं प्राप्तौ, सबलौ सपदानुगौ॥ तक्षतक्षशिलायातु पुष्कलं पुष्कलावते। रा० ७, १०१।

× देखिये "बौद्ध जातक ग्रन्थका १।२५६, २६२, २७३॥ २।२, ८७," २२७ १२२२, आदि।

छात्र थे। एक धनी श्रेणीके और दूसरे साधारण श्रेणीके। धनिक श्रेणीमें राज-बालक भी प्रायः रहते थे, और ये लोग अपने अध्ययनार्थ प्रचुर धन गुरुको दे देते थे। इस श्रेणीका नाम 'आचारिय भाग' (अर्थात् आचार्यको दक्षिणा स्वरूप धन देकर पढनेवाला विभाग), और दूसरीका "धमन्ते वासिन" था। इस श्रेणीमें बिना कुछ लिये अध्ययन कराया जाता था।

×एक राजाने अपने पुत्रको केवल मात्र एक जोड़ा चट्टी, जंगली पत्तियोका एक छाता, और एक हजार कहापण देकर तक्षशिलामे पढ़नेको भेजा। मार्गके जंगल और कठोरताको पैदल पार करते हुए उसने तक्षशिला पहुँचनेपर, वहाँके आचार्यको घुमते हुए देखा। छाता तथा चट्टीको दूर उतार अपने उस भावी गुरुको जाकर अभिवादन किया। स्वागत करते हुए मधुर शब्दोमे आचार्यने प्रथम मार्गकी थकावटके सम्बन्धमे पूछकर पुनः प्रश्न किया—

आ०—तुम कहासे आ रहे हो ?

वा०—वाराणसीसे।

आ०—तुम किसके पुत्र हो ?

वा०—कासीराजके।

आ०—तुम यहा किस निमित्त आये हो ?

वा०—शास्त्राध्ययनके लिये।

आ०—तुम अपने साथ आचरिय भाग लाये हो, या धमन्ते वासिक होनेकी आकाक्षा है ?

× जातक २।२२७ ॥ ५१।४५७।

वा०—आचरिय भाग ले आया हूँ।

यह कहते हुए १००० कहापणकी थैली गुरु-चरणपर रख दिया।

शिष्योके लिये गुरु-सेवा करना अनिवार्य था। अपराधपर उचित दण्ड भी मिलता था। यहापर अठारहो विद्याएं पढाई जाती थीं। शस्त्र-विद्या भी उन्नत ढंगकी बताई जाती थी। तीरन्दाजी शिक्षा यहाकी प्रख्यात थी। तन्त्र-शास्त्रका भी कुछ-कुछ अध्यायन होता था। इन सबोके अतिरिक्त अनुसन्धान विभाग भी था, जिसमे अपनी इच्छाके अनुकूल छात्र अनुसन्धान भी करते रहते थे।

नालन्दा और विक्रम शिलाके बढनेपर यहाकी उन्नति कुछ थिरक सी गयी। इस प्रकारकी हिन्दू सभ्यताके दृढ़ शिक्षणालय भारतमे १३ वीं, शताब्दीतक रही है। जबतक ऐसी संस्थाएं थीं, भारतके गौरव महान् और प्रख्यात थे।

अफगानिस्तान (Afghanistan)

यह देग मध्य एशियामें है। यहासे उत्तर रूसी तुर्कस्थान, पश्चिममें फारस, और दक्षिण पूर्व काश्मीर राज्य है। यह देश २४५००० वर्ग मीलमे फैला हुआ है, और वर्त्तमानमें मुख्यतः उत्तरीय अफगान तथा दक्षिणी अफगानके नामोसे दो भागोमे बंटा है। इस समय गान्धार और काबुल भी इसीके अन्दर है।

ईसाकी दो शताब्दी पूर्वतक यहापर बिलकुल हिन्दुओका ही निवास था, और ईसाकी १० वी, शताब्दीतक यहाँ हिन्दू अल्पमात्रामें रहे। यहापर काबुल नदीके तटपर अभी भी बौद्ध कालके अनेक चिन्ह मिलते हैं। बमियनमे दीवारपर खुदी हुई, बौद्ध भगवानकी मूर्ति अभी भी कला नैपुण्यमें प्रसिद्ध और दर्शनीय है। हैबकमे बौद्धोके कितनी ही प्रधान प्रधान प्राचीन अभी वस्तुएं पड़ीहुई हैं। काबुलसे उत्तर कोह दामनमे

कई पुराने नगरोके चिन्ह पाये जाते हैं। शाक्य मुनिके भिक्षा मागनेका पत्थरवाला कमण्डल कान्धारके किसी मस्जिदमे पड़ा हुआ है।

६३० से ६४५ ई० तक चीन परिव्राजक हू-येनं-चंगने अफगानमें भ्रमण करते हुए, वहापर भारतवर्षीय हिन्दू राजाको राज्य करते देखा था। ईसवी सम्वतसे ३१० वर्ष पहले श्रावोने सिन्धु तटके किनारे पश्चिमी भागमें मौर्य सम्राट् चन्द्रगुप्तको कुछ भूमि दहेजमें दी थी। ईसाकी १० वीं, शताब्दीमे यहासे हिन्दुओका आधिपत्य मिटा, और तवसे आजतक यहा मुसलमान धर्मी राजाका दृढ़ शासन प्रतिष्ठित हुआ। हिन्दूको उस समय यहासे मिटानेका उल्लेख स्पष्टतया पाया जाता है, और इस कार्यका करनेवाला सबुकतगीन नामक एक चालाक लड़ाकू था।

आर्य-संस्कार।

इस देशके समस्त प्रान्तमे वर्णाश्रम व्यवस्था थी। यहाके ब्राह्मणवर्ग अतिशय विद्वान् होते थे। क्षत्रिय भयंकर लड़ाकू और वैश्य व्यापारमे निपुण थे। बौद्ध धर्मके पूर्व यहा वैदिक धर्म था। बौद्धोके प्रचारके समय उन सबोसे संघर्ष भी हो जाता था। समाज-शास्त्र यहा कई एक प्रकारके समय समयपर बने। व्याकरण-शास्त्रका अध्ययन इधर बाहुल्येण था। सर्वप्रथम पाणिनि व्याकरणका इधर भी प्रचार हुआ था।

स्त्रिया इस देशकी भारतके ही सदृश वस्त्र पहनती थीं। प्रधान वस्त्र [साड़ी] के नीचे भी एक वस्त्र पहननेका विधान था। उसे 'शाटका' या अन्तरा कही जाती थी। शिरके केशोको गूंथ कर फिर उसपर एक सुन्दर रेशमीकी जाली डाली जाती थी। कन्धेके ऊपरसे नीचे ठेहुनेतक सम्पूर्ण शरीरको ढकनेवाला एक चादर (उत्तरीय) ओढ़नेकी प्रथा थी।

स्त्रिया सदा आंखोको भूमिपर लगाती हुई चलती थी। विवाह सन्बन्ध क्षत्रिय और वैश्योंके घर वाग्दान तथा स्वयम्बर प्रथासे होती थी। ब्राह्मण बालिकाका विवाह सर्वदा ब्राह्म पद्धतिसे होता था। पतिके मरणोपरान्त प्रायः सती होनेकी प्रथा थी।

मृत्युके बाद शवका दाहकर्म और श्राद्ध होता था। बालक ब्रह्मचर्य रखते हुए गुरुकुलमे शिक्षा पाते थे। यहासे परशुरामके गुरुकुलमें कई एक बालकोको अध्ययन करते हुए देखा जाता है। बौद्ध कालमें तक्षशिला यहाका प्रधान विद्या केन्द्र था। कुभा (काबुल) प्रदेशके शालातुर गावमे भी एक संस्कृत भाषाका विद्यालय था।

परिशिष्ट।

अफगानिस्तान मे सर्व प्रथम एक भारतीय ब्राह्मण द्वारा ही हिन्दू राज्य स्थापित हुआ था। × महाराज भरतका ननिहाल (कैकेय) भी यहीं था और पीछे उन्होंने इस देशका शासक भी अपने पुत्रको ही बनाया था। यह कैकेय देश प्राचीन समय (रामायण) मे अफगान और काश्मीर के राजौरी नामक स्थानके बीच था। उस समय काशमीर कोई भिन्न जनपद नही था, और वह कैकेयके ही आधीन था। इस नगरके समीप विपाशा (वियासा) नदी प्रवाहित थी, और अयोध्यासे यहा आने जानेके समय शतद्रु (सतजल) नदी लाघनी पड़ती थी।

× देखिये "टाईम्स की हिस्ट्री आफ इण्डिया।"

कुभा

(काबुल Kabul and Kah=bool)

यह नगर वर्त्तमान मानचित्रके अक्षां० ३८°३′ उ० एवं देशान्तर० ६६°१८′ पू० मे अवस्थित है। कावुल गजनीसे ८८, खिलात ए गिलजाईसे २२६, और पेशावरसे १६५, मीलकी दूरीपर है। यहाकी जन सख्या लगभग डेढ लाख की है। यहा कभी-कमी ३०° डिगरीतक ताप मान यन्त्र उतर आता है, और कभी कभी १०५° डिगरी तक चढ जाता है। इस समय इस प्रदेशमे मुसलमान धर्मी जन समुदायका ही वाहुल्येण निवास है, किन्तु ईसवी सवत्के १४ वी, शताब्दी तक यहा

Kabul capital of af Ghanistan, at an clevation of 6900, ft. above the sea in 34° 32′ N and 69° 14′ E, Estimated pop, 150,000, – B. C. Vol 13. P. 235.

हिन्दुत्व सस्कार थे। १० वीं, शताब्दी तक तो यह देश हिन्दू देश ही था, और विश्व प्रख्यात हिन्दू धर्म, समाज, साहित्य, विज्ञान, कला, सभ्यता, आचार, एवं कर्मकाण्डके महान्से महान् विद्वानोकी यह (काबुल) वसुन्धरा उदारता पूर्वक जन्मदातृ थी।

इस समय काबुल अफगानिस्तानकी राजधानी है। इसकी तीनों ओरको छोटी पहाड़ियोने घेर रक्खा है। दक्षिणकी ओर वाला हिसारका किला है। इस देशमे कुभा नामकी एक नदी अति प्राचीन और प्रख्यात है।[१] इस नदीके नामपर बहुत दिनो तक यह स्थान "कुभा-देश" कहा जाता था, और अनेक सुप्राचीन सस्कृतादि ग्रन्थोमे यह देश कुभाके ही नामसे लिखा गया है। पीछे जब मुसलमान धर्मी द्वारा यहा हिन्दू आचार, विचार, भाषा, तथा सस्कृति मिटाई जाने लगी, तो उसी समय कुभा नदीका काबुल नाम पड़ा, और इसी काबुल नदीके नामपर आज यह काबुल देश, और नगर हो गया है।

प्राचीन स्थिति।

प्राचीन समयका असली काबुल (कुभा) प्रान्त आजके काबुल प्रातसे अवश्य कुछ छोटा-सा था, किन्तु अन्तर्जाति ख्याति और विद्वत्ता मे यह उस समय आजसे बहुत गुणोमे बढा चढा था। इस देशके मनुष्य भयानक वीर और बलिष्ठ ×होते थे। भारतीय राजाओके साथ कई बार इनकी खट पट भी हो चुकी है।

---

१. "मावो रसानि तभाकुभा, क्रुमुर्माबः सिन्धुर्निरीरमत्" ऋग्वे० ५ ५३-९।

अव्वल कम्बो दोयम अफगान सोमम बदजात काश्मीरी,—मुगल कहावत।

× शक्ति सगमतन्त्र।

इस देशका नामकरण और भौगोलिक परिवर्तन भी कई वार हुआ इक्ष्वाकु वंशीय महाराज सगरके समय इस देशका नाम काम्भोज था। प्राय. इस देशका यही नाम प्राचीन और विशेष प्रख्यात होकर वहुत दिनो-तक रहा, और उस समय पंजाब देशसे आरम्भकर समस्त अफगान पर्यन्त इसकी भौगोलिक-स्थिति थी[१]। उस समय भी यह देश घोड़ेके व्यवसाय के लिये विश्व प्रसिद्ध था, और यहा सुन्दर तथा हृष्ट-पुष्ट घोड़े प्रचूर होते थे[२]।

सगरके पिता बाहु राजाको शक और इस कम्बोज जातियोने जब युद्धमे मार डाला; तो फिर बादमे सगरने इससे पितृशोध लेनेकी इच्छासे इनपर चढ़ाई, कर युद्धमे इन्हें जीत लिया। ये लोग सगरके कोप भयसे भागकर वशिष्ठ ऋषीके शरणमे गये। वशिष्टने ब्राह्मण स्वभाव सुलभ दयाकर सगरसे इन सबोके प्राणको बचा दिया, और फिर सगरने इनके शिरके बालोको कटवा कर छोड़ दिया।* पुनः इसी वशकेवीर महाराज

१—"पंचाल देश मारभ्य म्लेच्छाद्दक्षिण पूर्वतः काम्भोज देशो देवेशिर ? वाजिराशि परायण.।"

="कर्णाटा कम्बोज घएटा दक्षिणा पथ वासिनः, अम्बष्ठा द्राविड़ा लाटाः कम्बोजास्त्रि मुखाशदाः।" ग० पु०

२ कम्बोजानां वाजिशाला जायन्तेस्म, हयोज्झितः। राज० तरगिणी १४, १६५। वि० पु० १६४-२७४। भाग० २, ७, ३५। आमा० १, ६, २१। महा० स० श्लो० १६१२ आदि।

* अर्धं शकानां शिरसो मुण्डयित्वा व्यसर्जयत्। यवनानां शिरः सर्वं काम्बोजानां तथैव च। हरिवंश पुराण, ७८०, ७६०, ७६८, ७७६, ७८२,। वा० रा० ४, ४४, १४। विश्व ५०२।

रघुने इस देशको जीता था, उस समय यहाँ कई राजा थे, और वे सब सगठित होकर रघुसे लड़े थे। जीतके बाद इन लोगोंने रघुका अच्छा सत्कार किया, एव उन्हे अनेक घोड़े सुवर्ण, और उप ढोकन आदि बहुमूल्य द्रव्यादि देकर बिदा किया।[१]

रघुवशकी रचना (ईसवी संवतकी १, ली, शताब्दीके प्रारम्भमे) कालमे काम्बोज देशकी भौगोलिक स्थिति सिन्धु नदके उत्तर और गौरी गुरू पर्वतके पास तक थी। रामायणके समय महाराज रामचन्द्रके भ्राता भरत और इनके पुत्रका भी यहा अधिकार देखा जाता है,×। इस समय तक क्रमशः इस देशका सम्बन्ध भारतवर्षके साथ अविच्छेद तथा पूर्ण आत्मीय मय था। यहाँके निवासी सुख और समृद्धिपूर्ण थे। उनके जीवन धार्मिक और वैदिक आचार युक्त थे। सूर्य (मित्र) पूजा यहाँ वालोमे विशेष प्रचलित था। यहाका राज्य शासन क्षत्रियोके अधीन था, और क्षत्रियगण श्रद्धापूर्वक ब्राह्मण भक्त थे। ब्राह्मण गण सर्वदा धर्म आचार, अर्थ, और राजनीतिका उपदेश करते थे।

१ देखिये रघुवश सर्ग ४। (रघुवश में रघु का यहां से गौरू-गुरु पर्वत पर चढ़ ने की बात लिखी है, और मल्लिनाथ ने गौरी गुरु का अर्थ हिमालय किया है। यह भ्रम है। उस समय हिमालय था या नही यह सदिग्ध है। आज का हिमालय नवयुवक है। अभी भी काबुल के "गोरीया" जन पद में एक गौरी नदी बह रही है। इस नदी की चारो ओर पवत मालावे खड़ी हैं। इस से यह निश्चित और दृढ सा जान पड़ता है कि कालिदास ने इसी नदी के तट पर स्थित पर्वतों को गौरी गुरू कहा है। गौरी गुरू शब्द भी यहां सार्थक है। यूरोपिय भौगोलिक "टलेमिने भी इस प्रांत (Goraia) को गोरिया लिखा है। P !5 Bk VII Ch. 1।

महाभारत कालमे यद्यपि यहा क्षत्रिय थे ही, और उनमे स्मार्त धर्म भी था ही, फिर भी कुछ लोग वृषलत्व भी प्राप्त कर रहे थे[१]।

द्रौपदीके स्वयम्बरमे यहाका एक सुदक्षिण नामक राजा द्रौपदीसे विवाह करने आया था। अर्जुन भी यहा विजय करने गये थे[२]। इस समयतक यह काबुल कम्बोजके ही अन्दर था। इसे कहीं काम्बोज या काम्भोज भी कहा गया है। 'ब' और 'भ' अक्षरमे विशेष पार्थक्य संस्कृत व्याकरणमे नहीं है, इसीसे इन दोनो नामोसे यह देश प्राचीन भारतीय ग्रन्थोमे लिखा गया है। इस देशमे सस्कृत भाषाका प्रचार पूर्ण था, किन्तु कुछ उच्चारण भेद भी अवश्य थे[३]।

काबुलको मध्यकालीन इतिहास।

ईसवी सम्बतसे ५०० वर्ष पूर्व दारायुस हयस्तास्प (Darius Hystaspes) के समय सारगी, अरिय सत्तगिदीय, अपरित, ददिक, गान्धारी और पकतेस लोग अफगान, काबुल, कान्दहार आदि स्थानोपर अलग अलग राज्य करते थे। ३१० ई० सम्बतसे पहले ग्रीकोने मौर्य

१-शका यवन कम्बोजास्तास्तान्क्षत्रिय जातय., वृषलत्व परिगता ब्राह्मणा-नामदर्शनात्। म० भा० १३-२१३, (कलकत्ता ए० सु० से छपा)

२ "सुदक्षिणश्च कम्बोजः" म० भा० आ० प० १७७, १५ (पूना)।

गृहीत्वा तु बल सारं फाल्गुण' पाण्डुनन्दनः। दरदान्सह कम्बोजै रजयत् पाक शासनि·॥ म० भारत स० प० अ०, सव७३२३४, उक्त ग्रन्थों के अतिरिक्त और भी वायु, विष्णु, वराह मिहिर कृत बृहत्सहिता, भागवत, आदिमें इस देश का वर्णन है।

—४ देखिये निरुक्त २। २,

सम्राट् चन्द्रगुप्तको कुछ भूमि देहज स्वरूप दी। साठ वर्ष बाद यहा कुछ कुछ बक्ट्रीयाकेयूनानी वातावरणका प्रभाव आने लगा।

ईसवी सम्वतसे ५५ वर्ष पूर्व शक जातिकी पाचवी शाखामेसे एक कुषण शाखाके वीर पुरुषोने यहा विजय कर अपना शासनाधिकार जमाया। इस जीतनेवाले दलपतिका नाम कुजुल कस देव-पुत्र (Kujul kad phises) था। इसकी मुद्राएं खरोष्ट्री अक्षरोमे लिखी हुई मिली हैं[१]।

बादमे हिम कपिसस (Hima kad phises) का अधिकार देखा जाता है। इसके शिला लेखपर त्रिशूलका[२] चिन्ह है। यह महा-राज शैवधर्मावलम्बी थे।

प्रभाकर बर्द्धनका भी राज्य एक समय यहापर था। प्रभाकर बर्द्धनके बाद यह देश गाधार देशमे मिल गया।

६३० ई० मे इस देशको कपिश और श्वेत भारत भी कहा जाने लगा। ईरानी इतिहाससे यह जान पड़ता है कि काबुलके किसी आर्य राज-कन्यासे पारस देशीय रूस्तुमका विवाह हुआ था। इस समय यहा ईरानियोके प्रति प्रेम भाव था।

ईसवी पूर्व ३२७ मे मौर्य सम्राट् चन्द्र गुप्तने इस देशको जीता था। ई० पूर्व २०८ मे यहा राजा सुभाग सेन राज्य करते थे। बादमे

१ Indian Anti Quary 188 I P I 22, I २ शिलालेख का एक अंश उस पर लिखा है:...महरज रजति रजस, सर्व लोग इश्व रस, महीश्व रस हिमकासिसस" आदि। अनुवाद सं० में "महाराजस्य राजाधिराजस्य सर्वलोकेश्वरस्य माहेश्वरस्य, हिमकपिसस्य।"

महाराज अशोकके राज्य शासनमे इस देशके साथ-साथ इधरका समस्त प्रान्त आगया। उस समय यहा भी बौद्ध धर्म जोरोसे फैला, और समस्त प्रान्तमे बाहुल्येण बौद्ध धर्म पाये जाने लगे[1]। ई० पूर्व १६० से १४० तक यहा कुशन बंशियोका अधिकार जमा और उस समय बौद्ध मठ, विहार, तथा सघ राम प्रतिष्ठित हुए। इस समय धर्ममे बौद्ध और उपाधिमे वर्मा नाम रखते हुए भी यहाके जन समुदाय ईरानियो के ससर्गमे साधारणतः सलग्न थे। यहाके निवासी गौर वर्ण, गठीला शरीर, और उच्च देह धारी थे। यह देश ढंढक प्रधान था, और मेवाओ के लिये उस समय भी प्रसिद्ध था।

७८६ ई०मे × अलरसीद (मुसलमान) अब्बा सालासे काबुल भेजा गया। इसने यहा आकर सर्व प्रथम शाह विहार (बौद्ध मठ) को लूटा। इसके बाद यहापर ८५० ई० (१ शता०) तक गजनिका अधिकार रहा। इन समयो मे अनेक बौद्ध मठ, मन्दिर, और हिन्दुत्व चिन्ह मुसलमान सेनाओ द्वारा विनष्ट किये गये। काबुल पर गजनियोके प्रवेश और अधिकारमे काबुल निवासी राजाओके आपसी फूट ही कारण स्वरूप थे।

बादमें यहा मुसलमानी अत्याचारोको दूर करते हुए, स्थल पतिदेव (ब्राह्मण वश) ने राज्याधिकार किया। स्थल पति ब्राह्मणका ८८० से ९०० ई० तक शासन था। इस समय पुनः यहा हिन्दू धर्ममे अभय आया। इनके बाद सामन्त देवने ९०० से ९२० ई० तक राज्य किया। ९२० से

1—Epigrahia Indica, Vol. 11, P 473--51

× राज तरगिनी।

६४० ई० तक खर्मर्यक, (कमलु, कमलुकः, और तोरमाण) ने राज्य किया। ६४० से ६६० ई० तक भीमदेव का राज्याधिकार रहा। ६६० से ६८० ई० तक जयपालका राज्याधिकार हुआ। ६८० से १००० ई०, तक आनन्दपाल, और १००० से १०२१ ई० तक त्रिलोचनपालने काबुल पर अधिकार किया। बस, यही वंश काबुल निवासी हिन्दू धर्मी राजाके शासन काशेष शासक था। इस वंशने अपने अपने शासन कालमे बहुतसे कष्टोका सामना कर हिन्दुत्वको रक्खा। इस समय सर्वदा ही मुसलमानी उपद्रव यहा होते रहते थे। मुसलमान धर्मियोके प्रचार और तलवार जिधर तिधर अराजकता फैलाती और उपद्रव करती रहती थी। अन्तमे १०२१ ई० मे मुहम्मद गजनी द्वारा त्रिलोचन पाल जीवनके शेष समय तक विधर्मी यवनोसे कठिन वीरता पूर्वक लड़ते हुए भी, कई एक अतर्कित चालोसे पराजित हुए। तबसे आजतक यह देश मुसलमान धर्मियोके अधीनमे हुआ, और द्रुत वेगसे मुसलमानोने काबुलसे स्मार्त्त, तथा बौद्धादि हिन्दू धर्मके पुरातत्व,कला, आदर्श मंदिर, मठ, सङ्घ राम, स्तूप, मूर्ति, तथा पुस्तकागारोको विनष्ट कर, सर्वदाके लिये प्राचीन हिन्दू संस्कारोको निश्चिन्ह कर डाला।

पाणिनिः—

यह एक सस्कृत व्याकरण (अष्टाध्यायी), चरक तथा पिङ्गल ग्रन्थ के महान् रचयिता एव सुप्राचीन श्रुतिधर पडित हुए हैं। इनका जन्म स्थान गान्धार और कुभा के बीच शालातुर[1] नामक एक गावमें था।

---

[1] शालातुरीय शब्द अष्टाध्यायीमे भी आया है।
"तू दी शलातुर वर्मती कूचवा रालाङ्कक् छाढञ्यकः"—४.३.९४,
शालातुरीयः। शालातुर को आजकल "लाहूल" कहा जाता है।

इनके पिताका नाम देवल और माताका नाम दाक्षी था। माताके अनुसार इनको दाक्षी पुत्र या दाक्षेय कहते हैं, तथा शालातुरमे जन्म होनेसे ये शालातुरीय भी कहे जाते हें। इन्होने एक व्याकरण बनाया है, जिसका नाम अष्टाध्यायी या पाणिनि दर्शन है। यह आठ अध्यायोमें विभक्त है। इसी कारण इसको अष्टाध्यायी कहते हैं। निरूक्त रचयिता यास्कने इनका नाम सादर उल्लेख किया है, इससे ये यास्कसे भी प्राचीन हैं [२]। ये शैव धर्मावलम्बी थे। अष्टाध्यायी ग्रन्थके बनानेके समय इनकी शिव आराधना और शिव सेवरलाभकी कथा विशेष प्रख्यात है। इन्होने तक्ष शिलामे भी विद्याध्ययन किया था।

उस समयके उल्लेखनीय नगरादिकोके नाम पाणिनिने कुछ लिखा है,—जो महत्वके हैं, यथा:—कापिशी, फलनु, वर्णु, तक्षशिला, सुवास्तु वरण, पशु स्थान, वाह्वीकः साङ्कल, शाकल, पर्वत, मालव्य और क्षौद्रक्य। ये सब स्थान पजाबके पश्चिम और उत्तराशमे तथा अफगानिस्तान की पूर्व सीमाके बीचमे हैं। इनमे मालव्य और क्षौद्रक्यको छोड़ कर बाकी सबके सब प्राचीन जन पदोमेसे हैं।

---

२ कोई कोई व्याकरण के अतिरिक्त "जाम्बवती जटा काव्य" भी इन्हीं कीरचना बताते हैं।

"नमः पाणिनये तस्मै यस्य रुद्र प्रसादतः आदौ व्याकरण

"काव्यमनु जाम्बवती जयम्।"—क्षेमेन्द्र।

"शकरं शांकरी प्रादात् दाक्षी पुत्राय धीमते, वाङ्मयेभ्यः समाहृत्य देवीं वाच मितिस्थिति"॥ पाणिनीय शिक्षा।

पाणिनिने निम्नलिखित शाब्दिका चार्यों का नाम लिया है—

अत्रि, आङ्गिरस, आपिशाली, कठ, कलापी, काश्यप, कुत्स, कौण्डिन्य, कोरव्य, कौशिकः गालव, गौतम, चरक, चान्क्र वर्म, छागलि, जाबाल, तित्तिरि, पराशर्य, पीला, बभ्रु, भारद्वाज, भृगु, मण्डूक मधुक, यस्क, बड़वा, वरतन्तु, वशिष्ठ, वैशम्पायन, शाकटायन, शाकल्य, शिलालि, आदि।

पाणिनिका जन्मकाल।

पाणिनिका समय निर्देश करनेमें बहुतसे पाश्चात्य विद्वानोंने परिश्रम किया है। मैं उन सबोंके पूरे विवरण और अन्वेषणोंको यहाँ नहीं देकर केवल संक्षिप्त मत निर्णयको ही दे देना चाहता हूँ:—

नाम अन्वेषकोंके—	आधार	निश्चित मत
१—डा० बोथ लिङ्कस् (जर्मन) Dr. Both lingks,	कथा सरित्सागर	ई० सं० से ३५० वर्ष पूर्व।
२—अध्यापक लासेन् (जर्मन) Prof. Lasen	"	"
३—डा० बोह्वरस् (जर्मन) Dr. Buhbres,	"	"
४—अध्यापक, पिटर्सन, Prof Petersons.	"	"
५—मैक्स मूलर, Mr. Maxmullers	कथा सरित्सागर और षड़दर्शनके इतिवृत्त।	पहला मत ई० सं०से ४०० वर्ष पूर्व, दूसरा मत ७०० वर्ष पूर्व।

नाम अन्वेषकोंके—	आधार	निश्चित मत,
६ पं० तारानाथ तर्क वाचस्पति	तिब्बतीय इतिहास	ई० स० से ५०० वर्ष पूर्व।
७—मि० रानाउड़ (Ranaud)	हू-येन-चंग,	१४० ई०
८—मि० स्टैनिस लौस जूलियेन (Stanis laus Julien)	स्वतत्र	ई० सं० से ४०० वर्ष पूर्व।
६—गोल्ड स्टूकर (Gold Stukar)	स्वतन्त्र	७ वीं, सदी पूर्वमें।
१० पिशेल (Prof. Picsell	"	६०० वर्ष पूर्व।
११ सिलभेन लेभी (Sylven Levi)	उद्भट कल्पनासे	ग्रीक सभ्यताके बाद
१२ डा० लिबिक Dr. Liebich,	अष्टाध्यायी	ई० सं० से ३०० वर्ष पूर्व

अभीतक जितने भी अन्वेषक इस सम्बन्धमें कार्य कर चुके हैं, उनमें से बहुमत द्वारा ईसवी सवत् ६०० से ५०० वर्ष पूर्व तकके बीच पाणिनिका होना स्थिर हुआ है, किन्तु यह मत नितान्त संतोषजनक न है। पाणिनिके अष्टध्यायी सूत्रका आधार ही पाणिनि कालका वास्तविक निरूपक हो सकता है। पाणिनिके समय काम्बोज,[१] यवन,[२] सकला[३]

१ काम्बोज, ४।१।१७५।
२ यवन, ४।१।४।
३ संकलादिभ्यश्च, ४।२।७७।
४ पर्श्वादि यौधेयादिभ्योऽण्‌ ञौ, ५।३।११७। (पर्शु, असुर, राक्षस, वाह्लीक, वयस, वसु, मरुत्, दशार्ह, पिशाच, अशनि, कर्षापण, इति पर्श्वादि।)

दि, पशु और असूरादि जो देश तथा जाति वाचक नाम आये हैं, ये इनके ऐतिहासिक महत्वके लिये असाधारण न हैं। ईसवी पूर्व १२०० से ६०० वर्ष तक ग्रीक लोगोने विशेष उन्नति की थी, और इन्हें ही यवन कहा जाता है। पाणिनिमें यवन शब्दका उल्लेख देखकर पाणिनिको इससे पीछेका मानना उचित बोध होता है।

यवन लिपिका प्रचार ६०० ईसवी पूर्वके बादमे हुआ है, और पाणिनिने लिपि वाचक-यवन शब्दको कहीं भी नहीं दिया है, अपितुयवन शब्द यहाँ जन वाचक ही है। इसी प्रकार पाणिनिने बौद्ध धर्मका भी कहीं नाम न लिखा है, और संस्कृत भी भाषा वाचक शब्दमे व्यवहृत नहीं है। इससे पाणिनि अवश्य बुद्धके पूर्व हुए ऐसा जान पड़ता है। सकल नामक नगरीको अलेकजेन्डरने ईसवी सवत् पूर्व ३२७ मे जीता था, एव पशु "पर्सियन" और असुर "असीरियन" होनेके कारण विषय कुछ स्पष्ट मार्गपर आ जाता है। असुरोका राज्य काल ईसवीसे पूर्व १८३० से ५३८ वर्ष पर्य्यन्त था। इसी प्रकार पशुका राज्य काल भी ईसवी पूर्व ८५० से ३२६ वर्ष तक रहा। दूसरी बात और भी एक है कि शक राज्यका काल ईसवी पूर्व ७०० से-५५० तक निश्चित रूपसे माना गया है, और पाणिनिने कही भी शक राज्यका उल्लेख न किया है। इससे अवश्य असाधारण रूपसे निश्चय होता है कि पाणिनि शक राज्यसे पूर्व, और असुर तथा पशु राज्यके पीछे लगभग ईसवी संवतसे ६०० वर्ष पहले ही हुए हैं।

काफिरस्थान (Kafiristan)

भारत वर्षकी उत्तर पश्चिम सीमा और हिन्दू कुश पर्वतके मध्य का एक देश। वर्तमान मान चित्रके ३४° ३०′ और ३६° उ०, तथा ७० से ७१° ३०′ पू० रेखा पर अवस्थित यह लगातार पूर्व और पश्चिमके ३५° १०′ उ०चिन्ह तक फैला है। इस प्रदेश के अन्दर ५,००० स्कायर मील भूमि है। इस देशके पश्चिम सीमान्त देशपर अफगानिस्तानकी अलिसाङ्ग नदी, और सीमान्त पर कुनार नदी है। यहाके रहने वाले उद्धत स्वभाव सम्पन्नहोते हैं, और इन्हें प्रायः काफिर तथा सियाहपोश कहकर मुसलमान सब सम्बोधित करते हैं। यहा १८८३ ई० से ही अंग्रेजोका जाना आना आरभ हुआ है। इसके पूर्व यहा किसी भी ऐतिहासिकोका आन जान इस देश सेन था, और अभी भी यहाके सभी स्थानोमे किसी बाहरीका जाना दुःसाध्य है। यहांके सम्बन्धमें अभी जो बाते कही जाती हैं, वे

विशेष विश्वसनीय नहीं हैं। कारण है कि यह देश मुसलमानी धर्मका बहुत वर्षों तक पूर्ण विरोधी था, और अभी भी जहा तहा हैं ही।

मुसलमानी धर्मके विरोधके ही कारण इन्हें मुसलमान धर्मियोने काफिर कहा है, और अंग्रेज एतिहासिक गण प्रायः इन्ही लोगोके कथनोका आधार लेकर काफिरस्तानका इतिहास लिखा है, अतएव वर्त्तमान उपलब्ध इनके इतिहास भ्रमसे रहित न हैं।

पुरानी कीर्त्तिः—

यह स्थान महाभारतमे वर्बर × नामसे ख्यात है। वास्तवमें यह नाम यहाँ वालोके उद्धत गुणके कारण ही पड़ा है। यहा ईसवी संवत् की १० वीं, शताब्दी तक सर्वत्र पूर्ण हिन्दू धर्म और हिन्दू सभ्यता (कुछ व्यववहारिक भेदसे) थी। बादमें यहासे द्रुत वेगसे हिन्दू सभ्यता मिटाई गई। १७८३ ई० में एक अग्रेज गजनी आकर यहाँका थोड़ा सा देश निरीक्षण किया था, और उस समय भी यहां हिन्दू गृहवासी नागरिक-बणियोको व्यवसाय करते देखा था।

इस प्रदेशमें सर्व प्रथम एक • ब्राह्मणके ही द्वारा राज्य स्थापित हुआ था। रामायणके अनुसार यह देश उस समय कैकेय राजासे शासित था, और इस समयके काफिरस्तानके कुछ भूमाग उस समय

+ "किराता वर्वराः,सिद्धा वैदेहास्ताम्र लिप्तकाः उण्ड्राम्लेच्छा सैसिरिध्राः पार्वतीयाश्च मारिप ॥" म० भा० भी० प० लो० ९५७॥ वामन पु० १३।३६। मार्क पु० ५७।३८। मत्स्यपु० १२०।४०। इन सबोंमें इस देशका वर्णन है।

" वर्व्वरावन्त्य पाञ्चालः टाक मालव कैकया." (प्राकृत चन्द्रिका)

※ 'टाईम्सकी लिखी "हिस्ट्री आफ इण्डिया" के मतसे।

कैकेय राज्यमे शामिल था। पश्चात इस देशमे अराजकता फैली जिसे महाराज भरतने दमन कर अपने पुत्रको यहाँका शासनाधिकारी बनाया। पीछे महाराज पाण्डवसे यह शासित होकर, महाराज अशोकसे लेकर कनिष्कतक यह भारत साम्राज्यके अन्तर्गत था। उस समय यहा भी बौद्ध धर्मजोरोमे फैला था, और सैकड़ो बौद्ध मठ तथा स्तूपादि यहाँ निर्माण हुए थे, जिनके भग्न खडहर अभी भी बहुतसे देखे जाते हैं। महाराज कनिष्कके बादसे यह प्रदेश एक तरहसे आजतक स्वतन्त्र ही है।

यह स्थान दुर्गम है, और यहाँसे लौटकर जाना बहुत ही कठिन एवं दुःसाध्य है। यहाँ की भाषाके साथ अरबी, फारसी और तुर्की भाषाका लेशमात्र भी सम्पर्क नही है। संस्कृत भाषाके साथ ही इस भाषाकी घनिष्टता देखी जाती है। यह समस्या समस्त ऐतिहासिकोके लिये जटिल पेचिली होकर महान् उलझन उत्पन्न करती है। प्रायः ऐतिहासिकगण इन्हें स्वतन्त्र जातिके रूपमें भारतीय (हिन्दू) जातिके ही अन्तर्गत रखते हैं। १८६४ ई० तक ये लोग मुसलमान नहीं हुऐ थे। अब यहा बहुतसे मुसलमान भी हो गये हैं। १८८३ ई० मे सर्व प्रथम इन लोगोमेसे किसीकी सहायता प्राप्तकर मि० डब्ल्यु मनेयर साहब यहाँ गये थे, उस समय यहाँ कतार, गम्भीर, देलहुलज, अरनस, इशुरम, अमीसोज, पण्डित, और बैगल आदि नामके स्थान थे।

स्वभाव तथा आचरण:—

मुसलमानोसे इनकी सर्प और नकल-सी घोर शत्रुता है। इनमेंसे जिसने अपने जीवनमे किसी भी उपायसे एक भी मुसलमानोको कहीं न मार सका, तो वह व्यक्ति समाजमें हेय, निन्दनीय, तथा कुल कलंक गिना

जाता है। ये लोग सदा मुसलमानोके बधार्थ इधर उधर छिपे रहते हैं, और मुसलमानको देखते ही उनपर टूट पड़ते हैं। इनमे बहु विवाह प्राय: नहीं है। ये लोग हलाली माँस छूते तक नहीं, बस एक ही झटके से मारा गया मांस इनका खाद्य, और अंगुरके बने मद्य प्रधान पेय है। कोई कोई एक मटका तक (एक मटकेमे १५ सेर) शराब पी जाता है। दासत्व प्रथा यहा जोरोकी है, और हारे हुए शत्रुओकी स्त्रिया भी दासी बनाई जाती हैं। स्त्रियोको व्यभिचार दोषके लिये सामन्य दण्ड मिलता है, किन्तु पुरुपोको अधिक दण्ड भोगना पड़ता है।

इनके एकमात्र पूज्य देवता 'इम्र' (इन्द्र) हैं। इम्र देवताका मंदिर बना रहता है, और मदिर भारतीय ढगके होते हैं। इसमें एक प्रस्तरकी मूर्त्ति प्रतिष्ठित रहती है। इम्र देवका पुजारी एक भारतीय ब्राह्मणके सदृश स्वतन्त्र जाती है। बच्चोका मुंडन संस्कार ये लोग विशेष आडम्बर तथा श्रद्धासे करते हैं। जाति देवता (कुल देवता) स्थान देवता (ग्राम देवता) आदि अनेक देव-देवियोकी पूजाये भी इनमें प्रचलित हैं। सूर्य देवताकी पूजा और नमस्कार ये बड़े नम्र होकर करते हैं।

यह स्थान अतिशय मनोहर है, तथा यहांके निवासी पुरुष और स्त्रिया लाल शरीरके सुडौल और सुन्दर होते हैं। यह सघन वृक्ष मालाओसे अच्छादित प्रकृतिका रमणीय उपवन समझ पड़ता है। यह सम्पूर्ण देश तीन उपत्यका भूमिसे बटकर प्रधानत: तीन जातियोके भेदमें भिन्न-भिन्न हो गया है। इन तीन जातियोके नाम भी निम्नलिखित तीन ही हैं:—रामगल, बैगल, तथा वासगल। बैगल सबसे पराक्रमशाली, और उपत्यकामे भी बड़ा है। ये लोग इस समय किसीके भी अधीनमे

नही हैं, और इस समय किसी भी बाहरी वातावरणसे इनका सम्बन्ध नहीं। वर्तमानमे बाहरके किसीपर इनका विश्वास भी नहीं है। ऐसी धारणा मुसलमानोसे सर्व प्रकार बचनेके लिये ही इन्होने बना ली है।

आरमेनिया

यह काकेश पर्वत और कृष्ण सागरके उत्तरमे विद्यमान था। वर्त्तमान समयमे इस देशको मानचित्रके अक्षांश ३७° ३०′ से ४१०° ३०′ उत्तर तथा द्राघ्री ३७०° से ४६ के पूर्व भागतक इसकी स्थिति भौगोलिक द्वारा ठहरायी जाती है। यह देश ईसाकी ११ वीं शताब्दी तक एक उन्नत हिन्दू उमनिवेशकी श्रेणीमें था। ईसाकी पाँचवीं शताब्दीतक यह विद्या और सुसभ्यतामे उच्च गिना जाता था। यहाँ एक बड़ा-सा विश्व-विद्यालय भी था, जिसमे हजारो छात्र संस्कृत विद्याका अध्ययन करते थे। पौराणिक-कालमे इस देशका नाम हिरण्मयवर्ष था×। पाश्चात्य देशीय अन्वेषक विद्वान् मि० विलसन साहबने इसका पुराना (हिन्दू-धर्मी-समयका) नाम ‘पारक्षेत्र” ठहराया है। इस समय जो यहाँ पेरेङ्ग नामका सुन्दर पहाड़ देखनेमे आता है, उसका संस्कृत भाषामे पतङ्ग गिरि नाम है। यही नाम वहाँ हिन्दू-सभ्यताके समयमे प्रचलित भी था। यहाँकी अरक्सस नदीका भी पुराना संस्कृत नाम अरुणोदय था। इस नदीके तटपर यहाँवाले पुराने ससयमे बड़ी श्रद्धाके साथ सूर्य पूजा करते थे। पुराने समयके बने हुए घर भारतीय ढङ्गके कोणाकार हैं।

इस देशके अन्दर अनेक स्थानोमें अभी भी, खण्डहरोके रूपमे पुराने

× भ० पु० अ० ४२ ॥ Ariana Antiqu, P, 149,

हिन्दू देव मन्दिरें देखनेमे आते हैं। ईसाकी ४ थी, शताब्दी तक यहाँ मन्दिर निर्माण हुए हैं, और वही समय यहाँके लिये हिन्दुत्व-विकाशका शेषान्त था।

ईसाकी ४ थी, शताब्दीमें यहाँपर ईसाई पादरी मण्डली आई। पहले पहले इन लोगोने यहाँवालोसे बहुत ही सद्भावका प्रदर्शन किया, और इनमें दूध और बताशेकी तरह घुल-मिल गये। पीछे इन्होने अपनी स्वाभाविक चालोसे इनमे प्रतिपत्ति स्थापित करनेकी कुटिल चाले आरम्भ कर दी। इसमे उन्हे सफलता भी मिली, और पादरियोकी धाक वहाँ बैठ गयी। बस, फिर तो उन्होने अनर्थ करनेमे समयतक न लिया, तथा इसी ४ थी, शताब्दीसे आरमेनियाके सुविशाल, भव्य, सुदृढ और सुन्दर शिल्प रचना-नैपुण्यसे युक्त हिन्दू मन्दिरें गिराये जाने लगे। जिन मन्दिरोने सहस्रो वर्षतक आरमेनियन जनताकी भक्ति, श्रद्धा एवं ज्ञान-गरिमाको प्राप्त कर ससारमे अपनी मर्यादा और सुनाम पाया था, वे सब दिन-प्रतिदिन पादरियो द्वारा साग और भाजीकी नाईं, धराशायी होने लगे। इसी प्रकार यहाके हिन्दू-सस्कृति मूलक, मनोहर तथा ज्ञानके भण्डार साहित्य भी पादरियो द्वारा समूल विनष्ट कर दिये गये।

आज खोरेनवासी मूसाके इतिहासमे इसके वे पुराने अनन्त साहित्य-भण्डारके अनमोल ग्रन्थोमेसे केवल मात्र २० पृष्ठ किसी प्रकार बच गये हैं, जो ससारको देखनेमे आता है।

तातार (Turkistan)

यह देश मुख्यतः दो भागोमे विभक्त है। एक है पूर्वी तातार (Estern turkistan) और दूसरा है पश्चिमी तातार (Western turkistan)। इसमे पश्चिमी तातारका बुखारा नगर बहुत प्रसिद्ध है। पूर्वी तातार चीन-शासनके अधीन था और पश्चिमी रूसके अधीन। इस समय यहाँपर सिन्धप्रान्तीय शिकारपुर जिलेके हिन्दू विशेष सख्यामे व्यापारी हैं। बुखाराका व्यापार एक प्रकारसे हिन्दुओके ही हाथमे है। चीन निवासियोके संसर्गसे मुसलमान रहते भी यहाँवालोपर बौद्ध सम्प्रदायके अनेक संस्कार आ गये हैं।

प्राचीन इतिहासः—

यहाँपर ईसाकी ८ वीं शताब्दीतक बौद्ध सम्प्रदाय बलवत्तर था, और भारतवर्ष उन लोगोसे पूज्य समझा जाता था।

शास्त्राकी उन्नति बहुत अधिक दशामे आ पहुँची थी, और यहाके प्राणीमात्र दयाशील थे। राज्य सुशासित था, चोरी या लुच्चई बिल्कुल नहीं था।

यहाके सम्पूर्ण निवासी आर्य थे, और वे सब अपने नामोके अन्तमें आर्य शब्द आवश्यक रूपसे व्यवहार करते थे, जैसेः—आर्य रान्न (Arya rannus) आर्य वार्येन्स (Arıa Vargens), आदि। इन लोगोकी बास भूमिके नाममे भी प्रायः आर्य शब्द लगते थे, और उसको आर्याना (Arıana) कहा जाता था। इस प्रकार आर्य शब्द का विशेष व्यवहार होनेके कारण यह देश आर्य कहलाने लगा, पीछे यह आर्य उच्चारणके कुछ परिवर्तनसे (आर्य Arya का) एरियन (Arıan) कहा जाने लगा, और फिर एरियनसे ईरान (Iran) हो गया है।

ईसाके जन्मसे लगभग ३५० वर्षपूर्वकी प्राचीन मुद्राये और खुदी हुई लिपियोमे यहाके सर्व प्रथम राजाका नाम आर्यशिर लिखा है। उक्त राजाके सेनापतिका नाम एरान था। आजसे ५०० वर्ष पूर्व इस आर्य नामक देशको एरानके बदले इरान कहा जाना प्रारम्भ हुआ।

इतिहास—

यहाँकी उत्तरीय दिशाके राज्यको मद्रराज्य, कहा जाता है, तथा ई० स० ७३० वर्ष पूर्व अरब मनिस मिदिया साम्राज्यके प्रथम सस्थापक हुए। इस वंशका शासन ई० पू० ५५६ वर्ष तक रहा। पीछे ई० स० पू० ५५६ से लेकर ५३० ई० स०। पूर्वतक कुरूस (Cyrus) वशियोंका राज्य हुआ। इस वशने मिदिया राज्यको खुब बढाया और

ग्रीस, बाबिलनसे लेकर ओकूसनदीके किनारे, तथा आफगान तक अपने अधिकारमे कर लिया। ई० स० ५२४ वर्ष पूर्व कुरूस अपने दो पुत्र शमर्दीय (Smerdis) तथा कम्बुजीय (Cambuy Sis) को छोड़कर मर गये। बापके मरनेपर उक्त दोनो भाइयोमे राज्यके लिये मनोमालिन्य उपस्थित हुआ, और कम्बुजीयने छिपकर अपने बड़े भाईको मार, राज्याधिकार कर लिया।

कम्बुजीयने लोभवसात मिश्रपर चढाईकी और, मिश्रको जीत लिया, इधर इसकी अनुपस्थितिमे गौमाता नाम धारी किसीने पारस राज्यपर अपना अधिकार जमा लिया। इस बातको सुनकर कम्बुजीय देश लौट रहे थे, कि रास्ते हीमे उनकी मृत्यु हुई। कुछ दिनोके बाद कम्बुजीयके सगोत्रोमेसे सात व्यक्तियोने ई० स०से ५२१ वर्ष पूर्व षड़यन्त्रकर गौमताको मारडाला, एव दरायूस (Darius) को राज्याभिषिक्त किया। दरायूस बुद्धिमान और साहसी सुधारक थे। कुछ दिनो तक सिन्धु प्रदेश भी इनके अधिकारमे आया था, किंतु कौशल नरेश प्रसेनजितने ई० सं०से ४७८ वर्ष पूर्वमे सिन्धुदेशसे उक्त अधिकारको शीघ्र हटाया। ४८५ ई० स० पूर्व दारायूसका शरीरान्त हुआ।

दारायूसके बाद उनका बड़ा पुत्र क्षयार्षा (Xcrxes) ने ई० स० ४८५ से ४७९ ई० पूर्वतक राज्य किया। बीचमे कुछ राज्य ग्रीके हत हो जानेसे ई०स० पूर्व ४६४ से ४२४ ई०पूर्वतक अर्त्तक्षर्ष (Art-xcrxes) राजा बने। बीचमे यहाँ राज्य विद्रोह मचा।

अर्त्तक्षर्ष विलासी और कायर राजा थे।

ई० सं० से ४२३ वर्ष पूर्व तृतीय दारायूस राज्यपर बैठे। ई०स०

पूर्व ३६१ मे द्वितीय अर्त्तक्षर्ष और ३३८ ई० पूर्वमे तृतीय दारायूस यहाके राजा बनाये गये।

पारस्य—

राज्यशासन अच्छा न होनेके कारण, ये (३ दारायूस) समस्त पारस्य राज्य सूर्यके अस्ताचल बने, और इसी समय ई० स० से ३२४ वर्षमे दिग्विजयकी इच्छासे अलकूजेएडरने ग्रीकमें शान्ति स्थापित कर,एशियाकी ओर यात्राकी। इस विजय यात्रामे अलेक्जेएडर की अध्यक्षतामे जो सेना भारत मे आई,उनके द्वारा भारतीय आचारके बहुत कुछ सदाचार मूलक संस्कार ग्रीक गये। अलकजेएडरके प्रधान सेनापति महाबीर सिल्यूकस मौर्य राजा चन्द्रगुप्तके साथ युद्ध करने आ रहे थे, किंतु बीचमें ही सेनापतिको अपना विचार बदलनेको बाध्य होना पड़ा, और चन्द्र गुप्तके राजनैतिक आचार्य महाराज चाणक्यकी कूट-मंत्रणाके प्रखर प्रतापसे अप्रतिभ सिल्युकसने अपनी परम प्यारी कन्या का विवाह महाराज चन्द्रगुप्तसे कर सन्धि दृढ़कर ली।

ई० स० के २८० से २६१ वर्ष पूर्व अन्तिओक (Antiocus) राजा बने। यहराजा भारत वर्षके साथ अत्यन्त सद्भाव बद्ध था। महाराज अशोकके बौद्धधर्म प्रचारके साथ इसकी पूर्णसहानुभूति एव श्रद्धा थी। इस राजाके बाद अनेक घटना और नृपति परिवर्तन मय इस प्राचीन ऐतिहासिक राजधानीसे हिन्दुत्व भाव निदर्शक प्रकाश प्रतिदिन क्षीण पथपर ही आते आये।

वर्त्तमान समयमे यहाँके करमान प्रातमे थोड़ेसे हन्दुओके वास हैं,

और यिहादमे प्राय: २००० घर प्राचीन अग्नि पूजक पारसियोंके निवास शेष रह गये हैं। शेष स्थानोंमे यहूदी, ईसाई तथा मुसलमान धर्मी हैं।

धर्म और भाषा तत्व---

यह पहले ही कहा जा चुका है कि पारस्य देशमें वैदिक धर्म था, पश्चात् वहाँपर मज्दीय धर्मका आरम्भ हुआ, और उसी वेदके आधारपर गाथा, अवस्ता, वन्दीदाद आदि अनेक प्रकारके ग्रंथ तथा सूक्तियाँ बनाई गईं।

अवस्ताकी अनेक गाथाओंमे वैदिक-देवता, इन्द्र, मित्र, वरुण, ऊषा आदिके प्रति स्तुति और प्रशंसायें हैं।

सस्कृत तथा वैदिक भाषाके साथ अनेक अंशोमें यहाँ की भाषाका मेल है। उच्चारण किन्तु अवश्य यहाँ भिन्न प्रकारके रहे हैं, यदि उच्चारण भेदको सुधार दिया जाय, तो भारतीय सस्कृति एवं वैदिक भाषासे पारस्य देशकी प्राचीन (जेन्द और पल्हवी) भाषाका बिल्कुल सादृश्य और एकत्व है।

तुरकी (Turky)

यह देश दो भागोंमें बंटा है। एक एशियामें और दूसरा यूरोपमे। इन दो भागोंमे एशियाका भाग ही बड़ा है।

इसके मुख्यतः छः भिन्न-भिन्न प्रदेश हैं, जो अपने-अपने गौरवके लिये एक-एक विशेष महत्व रखते हैं। उन छहो प्रदेशोके नाम निम्न हैं:—एशिया माईनर, सिरिया, आर्मेनिया, कुर्दिस्तान, अलजेजिराह, मेसोपोटामियाँ, इराक, (अरबी)।

एसिया* माइनर—

यह प्रदेश यूरोप और एसियाके बीच मानो एक स्तम्भ या पुल सा स्थित है। पूर्व और पश्चिमके निवासियोंका यह प्रधान युद्धस्थल

---

* इस देशको भारतवासी जम्बु द्वीप कहते थे। एसिया शब्द यवन भाषाका है। मध्यकालमें इस देशको तुरष्क कहा जाने लगा।

(देवासुर संग्राम) रहा है। यह सीमान्त प्रदेश अनेक कालतक वैदिक धर्मी आर्योंका प्रधान गढ़ था। भाषा, सभ्यता और आचार आदि यहांके भी और आर्योके ही सदृश थे। जरथुस्त धर्मके प्रचार-कालमें इस देशसे और समस्त तुरुष्कसे वैदिक आचार, धर्म और सभ्यतामें परिवर्तन हो आया, किन्तु अनेक अंशोमे वैदिक संस्कार अवश्य साधारण भी नहीं था। ईसवी संवतकी ११ वी, शताब्दीमें यहांसे और उपरोक्त तुरुष्कके सभी देशो से, आर्यके आन-जान रुक जानेके कारण हिन्दुत्वका प्रभाव नष्ट-सा हो गया। यहांके एक शिला लेखमें हिटे राईट तथा मिटानी देशके दो राजाओकी सन्धिमें प्रतिज्ञार्थ इन्द्र, वरुण तथा नासत्य देवताका नाम है, और उनके नामसे सन्धिकी दृढ़ताके लिये शपथ लिखा है।

इराक—

यहांके लोग इस समय अरबी बोलते हैं। मुसलमान बादशाहोके समय यहांके लोग भारतमे आकर सेनामें भर्ती होते थे। यहांके बगदाद और बसरा नगरमे अभी भी हिन्दू मन्दिरे हैं।

बाबा नानकका मन्दिर—

६१७ हिजरीमें बाबा नानक बगदाद गये थे। जहांपर बाबा ठहरे थे, वहांपर अभी भी बाबा नानकका एक मन्दिर है, और उसमें एक शिलालेख तुर्की भाषामें भी, बाबा नानकके धर्म-प्रचार सम्बन्धी घटनाओंका लिखा हुआ है। एक घर नानकपंथी सैयद बंश इस समय भी वहां है। मन्दिरके पुजारी भी वहांके यही हैं ×।

× Medievol mystısısm of India, by X, M, Sen.

अरब (Arabia)

मुसलमान धर्म प्रवर्तक मुहम्मद साहेबके जन्मसे पहले (५७० ई०) तक अरबवाले हिन्दू-संस्कारयुक्त थे। इनमे नक्षत्रोकी पूजा प्रचलित थी। इनमेंसे हिम्यार नामकी जाति प्रधानतः सूर्य-उपासक[१] सम्प्रदायकी थी। सूर्य-पूजा ही इनका एकमात्र मुख्य धर्म था। केनाना जाति चन्द्र उपासिका थी, तापी जाति अगस्त्य उपासिका थी, और मिसाम जाति वृषकी उपासनामे संलग्न थी। यहांके यमन प्रदेशमे सबा नामका एक बड़ा नगर था, और वहांपर शुक्र ग्रहका एक बृहद् मन्दिर था। उन सबोमे ग्रहगणकी उपासनाये हुआ करती थी। "अल्लाट्", "अलउजा" और

१—नुर-उल्लाह, = "Laghit of God"। २—"एलिलात"।

विशेष विवरण Royal Asiatic Society (Bombay Branch) Vol XII, (18-76) में पढ़िये।

"मेनाट" नामधारिणी तीन देवीके नाम कुरानमे भी पाये जाते हैं। नखले नगरमे अल्लाट देवीका मन्दिर था, इसे वहाँकी ताकेफ जाति पूजती थी। पीछे इस मन्दिरको मोगरोंने तोड़ कर ध्वस कर डाला। कोराइस और केनाना जातिकी अल उजा देवी कुलदेवीके रूपमे थी। इस देवीकी पूजा वृक्षोपर होती थी। इसके स्थानपर लाल रंगसे रगकर नीचे मिट्टीके पिण्ड बना दिये जाते थे। मेनाट देवी और हुदसायल देवी ख्वाजा लोगोकी कुल-देवी थी। इन सब देवियोंके अतिरिक्त और भी कुल-देवियाँ यहाँ पूजी जाती थी, जिनमे—कोरायस, आसेव, देव, और नैला देवी प्रसिद्ध हैं। ईरान-की खाड़ीमें रहनेवाली निमिस नामकी एक अरब जाति सूर्योपासना करती थी। उपरोक्त देव तथा देवियोको पूजते हुए, भूत, प्रेत, पिशाच, डाकिन, योगिन, आदियोको भी, यहाँकी पुरानी जातियाँ श्रद्धापूर्वक पूजती थीं।

सामुद्रिक विद्या, इन्द्रजाल, फलित ज्योतिष, और भौतिक विद्याके यहाँवाले पहले अनन्य भक्त थे। ज्योतिष शास्त्रका यहाँ यथेष्ट प्रचार था, और मान मन्दिर तथा नक्षत्रादिज्ञानके लिये बड़े-बड़े यहां पर यन्त्रबने थे।

उस समय भारतवर्षके साथ अरबोका घनिष्ट सम्बन्ध था, और व्या-पारार्थ आना-जाना बहुत अधिक था। मदीना शहरका उस समय (५१७ ई०) "यात्रेव" नगर नाम था।

मुहम्मद साहेब—

५७० ई० में मुहम्मद साहेब यहाँ जन्म लिये थे, उस समय जरथुस्त्र धर्मका हिन्दू संस्कार मूलक शिथिलप्रचार था। मुहम्मद साहेबने अपनाधर्म चलाना प्रारम्भ किया। यह मत बाहुबल तथा शस्त्रकी सहायतासे बढ़चली, और धीरे-धीरे यहाँसे बची-बचाईहिन्दू-सभ्यताके सस्कार भी मिटादिये गये।

मुसलमान देशोंमें हिन्दू तीर्थ

हिंगुलाज देवी—

विलुचिस्तानके मकरान प्रदेशमें इस हिन्दू देवीकी शक्ति-पीठ विख्यात है। पौने चार फीटके ऊँचे पर्वतको दो भागोंमे बाँटकर एक नदी बह रही है। इस नदीका नाम आज हिंगुलाज है, और इसीके किनारेपर हिंगुल देवीका पवित्र स्थान है। मन्दिरमे एक ओर आशापूर्णा देवीकी प्रतिमा है। मकारान प्रदेशमें और भी बहुत-सी शक्ति-पीठें हैं। उनमें एक ओर नानी देवीका मन्दिर अति पवित्र और तीर्थ माना जाता है। मकरानके अतिरिक्त ईरान, मेसोपोटामियाँ आदि जगहोंमे नानी देवीका स्थान दर्शन योग्य है, जहाँ भारतीय साधु तीर्थ करने जाते हैं।

मारुति मन्दिर—

यह विशाल मन्दिर अदन (Adne) मे है। इसके एक भागमें बजरङ्ग-विहारीजीकी प्रतिमा है। मन्दिर चित्ताकर्षक, सुन्दर, और आधुनिक हैं। इसी प्रकार कुर्द, सिरीया, अफगानिस्तान आदिमे भी बहुतसे तीर्थ-क्षेत्र हैं। गोरखपन्थी साधु तथा मलुकदासके उपास्य-तीर्थ भक्तोंके लिये इन्हीं मुसलमान देशोमें हैं।

मिश्र देशमे भी बहुतसे हिन्दू मन्दिर और सूर्य-मन्दिर तथा प्रतिमाएँ, हैं। साथ ही जहाँ-जहाँ सिन्धके हिन्दू व्यापारार्थ गये हैं, उनमेंसे बहुतोंने अपनी ठाकुरवाड़ी और शिवालयादि भी बनवा लिये हैं। इस समय भी मुसलमान देश हिन्दू चिन्हसे निश्चिन्ह नही हैं, और सूक्ष्म विवेचन बहुतसे सस्कार दिखा देते हैं।

इसमे एक बात ध्यान रखने योग्य यह है कि देवोके प्रायः सभी नाम (केवल सूर्य पुत्र शनिको छोड़कर) सूर्यके ही हैं ।×

त्रेता और द्वापर युगमे यहापर विवस्वान पुत्र मनुने राज्य किया ।

राजा हाम का 'चौथा पुत्र हान (Han) और हानका दूसरा पुत्र अनमके वंशधरोने यहापर सौर नगर (Holiopolis) बसाया, और सर्वत्र जोर सोरसे सूर्य पूजाका प्रचार किया । इसका राज्य विस्तार सिरीया तक हुआ, और वहातक भी इसने सूर्य-पूजा चलाई । देवियोमें यहापर पारस्त (Parsht) की पूजा होती है । यह देवी सूर्य कन्या मानी गई है ।

धर्मतत्व—यहापर ईश्वरका अर्थ ब्रह्म है इसे मिश्री भाष में 'आत' (Path) कहते हैं । यहाँ देवोके ३ विभाग हैं, फिर इन तीनोकी एक एक स्त्री और एक-एक पुत्र लेकर पूरे ६ विभाग होते हैं ।

यहा भी भारतीयोकी ही तरह सूर्यके बारह (द्वादशादित्य) समाज हैं । यहाके गाव प्रायः देवताओके नामपर ही होते थे, जैसे अनहुर

×(Path या Vulcan Ram, या Hellios, or Sun, Son or Shu, Saturn, (शनि) or Seb, osisis or Hishar. Typhon or Seti and Horns or Hor)

अंगरेज लोग मिश्रके अस्तित्वको पहले साम्प्रदायिक सकोचके कारण नहीं मानते थे—कारण यह था कि एक असार (Usher) नामके पादरीने ईसासे ४००४ पहले ही पृथ्वी बनी, और २३४८ वर्ष पहले जलामय था, ऐसा कहा था ।

× १० वां अध्याय Genesis, chap ×

(Anhur) थिनिसेर, ओसरिस, (Osiris), अविडस, (Abydos) और आस आदि।

इस प्रकार मिश्र देशके पुरातन इतिहासके देखनेसे पता चलता है कि मिश्र-निवासी अवश्य आर्य थे। और यहाकी वसुन्धरा पूर्ण आर्य सस्कृतिका रसास्वादन कर चुकी है, खेद है कि यहाका भी एकमात्र पुरातन विशाल ग्रन्थ सग्रह (पुस्तकालय) को मुहम्मदके उत्तराधिकारी मदीनेका दूसरा खलीफा उमरने ६४० ई० मे आग लगाकर भस्मीभूत कर डाला। फिर आज इसके क्रमबद्ध इतिहास कहासे मिलेंगे ?

यूनान (ग्रीक Greeks and Bactrio)

यह यूरोपकी दक्षिण पूर्व सीमाका एक राज्य, और बालकन प्राय द्वीपका अन्तिम दक्षिण भाग है। इसके उत्तरमे यूरोपीय तुरकस्थान और पूर्व दक्षिण तथा पश्चिममे ईजियन, मेडिटेरिनियन एव इयोनियन सागर है। यह राज्य सुप्राचीन कालमे प्रतिष्ठित था, और संसारके समस्त सभ्य जन पदोमे एक अतिशय उन्नत जनपद था। पुराने समयमे अक्षा० ३५॰ से ४० उत्तरके मध्यमे स्थित था। इसकी उत्तरी सीमापर इलिरिया और मक दुनियाका राज्य था।

ईसवी सवत् के आरम्भ होनेसे १८५६ वर्ष पहले ग्रीस राज्यका इतिहास आरम्भ होता है। ग्रीसवाले विशुद्ध आर्य वशज हैं, और इनके अभीतकके प्राप्त साहित्य तथा विविध आचार एव विचारोंमे इसका पूर्ण प्रमाण मिलता है। नृतत्व विशारदगण ग्रीसवालोकी आकृति और

अस्थि तथा चर्मादिको देखकर भी उक्त मतके ही समर्थक हैं, और वर्त्तमान भारतीय आर्योंसे सहोदर सम्बन्ध स्थिर करते हैं।

दोनो प्रांतोके निवासी आर्यगण अवश्य कभी एक ही मा को गोदमे लालित-पालित होकर एक ही भाषा बोल बोलकर बढे थे, और फिर विश्वके अनन्त भागोमें बँटकर बिलग हो गये।

अनेक शताब्दियाँ बीत चुकीं, परस्परसे सम्बन्ध सूत्र पृथक होगये, और देश-कालके भेदसे आचारमें भी अनेक भेद आगये, भाषा और गति भी पलट गई, किन्तु आज इन दोनों महान् जातियोके केवल ऐतिहासिक तत्वमात्र अवश्य रह गये हैं।

उत्पत्ति-स्थलः—

सृष्टिका इतिहास यह माननेके लिये निश्चित रूपसे वाध्य करता है कि ब्रह्माण्डकी सृष्टि मेरु पर्वतके केन्द्र स्थलपर हुई। इस स्थानका पुराना नाम इलामल वर्ष था, और अनेक कालतक आर्यगण यहाँ पर रहकर पीछे केतुमाल वर्ष आये। केतुमालसे आर्योंकी एक टोली मध्य एशियामे आकर बसी, और दूसरी टोली सप्तसिन्धु प्रदेशमें। उस समय तक दोनों दलोमे परस्पर प्रेम था, और एक दूसरेके सुख दुःखके साथी थे। कुछ दिनोके बाद आवश्यकता बढी और भौतिक वादका प्रेम अधिक मात्रामे आकर लोभ बढ़ाने लगा। मध्य एशिया निवासी दलने सुदूर पश्चिम समुद्र तीरके यूनानमे, अपना उपनिवेश बसाना आरम्भ किया, सप्त सिन्धु निवासी दलने भी दक्षिणाभिमुख भारत वर्षमे आकर अपना उपनिवेश बसाया। अब यहाँसे इन दो जातियोको आपसमें राज्य लिप्साकी उत्कण्ठा हुई, और कभी-कभी एक दूसरेके राज्यपर भी चढ़ाई

कर बैठते थे। इस प्रकार बार-बार युद्ध होने लगे और आपसी कटुता बढती गई। एक दूसरेको शत्रुके भावमे देखनेके कारण घृणा भाव भी अन्दरमे जमने लगा। पीछे इस कलहका रूप साहित्यमे आया, और उसका संस्कार संततिपर पड़ने लगा।

ग्रीक का इतिहास वास्तवमें मुख्यतः राष्ट्रका न होकर नगर विशेषका ही महत्व प्रद है। १४५३ वर्षतक इस देशका आचार विशेष बदला सा नहीं दीखता, बादमें आचार भेद होने लगा, और पीछे ये यवन भी कहलाने लगे। भारतीय प्राचीन ग्रंथोमे ग्रीकको यवन देश कहा गया है। विश्वामित्रकी लड़ाईमें वशिष्ठने यवन सेनाको लड़ाईमें भेजा था •। संस्कृतमे कहीं कहीं यवन देशको योनि देश भी कहा गया है।

बौद्ध सम्राट् अशोककी शिला लिपिमें भी यूनानाको योन देश लिखा हुआ मिलता है ×। साथ ही यह भी सत्य है कि भारत देशके पश्चिमी देशवासी मात्रको भी भारतीय आर्य गण मध्य काल में यवन कहा करते थे, किंतु असिरीयाके राजा सल्मनेसरके राजत्वकाल (७२६ से

• महाभारत आदि पर्व अध्याय १७५।

पाणिनि सूत्रमें भी यवन शब्द आया है, ३।२।३ ॥

× यूनानी इतिहासमें भी "यो" (Jo) के गोरूप धारण कर 'योनियों' की उत्पत्ति लिखी है।

ईसाई धर्म ग्रन्थ बाईबिलमें भी यवन देश आया है, देखिये,—Genesisx24, chroniclas 1 5,7, I saich IXVI, 19, Ezekiel XX 13.

७१५ ई० पू०) मे भी ग्रीकको ही यवन कहा गया है*। इन सबोके अतिरिक्त सारमें यह जान लेना चाहिये कि प्रायः प्राचीन सभी देश और ग्रन्थोंमे यवन शब्द ग्रीक देशके लिये ही आया है, अतः यह देश अवश्य सुप्राचीन युगका है, और यहापर पुराने समय में भी आर्य धर्म, तथा सभ्यता थी। अलेक्जेन्डरके पूर्व बहुतसे विद्वान् भारतवर्षका ज्ञान रखते थे। बादमें मगध राजचन्द्रगुप्तके सभास्थ ग्रीक राजदूत मेगास्थनिजने ई० सं० ३०६ से २९६ वर्ष पूर्व ग्रीक-वासी यूरोपियनोंमे भारतवर्षके महत्वको पूर्णरूपसे फैलाया था।

पीछे ये सब वाणिज्य व्यवसायी भी हो गये, एवं मिश्रादि अन्य देशवासियोके संसर्ग से वर्णशंकर विशेषतया उत्पन्न हो गये और आचार भ्रष्ट भी हो गये। महाराजा अज तथा नकुल (पाण्डव) ने इस देश का विजय किया था *। उस समय तक यहा कोई अन्य धर्म था, ऐसा जान नहीं पड़ता है। बौद्ध कालमें भी सम्राट् अशोकने यहापर बौद्ध धर्मका प्रचार किया था। उस समय यहापर अलसन्द × नामक एक प्रधान नगर

---

* देखिये—असिरीया खोर्साबादसे प्राप्त शिला लिपमें, Jaounin=यवन
काम्बोजान्यवनांश्चैव शकानारट्टकानपि, वा० कि० कां० ४३. १२। यवनाश्चीन कम्बोजा दारुणा म्लेच्छ जातयः, म०भी० अ० ९।६५॥

* पल्हवान्बवरांश्चैव किरातान्यवनान शकान्, ततो रत्नान्युपादाय वशेकृत्वा च पार्थिवान्॥ म० सभा० अ० ३२, १७॥

पारसिकांस्ततो जेतुं प्रतस्थेस्थलवर्त्मना, इन्द्रियाख्यानिवरिपुंस्तत्व-ज्ञानेन संयमी॥ यवनी मुख पद्मानां सेहेमधु मदन सः।

× महावश जिगेर अ० पु० १९४। रघुवश

था, यह जाति बलमे प्रसिद्ध होती थी, और इनके बलिष्ठ शारीरिक गठन मन मुग्ध कर होते थे।

ईसवी संवत्के आरम्भ से १८५६ वर्ष पूर्व इनाकास नामका कोई फिनिकीय परिव्राजक स्वजातिके साथ यूनान देश देखने गया। पिलोपनिस स्थानके "नेपोलो" उप सागरके किनारे आर्गस नामकी एक महानगरी बसाई। नगर-स्थापनके ३०० वर्ष बाद, ईसवी संवत् से १५५६ वर्ष पूर्व मिश्र वासियोने आटिका प्रदेशमे अपना उपनिवेश बसाया, और साथ ही एथेन्स महानगरी भी बसाई गई। उक्त कार्यको संपूर्णतया कर दिखाने वाले "सिल्पल" महोदय थे।

पुरातत्व—

यवन देश निवासी ग्रीक गणोके शासक-वंशज वृषल क्षत्रिय थे। ग्रीसके क्रीट (Crete) द्वीपका पहला राजा मेनेस (Minos, या menes) पौराणिक वैवश्वत मनु थे। वर्त्तमान कालीन कश्पियन सागरके पाससे बहनेवाली अक्सस (oxes) नदीका पुराना नाम इक्षु नदी था। इस नदीके किनारे रहनेवाली क्षत्रिय-जाति "इक्ष्वाकु"[1] क्षत्रिय कहलाती थी। इस जातिका एक देवराज विकुक्षु राजाने शशा देशको जीता था। देवराज विकुक्षुका उपनाम कुकुत्स्थ (काकुत्स्थ) था[2]। परंजप के वंशधर महाराज आद्रके नामपर आद्र सागर (Adarfatic sea) और आद्रि-योनोपल (Adrionopal) नगर है। आद्रके पुत्र यवनाश्व

---

१ इक्ष्वाकोः पुत्रतोमाप, विकुक्षिर्नाम देवराट् ॥ ज्येष्ठः काकुत्स्थो नाम्नाभूत्तत्सुतस्तु सुयोधनः ॥—मत्स्य-पु० १२ अ०।

ग्रीसके नरेश इनके वंशका Heliadae (सूर्यवंश) है[१]। ओर्टके प्रथम नरेश Euristhenes को टॉडने युधिष्ठर बताया है[२]। ग्रीसका 'Atreus' राजवंश अत्रिवंशी है[३]। अत्रिवंशी (Atreus) ईरानमें एक हेलिआडे (Heliodae या सूर्यवंश) अथवा हरिकुलवंश (Hercules) भी था। बलराम अत्रिवंशी) हरिकुल थे[४]। हरिकुल लिडिया व सीरियाके भी राजा थे। सिरियाके (Hercules) हरिकुल तथा लिडियाके Heraclius हरिकुल बलराम थे। ग्रीस और बालकन (Balcan) आदि देशोंके विजेता तथा स्वामी शातुनके भाई बलिक बलख उपनाम बलिक, बाह्लीक (Syria) और बलकन (Balkans) इन्हींके नामके देश थे[४]। ग्रीक लोग इन्हींके वंशजोंका नाम 'Balica-Putras' बताते हैं[५]।

ग्रीसके आराध्य देव भी भारतीय नरेश थे, यथा—

१. The Greeks or Ionians are descended from Yawan or Japan, the 7th from Japhet. The Herculas are also Yavanas claiming from Yavan or Javans, 13th in descent from Yayati: the 3rd son of Primeval patriarch.

The Heliadae (or Suryabansh) of Greece had settled there anterior to Herculas of the Indu (Lunar) race.

२. Euristhenes was the first King of the Heraclidae. Yudhisthera had sufficient affinity in name to the first spartan King.

३. The Heraclidae claimed descent from Areus; the Herculas claim from Atri.

४. The Heraclidae penefrated into Peloponnesus (according to Volney) 1078 years before Christ.

५. Balica-putras Balica or Balakh emphatically called the mother of cities, (Tods, Rajasthan; P, 28,45.)

सूर्यके पुत्र शनि उपनाम श्रुतिकर्मा ग्रीस तथा रोमके प्रथम नरेश हुए। रोम और ग्रीसकी सृष्टि इनसे पूर्व की नहीं है। ग्रीसके प्रथम आराध्य देव शनि हैं। इनके राजत्व-कालको ग्रीस और रोमवाले सत-युग (Golden age) मानते हैं। ग्रीस तथा रोममें शनिवार (Sabath) प्रथम दिन माना जाता है। शनिका त्योहार (Saturnalia) रोम तथा ग्रीसमे बड़े उत्सवका दिन है। महीनेके अन्तिम शनिवार (Last Saturday) भी यहीका त्योहार है। भारतवर्षमें शनिका दान लोहा, और ग्रीस तथा रोममें शीशा (Lead) है। इन देशोंमें भी शनिका रंग काला मानते हैं।

ग्रीकवासी शनिकी स्त्रीका नाम राज्ञी (Rhea) बताते हैं, परन्तु राज्ञी उनकी माँ थी। लैटिनकी प्राचीन धर्म-पुस्तकें शनिकी प्रशंसामें लिखी गई हैं। ग्रीसमें सूर्यका नाम हिलियस (Helias) है। पाश्चात्य-देशोंमें सूर्य वंशीयोको टाइटन् कहते हैं। टाइटनका अर्थ 'सजीव-सूर्य' है। यह शब्द त्रियतन (Traitana) का अपभ्रंश है। त्रियतन (Traitana or Traetona) कश्यपका नाम है। परशियाका झंडा (Duru fish kawani) इन्हीका झंडा है। काव्य (शुक्राचार्य) तथा त्रैतन कश्यप) ने इसी झंडेको लेकर ईरानी जोहाक (नाग-वंशी) को मारा था। तभीसे यह ईरानका राज-झंडा बना रहा है। इनके पुत्र इरिज, शमस, हिलियस अथवा सूर्य थे। ग्रीक Leus को Cronus (शनि का पुत्र) मानते हैं। Leus के भाई तथा बहन पेसिडन Pascidon (Nepture), हेड Hades (Pluto), देवमित्र Demeter (Cetes), Hera (Juno) और Hestia (Vestia)

को मानते हैं। Prscidom (Nepture) वरुणका नाम देवमित्र Demeter और Ceres विष्णु अन्न- दाता है; Hestia (Juno) कदाचित् जाह्नवी है; Vesta या Hestia सतीका नाम है; Bacchus (बाघम्बर) शिवका नाम है।

उपर्युक्त प्रमाणोंसे सिद्ध है कि ग्रीस, रोम और ईरान सूर्य राज्य के उपनिवेश थे। ईरानके प्रथम नरेश यम (The Hero Yama of Persian History) और सावर्णि-मनु थे। ग्रीस तथा रोमके प्रथम नरेश सावर्णि-मनुके भाई शनि उपनाम श्रुतिकर्मा थे। यही कारण है कि ईरान तथा ग्रीक स-गोत्री (isster Nations) माने गये हैं। ग्रीसमें न केवल एक Saturnalia ही त्योहार था, वरन् फागेसिया (Phage-ia) भी अर्थात् फाल्गुनी देवीकी फगुई भी वहाँ मनाई जाती थी।

सिद्दिया (Scythia)

शाकद्वीप—

सिद्दिया शाकद्वीपका नाम है[१], जो जम्बू-द्वीपसे मिला हुआ और उसके पश्चिममें है। पौराणिक शाकद्वीप लवण-सागर (पर्शियन साल्ट डेजर्ट) और क्षीर-सागर (Red-sea—लाल-सागर) के मध्यका देश है। इसकी लम्बाई जम्बूद्वीपसे दुगुनी और चौड़ाई (उत्तर-दक्षिण) तिगुनी थी[१]। जम्बू द्वीपकी लम्बाई १०० योजन थी[२]। मत्स्यपुराणमें शाकद्वीपके पर्वत सुमेरु, जलधार, सोमक, रत्नाकर, नारद, सुमना और विभ्राज बताये गये हैं[३]।

सौवर्ण उदय नामके सुमेरु पर्वतमें सोना निकला था। यहाँ देवर्षि और गन्धर्व रहते थे[४]। सोमक-पर्वतपर देवताओंने समुद्र-मंथनके समय अमृत पिया था[५]। अम्बिकेय उपनाम सुमन पर्वतपर हिरण्याक्षको वाराह-ने मारा था[६]। विभ्राज-पर्वत उपनाम केशवपर अग्नि निकलती है[७]।

१—By Saca-Dwipa Scythia is uuderstood.

(Tod's Rajasthan, P. 24)

महा भा० अ० ११। भ० पु० प्रा० आ०११७। वि० पु० अ० ६ अ० ४। महा ५२०० अ०। साम्ब० पु० ७ कल्प। और भी मत्स्य० भागवत। अग्नि, स्कन्द, पद्म पुराणादिमे।

अम्बिकेय-पर्वतका एक खण्ड मैनाक, उपनाम क्षेमक है[८]। शाकद्वीप सुवर्णकी प्रथम राशि शिव (Siwas) मे निकली थी[९]। यहीं अंगिरा और भृगु ऋषियोंका स्थान है[१०]। यहीं यक्षाधिप कुबेरकी राजधानी थी। समुद्र-मथन कश्यप सागरका हुआ था[११]। सोमनानके निकट सोमक पर्वतपर ईरानका देमावंद (Demavand) पहाड़ (वैकुण्ठ-स्थान) है[१२]। सुमना-पर्वत, बैबीलोनियाका सोमेसट (Somssat) पहाड़, जिसके निकट हिरण्यनगर (Harran) में वाराहने हिरण्याक्षको मार-कर वराहिया (Barahia उपनाम Aleppo) नगर बसाया था।

---

१ जम्बूद्वीपस्य विस्ताराद् द्विगुणस्तस्य विस्तरः :
विस्तारास्त्रिगुणश्चापि परिणाहः समन्ततः।
तेनावृतः समुद्रोय द्वितीयो लवणोदकः :
उभयश्रावगाहौ च लवणक्षीरसागरौ। (मत्स्यपुराण, ३६५)

२ शत द्वीपस्य विस्तरः। (मत्स्यपुराण. ३६५)

३ मत्स्यपुराण, शाकद्वीप-वर्णन।

४ देवर्षिगन्धर्वयुतः प्रथमो मेरुरुच्यते ;
प्रागायतः लसौवर्णा उदयो नाम पर्वतः।
[मत्स्यपुराण, ३६५]

५ स वै सोमक इत्युक्तौ देवयत्रा मृतं पुरा।
[मत्स्यपुराण, ३६६]

६ तस्यापरे चाम्बिकेयः सुमनाश्चैव सस्मृतः ;
हिरण्याक्षो बराहेण तस्मिन् शैले निषूदितः।

८ अम्बिकेयश्च मैनाक क्षेमकश्चैव तत्स्मृतम्।
[मत्स्यपुराण, ३६६]

९. Highways of the warld.

१०. Angara and Phrygia or Brygy.

११ कच्छप की पीठपर मथी गई थी। [विष्णुपुराण]

१२ Iranian Paradise. (H. P. Vol. 1. P. 110.)

त्रिभ्राज पर्वत वाकूके निकट है, जहाँ अब भी अग्नि निकलती है[१]। कदाचित् केशव। काकेशस-पर्वतका नाम है। रत्नाकर-पर्वत, कश्यप-सागरके निकट है। । यहीं समुद्र-मथनमें १४ रत्न निकले थे। इन प्रमाणोंसे सिद्ध है कि पामीर, पर्शिया, बेबीलोनिया, समरकन्द, स्वीडान, आरमीनिया, एशिया-माइनर और लाल-सागरके तटतकके देश शाक-द्वीपमें थे। 'शाकद्वीपका नाम इलावृतखण्ड भी है, जिसके दो खण्ड उत्तर और दक्षिण इलावृत थे, एककी राजधानी 'ईलाम तथा दूसरेकी राजधानी एल या इला (Ayla) थी।

अलिसुन्दर (Alexander) के समयका ईरानी नक्शा[२] देखनेसे विदित होगा कि २५ देशान्तर-रेखासे लेकर लगभग ७५ देशान्तर-रेखा-तकका देश सिदिया (Scythia) तथा Sacae (शाका) कहलाता था। ७० देशान्तर-रेखातक जम्बू द्वीप है। अतएक जम्बू द्वीपसे शाकद्वीप अवश्य दूना था। पाश्चात्योंके अनुसन्धानमें शाक प्रथम अरिवर्माके तट-स्थ स्थानके वासी[३] और इला तथा बृहस्पतिके पुत्र साध्य (Scytees) के वंशज हैं[४]। वे कहते हैं कि साध्यके पुत्र पाल तथा नीप थे, जिनसे

---

१. Fire PhenOmena of Baku. (H. P. Vol. I)

२ History of Persia. Vol. I P. 252.

३. The Scythians had their first abode on the Araxes (अरिवर्मा) of the Puranas the Jaxartes or Sihoon, The Puranas thus describe Saca-Dwipa as Scythia. Diodorus makes the Henodus the boundary between Saca-Scythia and India Proper. (Tob,s Rajasthan. P. 51

४. Tod's Rajasthan, 51,

पाली, तथा नैपियन; दो वंश उत्पन्न हुए। उन्होंने मिश्रकी नील नदी तकके देशोंको जीत लिया। शाको (क्षत्रियो) के वंशज Sacans (Sacae), Massagetae (Getes or Jits या जाट) और अश्विअस (Aswas of Aria) भी कहे जाते हैं। इन्होंने असुर तथा मद्रके सूर्यवंशियो (Sauro-Matians) को जीता था। स्ट्रोबोके इतिहासमें कश्यप-सागरसे पूर्वकी समस्त जातियाँ शाक (Scythtc.) बतलाई गई हैं[१]। परन्तु यह असत्य है; क्योंकि कश्यप-सागरके पश्चिम आरमीनियाका नाम भी शाकस्थान (Satasenae) था[२]। आरमीनियामें शाकोंके वंशज (Aaglo-Saxons) भी है। स्कैंडिनेविया-निवासी भी बुद्ध-उपासक तथा उनके वंशज शाक (Scythic) हैं। वे वहाँ ५०० बीसीमें गये थे[४]। पाश्चात्योंका मत है कि जर्मन भी शाक हैं,[५] और जटलैंडके जाट (शाक) हेंगिस्ट तथा होरसाके साथ स्काटलैंडमें भी जाकर बसे हैं। असि (Asi) वंशके जाट (Getes, Yuets or Juts)

---

१. Strabo Says, 'All the tribes, east of the Caspian, are called Scythic"

२. Tod's Rajasthan, P. 52.

३. Turner's History of Anglo Saxons. The Sacasenal were the ancestors of the Anglo-Saxons. Tod's Rajasthan, P. 52.

४. Scandinavia was occupied by the Scythae in 500 B. C. These worshipped Budh or Woden and believed themselves his progeny.

५. Tod's Rajasthan, P. 52.

जटलैंडमें बसे हैं[६]। केंकि तथा ड्रूयिड (Druids) के चक्र तथाभवन सौपाष्ट्रकी कामिनी जातिके भवन तथा शिला-चक्रोसे मिलते हैं[६] सौराष्ट्रके काटी जर्मनीके महाप्राचीन निवासी है[६]। केल्ट (Kelt) तातारसे गये हुए शाक हैं[७]। स्वीडन (Sweden) के निवासी (Swedes) शाक शाकगरसे वहाँ गये हैं[७]। योरपके जिट (Gete) Transax-iana से गये हुये शाक हैं[७]। इसी प्रकार योरप, के स्वीवी (Swevi) भारतवासी "सू" (अहीर) हैं[७]। पाश्चात्य लोग तक्षक-वंशको भी शाक ही मानते हैं[१]। फ्रांस अथवा गाल (Gauls) ग्वाल हैं। योरप की कुछ और जातिया भी शाक हैं, और शाक द्वीपसे ही वहा गई हैं। ईरानी तथा पाश्चात्य इतिहासोंमें ये जातिया केवल देशवाची नाम "शाक" से प्रख्यात हैं; परन्तु उसके वंश-वृक्षका यथार्थ पता नहीं है। हाँ पौराणिक वंश-वृक्ष तथा ईरानके इतिहासके तुलनात्मक अध्य-यनसे शाकद्वीपकी कुछ जातियोंके वंशका यथार्थ ज्ञान प्राप्त होता है।

-शाकद्वीपकी कुछ जातियाँ—

भारत पूज्य मग ब्राह्मण—

भारत वर्षीय प्राचीन पौराणिक ग्रंथोंके देखनेसे पता चलता है कि ईस्वी संवत्से साढ़े चार हजार वर्ष पूर्व (४५००, बी०. सी०,) में भगवान् कृष्णके पौत्र श्रीसाम्बने शाकद्वीपसे मग ब्राह्मणोंको अपने कुष्ट

६ Tod's Rajasthan, P. 52.

७. Tod's Rajasthan, P. 52.

रोगकी चिकित्सा और सूर्य पूजाके लिये लाया था[1]। मग ब्राह्मण एकमात्र सूर्योपासक थे, ये लोग ब्राह्मण होते हुए भी दान ग्रहण न करते थे, और वेद+ इन्हें कण्ठस्थ था। सस्त्रीक सामवेदका गान ये अच्छा करते थे। इनके द्वारा साम्बका कुष्टरोग आराम भी हुआ, एवं साम्बने एक सूर्य मन्दिर निर्माण कर उसमे सूर्य प्रतिमा स्थापितकी। भारतवर्षमें सूर्य पूजाके एकमात्र अधिकारी यही लोग हैं[2]।

जिस समय साम्ब इन्हें ले आने शाकद्वीप गये थे, उस समय शाकद्वीपमें, वर्णाश्रम व्यवस्था, मज्दीय (पारसी) धर्म प्रचारके कारण, नष्ट होगया था। केवल कुछ ब्राह्मणोने ही अनेक कष्ठ सहकर वर्णाश्रम धर्म पाल रक्खा था। साम्बके साथ १८ परिवारके सपरिवार मगब्राह्मण भारत आये थे। बस, उक्त वेदज्ञ तेजस्वी, ब्राह्मणोंके आनेके बाद पुनः शाकद्वीप (सीदिया) के वैदिक धर्म मूलक किसी भी बातोका पता न चलता है, और वहापर मज्दीय धर्मका पूर्ण प्रचार हो गया।

---

१ देखिये—"एवं स आन यित्वातु मगान साम्बो महीपते,
समहात्मापुरा साम्बश्चन्द्रभागा नदीतटे" ॥
भ० वि० पु० ग्रा० प० १४० । साम्ब० पु० अ० ४ ।

पठन्ति चतुरो वेदान्, [भ० पु० ब्रा०] सस्त्रीका सामगायना, [सा०पु०]

२ विष्णोर्भागवतान्, मगांश्च सवितुः शम्भोः सभस्म द्विजान्।
बृहत्संहिता [वाराहमिहिर] ६०।१९ ॥

÷ अष्टादश कुलोपेता, सस्त्रीका साम गायना। भ० पु०
सपुत्र दार सयुक्तो पूजा यज्ञाय चागतो,
स्वल्पेनेवतु कालेन, प्राप्तो मित्रवन पुनः। सा० पु० अ० २६।५०

शिला लेख—

भारतीय पुराण और महाभारतादि ऐतिहासिक ग्रन्थोंके अतिरिक्त भारतवर्षकी कई शिला-लेखोमे भी मग ब्राह्मण समाजको सूर्य पूजा एवं देव तथा पितृ कार्योंमें विशेष रूपसे सम्मानित होते हुए देखा जाता है।

शिला लीपियां यह निश्चय रूपसे बताती हैं, कि आजसे १५०० सौ वर्ष पूर्व आर्यावर्त्तके शाकद्विपीय (मग) ब्राह्मण अतिशय प्रतिष्ठावान् पूज्य और विशेषया सूर्य आराधनाके लिये एकमात्र अधिकारी थे। शाहाबाद (आरा, विहार) जिलाके देव वरुणार्क ग्रामसे प्राप्त एक-शिला लिपिमे लिखा है कि मगधेश्वर द्वितीय जीवित गुप्तके समयसे पहले ही देव वरुणार्क गांवमें शाकद्विपीय (मग) ब्राह्मणोंका वास था, और बालादित्य देव (मगधके राजा) ने उस गावको सूर्य पूजार्थ मग ब्राह्मणोंको दिया था।[1] पुनः उस गावको उसी रूपमे ब्रह्मोत्तर महाराज द्वितीयजीवित गुप्तने भी रहने दिया।

१८८० ई० में मि० कनिङ्घम वरूनार्क-गाँव गये थे, उस समय वहां ६ घर मगोंके थे। उनमेंसे एक छळूरपाड़ेने मि० कनिङ्घमसे कहा था कि "थोड़े दिन पूर्व (१८५० ई०) हमारे वंशधरोकी वह सब सम्पत्ति और ब्रह्मोत्तर जमीन अमरसिंहके पौत्र कुमरसिंहने हमसे छीनकर छीनकर मुसलमानोंको दे दिया[2]।"

---

[1] द्वितीय जीवितगुप्तकी शिला लिपि ईसवी ७ वीं, शताब्दीकी है। देखिये Fleets Inscription's of the Gupta King's, P. 217.

[2] Cunninghams Archeological Survey Reports. Vol, XVI, P. 65, देखिये।

दूसरा ताम्रपत्रका लेख इन्दौरका है। यह पत्र विक्रम संवत् १४६मे लेखा गया है। इस पत्रमे यह लिखा है कि "परम भट्टारक महाराजाधिराज स्कन्धगुप्तके शासन कालमे देव विष्णु नामक ब्राह्मण (रमणीय-शाखा और वर्षण गोत्र धारी) सूर्य मन्दिरके सेवार्थ एक दान देते हैं, आदि[३]।"

तीसरी शिला लिपि गोविन्द पुर (जि०गया, विहार) की है यह लिपि कलकत्ता म्युजियममे रक्खी हुई हैं।

यह शिला-लिपी बहुत बड़ी है। इसमें मगोका शाकद्वीपसे आना और उनके गुणोकी अनेक प्रशंसाये हैं। इसमें एक बात नयी यह है कि *भारद्वाज ऋषी भी शाकद्वीपके थे। अन्तमे यह लिखा है कि मगधेश्वर* श्रीवर्णमानने महाविद्वान् मनोरथ मग ब्राह्मणको अनेक सम्मानसे राज-पंडित बनाया था। गंगाधर और मगध तथा गौड़ाधिपतिके यहाँ मगोका अत्यन्त सम्मान था, यह इस शिला लेखमे विशदरूपसे लिखा है[४]। लेख १०५६ शाका का है।

---

३ Gournal of the Assiatic Society (Bengal) Vol 43, P. 1

४ शिला लिपिके कुछ अंश--

शाक द्वीपः सदुग्धाम्बु निधिवलोयितो, यत्र विप्रो मगाख्या।
शाम्बोयानानिनाय स्वयमिहमहितोस्ते जगत्यां जयन्ति।
भारद्वाज मुनिर्वभूव भुवनोद्धाराभिपातीतयः।........
जायस्त्रत्र मनोरथो दशरथस्तस्यानुजन्मायया।
रानीतो निज राज्यमुज्वलयितुं यत्नात्प्रतीतानना।
पत्नी तस्य मनोरथस्य कृतिनश्चारित्र्य-मुद्रापद।
गौडी देश नरेश शुद्ध सचिव श्रीदेव शर्मात्मजा।
मनोरथका विवाह गौड़ राजाकी कन्यासे हुआ था।

हुन *Huns*

हुन यमराजके पौत्र थे। उन्हें हूण भी कहते हैं। हुन कभी तिब्बतके राजा भी थे। हुनके वंशज मोगल (मंगोल) तथा किरात (टर्क) दोनों हैं[१]।

रवनदिश *Racadish*

हुनके एक भाई रमण भी यमराजके पौत्र थे। ईरानी रवनदिश (Ravandhish) रवनके वंशज हैं। ईरानमें ये आत्माको अविनाशी अब भी मानते चले आते हैं।

मीडिज़ *Medes Mardii*

अजमीढ़के वंशज तथा उत्तर-मद्र (रूस) के निवासी पौराणिक मद्र हैं। शल्य, अश्वपति और पुरूरवा मद्रके ही राजा थे।

नेग्रिटज़ *Negritos*

नेग्रिज़ सूर्यवंशी नृगके वंशज हैं।

नरमसिन *Narm Sin*

नरमसिन नृसिंह, नृग तथा इक्ष्वाकुके भाई थे। ईरानी नरमसिन पौराणिक नृसिंह थे।

---

१. Histori of Persia, Vol. 11

मिडिया—(Media)

यह शब्द संस्कृतके मध्य शब्दसे बना दीख पड़ता है। यहाँके राजा और शहरोका नाम संस्कृत शब्दोके होते थे। आजकल यहाँका गजनी नगर गजपुरसे बना मालूम होता है। चगमटना नामकी अग्रपट्टनया अग्निपट्टन शब्दसे उद्भूत जान पड़ता है।

पूर्वके हग राष्ट्रका हिरात हुआ है। यह राष्ट्र कार्तवीर्य हयवशियो-का था। मय राष्ट्रका मीरत बनना सहज अनुमेय है। अभी कुछलोग मीरतको मैरत ही कहते हैं। यूफ्रेटिटीस नदी सुमत्रीका अपभ्रंश है। इसी प्रकार 'सु' शब्दका ग्रीक मे 'यू' बन गया है। "सुरूप" शब्दसे जैसे "यूरोप" बन गया है। शिग्रीश नदी टायग्रीस कहलाती है और दुर्जसा नदी दुज्जल नामसे उच्चारित है।

ग्रीकलोग नगरवाची नामोमे उ (u) की जगह वाई (y) अक्षर लगाया करते थे। हय गुप्तदेशको ग्रीकलोग ऐगुप्त कहते थे, आज वह मध्य एशिया नामसे पुकारा जाता है। नील नदीका ही रूपान्तर यूरोपीय (oxus) ऑक्सेज नदी है। रेत शब्दका रूपान्तर रीभर है। "महापद्मम्" नगर कभी मसापद्म बना, पीछे मेसोपोटामिया आज बन गया।

काल प्रिया शब्द आज केलेम्प्रिया हुआ है।

(१) लाटी: *The Iatu*

इनका स्थान हरकेनिया, बैक्ट्रिया तथा खुरसानियाके मध्यमे जाटाली

अयाति	(Zotale या Zothale) प्रदेश था[१] ।

कनिंघम महोदयने इनके जाटाली-देशके निवाससे यह अनुमान किया है कि अयाति भी जाट ही थे । अयाति, ययातिके भाई, अयातिके वंशज चन्द्र वंशी क्षत्रिय थे । ययाति बृषपर्वा दैत्य तथा शुक्राचर्यके जामाता थे । बृषपर्वाकी राजधानी सिरियामे थी । शुक्राचार्य अगोरा (अंगिरा) के निवासी थे—गार्डियम (Gordium) इन्हीका गुरुद्वारा था ।

जाट	एजियन (Aegean) सागरके निकट समोस

(Samos) द्वीपके निवासी Xuthi जाट है[२] । करमानके निकटके Zutti भी जाट हैं[३], और दोनो एक ही देशके हैं । ग्रीसमे मोरिया (Morea) के निकट जाट (Zoute) द्वीपके निवासी जाट है । ऑक्सस (Oxus) नदीके तट जाटाली (Zotale) प्रदेशके निवासी

---

१ The parent country of the Iatii was Zotale or Zothale on the bank of the Onus between Bactcria, Hyrkania and Khorasmia, Cunningham (Vol, II, P, 55)

(२) The Jatts, Zotts, Zanthii, Getae Juts, Juses, Zuthi, Xuthi, Messagetae, Thassagetae, 'Gypsy, Zante, Gete, Jits, ये सब नाम पाश्चात्य देशोंमें जाटोंके हैं ।

३, Xuthi of Dionysins of Samos were Jatii or Jats, who are coupled with the Arieni and in the Zuthi of Ptolemy, who occupied the Karmanian desert on the frontier of Drongiana, (Cunningham, Vol, II, P, 55)

(Zanthii of Strabe) भी जाट हैं। अरब-निवासी जाट (Jatt) को (Zott) तथा (Gypsy) भी कहते थे। मिश्रका नाम इजिप्ट (Egypt) जाटोंके जिप्सी (Gypsy) नामसे पड़ा है। टर्की तथा सिरियाकी सीमापर और खानेकिन-स्थानमें जिप्सी (जाट) अब भी बसते हैं। करमान तथा खुरसानमें भी (जाट) बसते हैं। इनकी भाषाके ग्रन्थ भी वहाँ मिलते हैं।

डैन्यूब (Danube) नदीके तट तथा हेमुस (Haemus) पहाड़के ऊपरके निवासी Getae, आक्ससके निकटके मेसजेट Massagetae और थेसूजेट Thassagetae के Getae जाट हैं; जटलैण्डके निवासी Juts (जूट) या Yuets or Getae (जाट) और इङ्गलैण्डके जूट (Jutes) भी जाट हैं[२]। भैंसोका उपयोग योरपको जाटोंने ही सिखाया था।

पारद और पह्लव Parthians (पारद) तथा (४) Pahllwas (पह्लव) ईरानी पारद पौराणिक वृषलत्व क्षत्रिय हैं[३]।

१, Gypsy dialect in Karman and Khorasan Provinces (H, P, Vol, II, P, 79)

Jatts expelled to Khani Kin on the Turkish frontier and to the frontier of Syria (H, P, Vol, II, P 79)

२, Tod's Rajasthan pp, 51, 52, 53,

३ मनुस्मृति

३, Zott, Arab term for Jatt, (H, P, Vol, II, P, 79,

ईरानी इतिहासज्ञोको पारदोके वंश-वृक्षका यथार्थ ज्ञान नही है[१]। इसके विषयमें वे केवल इतना ही जानते हैं कि मनुवंशी दीर्घबाहु (Artaxe-rxes Mnemon) कोई परदेशी थे, जो पारदोके अरिशासी नामधारी राजा हुए। इन्हींके वशज पारदियन हैं[१]। कनिघमके अन्वेषणसे अरिशासी तथा पञ्जाबके दर्भ-विसारके राजा अविसार (Abisares), दोनो सगे भाई थे[४]। दर्भ-विसार नामका सातवाहनो-का एक छोटा सा राज्य पञ्जाबमे अब भी है। जब ईरानी पारदियन परदेशी थे, तो उनका देश अवश्य भारतवर्ष था। यहां उनके भाई थे। पारदोके लोग बहुधा 'मित्र' उपाधिपर हैं। पारदोके एक राजवशके राजा कदाचित् दिलीपके पुत्र अनमित्र उपनाम शासन (Sasan) के वंशज हैं। दिलीपका राज्य ईरानमे था। ईरानी पल्लव भी पौराणिक वृपलत्व क्षत्रिय हैं[२]। पडुकोटाके महाराज भी पल्लव-क्षत्रिय हैं। काची, अमरावती और कृष्णाके तटस्थ देशोमें आन्ध्रोके पश्चात् पल्लवोका राज्य स्थापित हुआ था। सिहवर्मा और सिहविष्णु आदि पल्लव-वशके प्रख्यात

१, The oiigin of the Parthian dynasty can not be traced with certainty, The founder of the dynasty was named Arsaees, The Arsaeids were not a native dynafty, but came fiom outsid,

History of Persia, pp, 330-331.

२, Arrian calls Hbisare's brother Arsace or the dragon worsbipping Scythes of Media and Parthia. (Cunningham, Vol, I, P. 23,)

नरेश हो गये हैं। इनके देशतक यवन-सभ्यताका विस्तार और राज्याधिकार नही पहुँचा। स्मिथके अन्वेषणसे पल्लव भारतवर्षके प्राचीन तथा स्वदेशी शुद्ध क्षत्रिय हैं[१] पल्लवी पारदोंकी भाषाका नाम है[२]। पारदियाका शुद्ध नाम पार्थिव है। पार्थिव-श्रेष्ठ वशिष्ठ भी यहींके निवासी थे[१]। वशिष्ठ मग ब्राह्मण थे। अन्य देशी होनेके ही कारण इनसे कुछ भारतीय ब्राह्मण विरोध भी रखते थे। शासन-वंशी ईरानी नरेशोंकी राज्य-भाषा विशेषकर पल्लवी कहलाती थी[३]। शासन बाहुमान उपनाम दीर्घबाहुके भाई थे[४]। जो कथा दिलीपके गाय

---

१ शनकैस्तु क्रियालोपादिमाः क्षत्रियजातयः।
वृषलत्वं गता लोके ब्राह्मणादर्शनेन च॥
पौण्ड्काश्चोंड्रद्रविडाः काम्बोजा यवनाः शका।
पारदाः पह्लवाश्चीना किराता दरदः खशाः।
[मनुस्मृति, १०, ४४-४४]

२ मगाश्चेते स्मृता विप्राः,आदित्यांग समुद्भवाः।
दिव्यास्ते ब्राह्मणा· ज्ञेया·, वशिष्ठांगिरसोदयः॥ स्क० पु०
इक्ष्वाकवो महिपालो, लेभिरे पृथिवी मिमां।
पुरोहितमिम प्राप्त, वशिष्ठ मृषिसत्तमम्, म० भा० आ० १७४ अ०

३. Recent researeh shaws that Pallavs'aare an indegenous tribe, clan are caste and the names Pallavas and Pavlavas are so identical that most writers think that both mean the same people. (V. A. Smith, P. 419.)

४. Pahlavi means Parthian from Parthava, in which from the proper name appears in the Behisteen inscription. Parsians call archaic persian, Pahlavi, but Europeans know that Pahlavi was the official language of

चरानेकी यहाँ प्रचलित है, वैसी ही कथा शासनके बकरी चरानेकी ईरानी कुर्दिस्तानमे प्रचलित है। शासनकी चौथी पीढ़ीमे हुरमुज (वरुण) परशियाके राजा हुए। रघुकी चौथी पीढ़ीमें राम जम्बू-द्वीपके राजा हुए थे। दिलीपके दो पुत्र अनमित्र और रघु थे। अनमित्र ईरानके राजा हुए, और रघु भारतवर्षके।

दोनों देशोंके राजवंशका वृक्ष यह है—
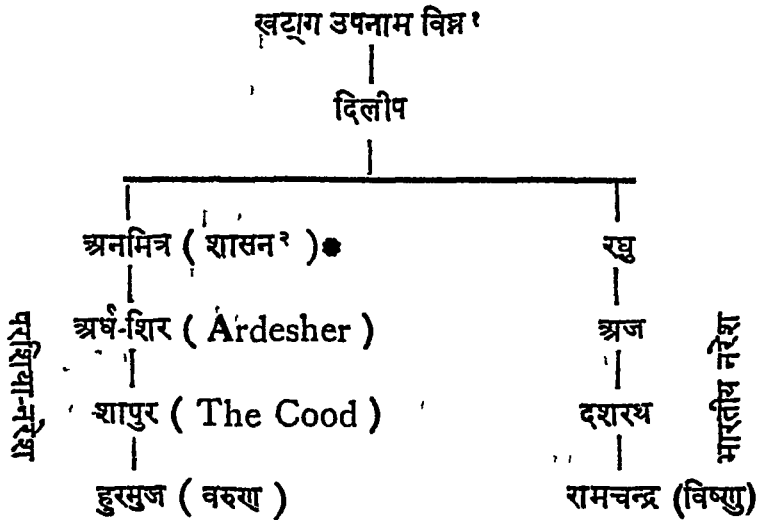
the Sasanian kings who are descended from Sasan brother of Bahuman, from whose head the sun illuminated the whole world and whom Papak, King of Fars, crowned kingia of persia. (H. P. Vol. I, pp. 422–423.)

रामहुरमुज (ईरानका महाप्रख्यात नगर)[1]

राम (विष्णु) तथा हुरमुज (वरुण), दोनोंके संयुक्त नामका एक ही स्थान ईरानी रामहुरमुज है, भारतीय माल ही ईरानमें विशाल वाणिज्य-केन्द्र (Emporium of the gorgeous East) था। पारदमें 'मित्र' (इन्द्र) का भी प्रथम इन्द्रासन था। अर्जुन भी इसी इन्द्रासन और वरुण-देशमें रहे थे। अर्जुनका नाम भी पारथ था। कदाचित् स्वर्गारोहण (ईरान यात्रा) मे अर्जुन पार्थिवमें ही रह गये थे[2]।

पारद प्रतिपदाके दिन और कुँवारके महीनेको शुभ एवं त्यौहार मानते हैं। ये मित्रकी दिग्विजयके सूचक हैं। ईरानके इतिहाससे विदित होता है कि शासनवंशी पारद पह्लव कहलाते हैं। इनकी भाषा पह्लवीसे इनका नाम पल्लव या पह्लव पड़ा है। पारद और पल्लव ईरानी मतसे एक ही जातिके, परन्तु भिन्न कालके नरेश थे। मित्र सूर्यके भाई थे। सूर्यके वंशज शासन वंशी थे। अतएव पौराणिक मतसे भी ईरानी 'मित्र-दत्त-वंश' (प्राचीन पारद) और शासनवंश[3] (Sasaeians) एक ही वंशके थे। पारद तथा पल्लव (पह्लव) मे यही भेद है।

पौराणिक दरदभी वृषलत्व क्षत्रिय है। दरदोके स्थान दरदनी (Dardani) और दरदनिलिस (Dardanells) है। दरदनिलिस को अब दरे-दानियाल कहते हैं। यहा तक भारतवर्षकी सीमा पहले थी।

---

१ इनके समयमें देवासुर सग्राम हुआ था।

२, History of Persia Sasanian Dynasty,

३, Susa or Shasha or shash. the snclent-Capital of Elam (H. P, Vol, I, g, 59,)

(६) किरात भी वृपलत्व क्षत्रिय हैं। स्वाँग (Wang) वंशी मंगोलकी, जो हुन (Huns) वंशी हैं, एक शाखाका नाम किरात है। तुरवात हैदरी और टर्कीके तुर्क (Turks), दोनों किरात हैं। किराती की एक शाखा अब नेस्टोरियन क्रिश्चियन (Nestorian Christians) के नामसे प्रख्यात है। पाश्चात्य देशी करई (Karai) भी किरात हैं[२]।

मध्य एशियाका भारतीयोंके साथ भाई चारा

मैंने पहले ही बताया है कि शक देश और जातिसे भारतीय हिन्दुओंका घरौआ सम्बन्ध था। नासिककी खुदाईसे प्राप्त शिलालेखोंसे पता चलता है कि भारतीय आर्यगण शक-जातिकी कन्यासे घड़ल्लेके साथ विवाह कर लेते थे, और विवाहिता देवियाँ आर्योंके सभी प्रकारके देव और पितृ कर्ममें शामिल होती थीं।

नासिकके एक और शिला लेखमें लिखा है कि:—शक राजा अग्नि वर्मा श्री कन्या, जो विष्णुदत्ताने रोगियोंकी चिकित्साके लिये एक "अक्षय नीवी" (धर्मार्थ फण्ड, सदावर्त) खोला था। विष्णुदत्ता शक

---

४. Midotaur = Half man and half bull,

५ History of Persia, Vol, 53,

The Gigamcs in conflict with the Bull (Genesis X--22,)

Taurus = Bull (Dictionary)

* सिद्ध राज्ञः माढ़री पुत्रस्य शिवदत्ताभिरपुत्रस्य आभीरेश्वर सेनस्य सम्वत्सरे नवम् [६] गिम्ह पखे चौथे [४] दिवस त्रयोदश [१३] एताप पुत्राय शकाग्निवमया दुहित्रागण पकस्य विश्व वर्म मात्रा शकनिकया उपासिकया विष्णुदत्तया गिलान भेषजार्थं "अक्षयनीवी' प्रयुक्ता"।

जातिकी थी, और इसका विवाह भारती आर्य क्षत्रियसे हुआ था। इसके गर्भसे उत्पन्न पुत्रका नाम विश्ववर्मा था, और यह भी आर्य क्षत्रिय श्रेणीमें ही सामिल था।

शिला लेखमे आभीर राजाका संवत् भी दिया हुआ है। संवत्‌के देखने से पता चलता है कि शक लोगोमे महीनाको पृथक गिननेका व्यवहार नहीं था। ऋतुका व्यवहार था और प्रत्येक ऋतुमें ४ पक्ष होते थे। आभीर जाति मध्य एशिया वासी थी। ये लोग भारतमें ईसाकी पाचवीं शताब्दीके अन्तमे भारत आये और यहीं रह गये। ये लोग हिन्दू थे। इन्हें म्लेच्छोमें पहले गिना जाता था; किन्तु म्लेच्छोके धर्म हिन्दू धर्म थे। केवलमात्र चार वर्णोंकी प्रतिष्ठा पूर्ण रूपेण नही रहनेके कारण ये लोग म्लेच्छ कहे गये। विष्णुपुराणमें लिखा है कि,—"जिस देशमें चार वर्णोंकी व्यवस्था नहीं है, वह म्लेच्छ देश है"।

काठियावाड़के गुड़गाव खुदाईसे प्राप्त शिला लेखमे भी आभीर जातिका वर्णन है। आभीरोके कई राजे बड़े प्रसिद्ध और बलवान भी हो गये हैं। बादमे ये लोग अहीर कहलाने लगे।

एलेकजेन्डरके पहले—

यूरोपमे प्राचीन भारतीयोके प्रभाव—

अनेक लोगोकी यह धारणा है कि यूरोपके साथ भारतका पहले कोई परिचय न था। उपरके कुछ सक्षिप्त प्रमाणोके बाद भी अब

— चातुर्वर्ण्य व्यवस्थानं यस्मिन्देशेन नविद्यते सम्लेच्छ देशो विज्ञेयः आर्यावर्त्त : ततःपरम्।—विष्णुपुराण।

यूरोपीय विद्वनोके ही मुखसे एकाध प्रमाण यहाँ और उद्धृत करना आवश्यक प्रतीत होता है कि यूरोपके साथ भारतका जान आन भी था।

कलेक्जेण्डरका दूसरा नाम सिकन्दर है। अब मैं इसी नामसे यहाँ इसे लिखूंगा। सिकन्दरके जन्मसे दो वर्ष पूर्व यूरोपीय इतिहासके एक मात्र प्रथम जन्मदाता मि० हेरोडट् ग्रीकके हालिकारनेसस् नामक नगरमे ४८४ बी० सी० में जन्म लिये। भारतमे बुद्ध भगवान्‌भी प्रायः इसी समय जन्म धारण किये। बहादुर सिकन्दरके जन्मसे निश्चय सौ वर्ष पूर्व हेरोडट्‌ने भारतके सम्बन्धमे इतिहास लिपि बद्ध किया।

इन्होने लिखा है कि भारतीय आर्यगणोने धनुष बाण लेकर अतुलनीय बीरतासे ग्रीकके साथ युद्ध किया था। भारतीय सेना पारसियोके पक्षसे ४८० बी० सी० मे सालामिसरके प्रसिद्ध युद्धमे ग्रीक्से लड़ी थी। इनके लेखोसे पता चलता है कि इससे प्राचीन कालमे भी भारतीय राजा और ग्रीक् राजासे युद्ध हो चुका है। मेधा तिथि नामक पौराणिक राजाका पुत्र प्रियव्रत एकबार ग्रीक सेनाको पराजित भी कर चुका था। इस प्रकार यह अनुमान अवश्य करना सहज सम्भवपर है कि भारत और यूरोपका परिचय बहु प्राचीन था। व्यवसायिक भारती जहाज भी यूरोपमे जाते थे।

\+ + + +

अब मै यूरोपीय दर्शन शास्त्रोपर भारतीय दर्शनोका प्रभाव कहा तक है इसे सक्षेपमें दर्शाऊँगा। यद्यपि इन बातोको स्वीकार करनेमे आज कतिपय अग्रेज निश्चय संकोच बोध करते हैं फिर भी, यह मानना

आवश्यक है कि भारतका प्रभाव उसपर अवश्यमेव वाहुल्येण है।

यूरोपके समस्त दर्शन, आचार और विचार प्रायः ग्रीक समुद्भव हैं, परन्तु ग्रीससे मिश्र देश उस समय भी अनेक सभ्यताके चमक प्रद विषयोमें ग्रीसको चका-चौंध करदेता था। मिश्रका दर्शन तथा ब्रह्म विषयक विचार इन्हें सदा उलझनमे डाल देता था। जन्मान्तर बाद (Conception of the trams migration of the soul) के विषयमे ग्रीस, मिश्रके निकट ऋणी है। मिश्रने इसे अवश्य भारती शास्त्रोसे जाना था, क्योकि जन्मान्तर बाद भारतीयोका ही एकमात्र धरोहर बाद है।

ग्रीसके प्रसिद्ध दार्शनिक पडित पिथा गोरसके दर्शन सम्बन्धीय विचारोमे अनल्प समता बौद्ध और जैन विचारोके हैं। पिथा गोरसके दर्शन विषयक गुप्त रहस्य मय मत (Csotrie as psct of his philosophy) देखनेसे सरलमे ही प्रतीत होता है कि इन्होंने अवश्य भारतीय उपनिषदोको पूर्णतया पढ़नेके बाद अपना बिचार बनाया है।

दूसरे वहाके प्रसिद्ध विद्वान् गार्वेके "ग्रिक-थेकरस् (Greek thankers) नामक पुस्तकमें लिखते हैं कि "पिथा गोरस" बुद्ध केसम-कालीन थे, अतएव उस समय भारतका दर्शन विचार पिथा गोरसके देशमें पहुँचना कोई विचित्र बात नहीं था। रावलिन्सन (Rane-linson) नामके एक विद्वान् लीजेसीय आफ भारत (Legacy of India) नामक ग्रन्थमे लिखते हैं कि कुछ भारतीय ब्राह्मण एथेन्स मे जाकर सेक्रेटिस्के साथ दर्शनके सम्बन्धमे शास्त्रार्थ किये थे। इसका

अकाट्य प्रमाण ये इस्कीब्स (Euscbrius) मे लिखे विवृतियोंसे संग्रह किये थे।

इसकी द्वितीय शताब्दीके अन्तमे अलक्जेन्ड्रिया वासी कलमेंट (Oldment) कहते हैं कि भारतीय दर्शन शास्त्रोके बीच बौद्धोके निजस्व मतवाद थे। साथही उस समय जो कुछ भारतीय अलकजेन्ड्रियामें रहते थे, इसे भी इन्होने इसमें लिखा है। ग्रीक दर्शन बौद्ध-दर्शनके प्रभावसे भरा है, इसे कलमेन्टने स्पष्ट स्वीकर किया है। बौद्ध लोग जन्मान्तर बाद (Docterine of trams migration of the soul) पर विश्वास करते थें और स्तूप पूजा करते थें, इसे कलमेन्ट जानते थें सम्राट् द्वितीय कनिष्कका राज्य सीमासे रोम राज्यकी सीमामात्र ५०० माईलके अन्तरपर था। कतिपय रोम निवासियोंका भारतमें आवागमन था। ऐसा प्रमाण पाया जाता है।

प्राचीन कालमे अलकजेन्ड्रिया व्यवसायका एक प्रधान केन्द्र था। यहाँपर नाना देश और देशान्तरोंसे व्यवसायी लोग आ-आकर एक दूसरेसे मिला करते थें। "टलेमी" ने यहींपर प्राचीन कालका प्रकाण्ड ग्रंथागार स्थापन किया था। इसके पहले एथेन्स एक-प्रधान शिक्षा केन्द्र था, किंतु क्रिश्चियनोके अभ्युत्थानके साथ साथ एथेन्सका पतन होता गया, और अलकजेन्ड्रिया बढ़ता हुआ एथेन्सके स्थानको अधिक मात्रमे अधिकार कर लिया। अब यहींपर चारोंओरसे विद्वान् और छात्र समाज नाना-विद्याके लिये आ जुटने लगे।

आधुनिक ईश्वरवादके साथ ग्रीक देशीय Gnosticism का खूब मेल मिलता है, और Gnosticism का सीधा माने भारतीय

आस्तिकवाद विख्यात हैं। इस वादके प्रधान प्रचारक पडित प्रवर वासी लीड्स (Basilıdeo) अपने व्याख्यानमें सर्वदा भारतीय मत वादका ही प्रचार किया करते थे। वे कहते रहते थे कि—"कष्ट एवं भय मनुष्य जीवनमें अवश्यम्भावी है।" यह मत वाद निश्चित भारतीय मत वाद है।

ग्रीसकी शिक्षा तथा संस्कृति उच्च श्रेणीकी होती हुई भी भारतने जो उसपर प्रचूर आलोक प्रदान किया था, इसे अस्वीकार करनेका कोई उपाय नहीं दीख पड़ता है।

ग्रीस राजकुमार मेनेन्द्र (Menander) बौद्धोंके मिलिन्द वह था अवदान कल्प-लता जिसे संक्षेपमें मिलिन्द कहा जाता है, बौद्ध पंडित नाग सेनके समीप पढ़ा था, तथा उनके पाससे उपदेश भी ग्रहण किया था। डाक्टर हेमचन्द्रके मतसे इस मेनेन्द्रकी राजधानी शाकल नगरमें थी (वर्त्तमान सियाल कोट)।

कुछ दिन हुए पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेशकी खुदाईमे खरेष्टी अक्षरमें लिखा एक धातु पत्र मिला था उससे पता लगता है कि यह धातु पत्र Theodoros maridarkh थियोडोर्स मारी डार्क नामक कोई ग्रीक राजा भारतके सीमान्तपर राज्य करता था।

भास्कर शिल्पपर भारतीय प्रभाव।

ऐतिहासिक विद्वान् सेन्डरसन (Sanderson) के मत:—

If three be one art ın whıch, beyond what thy achieveu ın other ways, thıs wonderful people

the ancient Greeks, attained pre-eminet perfection, It was in the noble art of sculpture the ruproduction, in the Pure marble of their land, of the forms of the lower amals and man, and the representation of their Gods, Goddesses and other beings, imagined in their infinite and fanciful mythology A money the Greeks the human form, as we see if represented in sculptures still existing, reached the pertection of beaty and symmetry.

यह सत्य है कि ग्रीसमे Phidias, myrom, Praxitcles, Scopas इत्यादि मुख्य-मुख्य शिल्पी अवश्य हो गये हैं। इनमे Phidias फिडिया का सबसे बड़े शिल्पीमें नाम भी है, किन्तु भारतके सुप्राचीन (यद्यपि अभीतक भारती प्राचीन शिल्पका ज्ञान अभीतक निश्चय नही हो पाया है) शिल्प कहातक उन्नति की चरम सीमातक पहुँच चुका था, इसे आज भी देखकर चित्र शिल्पी दाँतो अगुली दबाकर साश्चर्य-मुग्ध होते हैं। भूगर्भसे निकले अजन्ता, हरप्पा, मोहञ्जोदारो, पहाड़पुर, कार्ला गुफा, गैवीनाथ पहाड़ (सुलतानगंज, भागलपुर) पर खुदे चित्र तथा बौद्ध गया आदि सब प्राचीन स्थापत्य विशारद भारतीयोके उत्कट शिल्पके निदर्शन हैं। इस विषयमें विख्यात अंग्रेज मि० बोर्ण (Brown) ने ठीक कहा है:—

An Exploration of the Raight and Merza Bore caves might reveeclus not only of the birth of

Paintiny in India, but also throw considerable ligh on the early histor yof man kind in the art generly.

मोहञ्जोदारोके खनन कार्यमें प्राप्त मृण्मय सूक्ष्म चित्र और उत्कीर्ण मुद्रादिको देखकर प्रसिद्ध प्रत्नतात्विक बाबू राखाल दासने कहा था—इस समय जिस सभ्यताका निदर्शन पाया जाता है, वह बौद्ध कालसे भी अति प्राचीन कालके उन्नत भारतीयोंके शिल्प कारीगरीके अकाट्य प्रमाण हैं।

उपरोक्त इन सभी खनन कार्य्योंमें कितने मिट्टीके वर्तन, मिट्टीकी मूर्त्तियां, पत्थरकी प्रतिमा, धातुकी मूर्त्तियां, उत्कीर्ण लिपियुक्त मुद्रायें, नित्य व्यवहारोपयोगी नाना प्रकारकी सामग्रियां, शृंगारके विविध तरहकी पात्रे, स्वर्णालंकार, ताम्र पत्र, खिलौने, धातुके अनेक अस्त्र और आभूषणादि मिले हैं, आज इसकी गणना और वर्णन करना भी असाध्य है।

मोहञ्जोदारो (सिंध प्रान्तमें) के लिये आज विख्यात् विख्यात् पुरातत्वान्वेषी अंग्रेज आदि जातिके विद्वान् कमसे कम इसे ई० सनसे चार हजार वर्ष पूर्वका मान रहे हैं। इन सब चीजोंको देखकर आज भारतीय संतानके लिये अपने गौरवको समझना भी कल्पनासे बाहर हो गया है। एक विशाल उन्नत जातिका पतन कहांतक हो सकता है, इसे अभीके भारतको देखकर दीर्घ श्वास उठता है, और हृदय फट पड़ता है। पता नहीं जगदीश भारतको पुनः कभी वह गर्वमय स्थान देगा या नहीं ?

गिरगिस्ट — गिरगिस उत्तरी तुर्किस्तानकानका नाम था। यहांके राजा नृग थे। अतएव नृग गिरगिस (गिरगिट) कहलाये[२]।

Ghirligist Girgis

गोरी पठान *Ghori* — कण्व-वंशी घौरके वंशज हैं। घौर एक गोत्र है। ये ब्राह्मण भी होते हैं।

गिरगिस्ट[२] *Ghargashti* *Girgist* — गिरगिस्ट पठान राजा नृगके वंशज हैं।

दद्रीक पठान *Dadica Pathan* — दद्रीक पठान दधीचि-वंशी सारस्वतोंके भाई हैं।

केपियट्स *Capiots* — मिश्रके केपियट कपोत हैं, जिनको महाराज शिविने फेरोहासे रक्षा करके शिविस्थान (शिशतान) मे बसाया था। रुहेल पठान कपोत हैं। कपिवंशियोको भी कपि कहते हैं। नील (Nile) के नील कपि (वानर) महाराज कपिके वंशज थे। कपिके भाई पुष्करके वंशज पुष्तन (पठान) है। इन्हीकी भाषाका नाम पश्तो है। कपि, पुस्कर और त्र्यूषण महाराज वरुक्षयके पुत्र क्षात्रोपेत द्विज थे। वरुक्षयका राज्य कश्यप-प्रदेश (Caspian Proviuces) मे था। कैस्पियन सागरका नाम इसीलिये वारुक्षय (Vcuru Kash) भी था। वरुक्षय काश्यप-प्रदेशका भी नाम है।

---

२ The ferm Ghargusht or Ghigist is a corruption of Ghirgisht or Ghuigusht, the third son of Kais (सूर्य).

The word is only an altered form of Girgis or Girghis "wanderer on the steppe" and indicutes the country, whence they originally come, nemly Northern-Turkistan.

(Crooks, Tribes and castes, Vol. IV, P. 163)

समरकन्द

इस समय रूस राज्यके अन्तर्गत है। बुखारासे १४५ उत्तर पूर्वकी ओर स्थित यह देश ६८० ई० तक हिन्दू धर्म और सभ्यताकी छायामें था। पहले इस देशका मकरन्द या मरकन्द नाम था। प्राचीन नगर ध्वस हो जानेके कारण हिन्दू देवलयादि यहाके उसी समय ध्वस होगये हैं। नया नगर पीछे जार अफशन नदीके तटपर वसाया गया।

भारतीय आर्य व्यापारी यहा पर ई० सं० से ३०० वर्ष पूर्व तक बराबर जाया आया करते थे। उस समय यहा आर्य धर्म था, और आर्य उपनिवेश था, आर्य दर्शन एवं उपनिषद अध्ययनके लिये एक बडा विश्वविद्यालय था। मुरदे जलानेकी प्रथा यहा देखी जाती है, और विवाहसस्कारादि भी वैदिक मन्त्रो द्वारा होते थे।

सघ वर्मा नामके एक वोद्ध धर्मी विद्वान् प्रचारक नदा द्वीप होते हुए चीन गये थे। सघ वर्मा इसी समरकन्दके रहनेवाले थे। इनकी मृत्यु भी ६० वर्षकी अवस्थामे चीनमे ही हुई थी। उक्त विद्वान् अत्यन्त दयालु थे। गरीबोंको देखते ही सहजमे उनकी आखोसे आँसूये टपक पड़ती थीं। सहजमे रोनेके कारण—उनका नाम रोदनशील भी पड़ा था। ७०२ ई० मे अरवी मुसलमानोने यहा दखल जमाई, और तबसे धीरे धीरे समरकन्द से हिन्दू चिन्ह निश्चिन्ह हो गये।

इंगलैंड

इस देशमे ड्रूइड (Druid) जातिके लोग रहते है। इनका इतिहास बताता है कि यह जाति पूर्व देशसे यहा आई। अभी भी काश्मीर देशके उत्तरमे 'द्रुई' नामकी एक जाति है। पूर्ण सादृश्य है कि

अंग्रेज इन्ही द्रई से "ड्रूई" बने। ये लोग "कालतोय" नामक एक जातिके धर्म गुरू थे। इनके मुख्य गुरूका नाम "सर्वनिधि" था। औरो के नाम "सुभग" "सुवाद" तथा "सुकुल" आदि थे। इस जातिमे सती प्रथा थी। ये लोग गुफामे बैठकर ईश्वर लिंगकी उपासना किया करते थे। ये अपनी गुफाके सामने रक्खे पदार्थको अमृत खेड कहा करते थे। इनके कुछ भाग बिलुचिस्तानमे भी थे। इनकी भाषाके अधिक शब्द द्राविड़ भाषाके हैं, इससे अनुमान होता है कि ड्रूइड शब्दका मूल शब्द द्राविड़ ही था। अग्रेज लोगोकी विजय घोषणा (warcy) का शब्द हिप्-हिप् हुर्रे है। वास्तवमे इस शब्दका अर्थ अग्रेजी और लैटिनमे नही है। यो हिप् शब्दका अर्थ पोद होता है, जिसका विजय घोषणासे जरा भी सम्बन्ध नहीं मिलता है। ऊपरमे कहा गया है कि ये लोग ईश्वर लिङ्गके उपासक थे, × अतएव इस शब्दका अर्थ उसी देवता ध्वनिक परक करना युक्तिसगत है। "स" का उच्चारण "ह" होता है ,यह प्रमाण सिद्ध है। जैसे कि सताहको हताह कहा जाना। और ' प" का उच्चारण भी अनेक जगहोमे "व" होता है। इससे सिद्ध है कि यह जाति अपने विजय पर ' शिव शिव हरे" अवश्य कहती थी, पीछे यही शब्द उच्चारण दोषसे शिवसे सिप् और बादमे ' हिप" हो गया। इसी प्रकार हरेसे हुर्रे बन गया है। ×

इस जातिमे दो सभ्यता है। द्रविड़ और शक इसीसे इसके उच्चारण भी दोनो शब्दोके सयोगसे हुए हैं। यहाँ पर "सेक्शन" शब्द विचारणीय है। इस शब्दका मूल अर्थ है।

× Bidle, molia देखो।

"शक सून" अर्थात् शक जातिका पुत्र यही शब्द पीछे सेक्सन बना जिसका अर्थ है "विभाग" जिससे प्रमाणित होता है कि शक और द्रविड से मिले यह एक भिन्न ही जातिके हैं। इसीसे यहा "श"का उच्चारण "ह" हुआ, और "हर" संस्कृत शब्दसे शक-भाषामें "हिरास" तथा दोनों उच्चारण मिलकर हिरो बना है। अर्थाप् श्रेष्ठ वीर। इनका प्रसिद्ध कानून ग्रन्थ मोभ्भेज मनु संहिताका ही भिन्न रूप है। इससे निश्चित है कि यह जाति अवश्य कभी आर्य जातिकी, सभ्यता तथा धर्मके प्रभावमे श्रद्धा युक्त रही है।

आयर्लैण्ड।

इस देशको भागवतादि पुराणोमे स्वर्ण प्रस्थ कहा गया है केन्द्रीय (Center Europ) यूरोपका यही स्थान पहले प्रसिद्ध था। ईसवी संवत् २०० वर्ष पूर्व तक इस देशमे आर्य धर्म और आर्य सभ्यता थी। इसाई धर्मके पहले यहा वाले अग्नि, सूर्य, और वरूणादिकी उपासना करते थे। आयर्लैण्डसे अभी भी देव, देवी, अप्सरा, तन्त्र, तथा, मन्त्रादि सम्बन्धी अनेक कहानियोका सस्कार वर्तमान है। ४०० ई० में यहा पर ईसाई धर्मका सर्वप्रथम प्रचार हुआ। उस समय भी यहाँ पर हिन्दू देव देवियोकी मूर्तिया पूजी जा रही थीं। ४३१ ई० मे ईसाई धर्मके प्रचारने जोर पकडा और हिन्दू देव देवियोकी उपासनाके विरुद्ध मत बनने लगे। ७८५ ई० मे आयर्लैण्डमे मूर्तिपूजक और ईसाई धर्मियोमे युद्ध आरम्भ हुआ, किन्तु ईसाई धर्मियोका उस समय यहा नया प्रचार था, और उनके वातावरण भी कुछ विशेष बलशाली हो चुके थे, अतएव धीरे धीरे मूर्ति पूजकोका अभाव होता गया, और ईसाई धर्मियोने यहासे मूर्तियोका समूल नाश कर डाला। भारतीय हिन्दू साधू इस देशमे विशेषकर भ्रम-

णार्थ आते रहते थे। इस देशमें सती प्रथा भी पहले थी। हिन्दू आचार के कई आदर्श यहा पर पहले सुदृढ रूपमे थे। ×

आस्ट्रेलिया (Australia)

नृतत्व विद ऐतिहासिकोका कहना है कि भारतवर्षसे द्राविड़ जातिकी एक शाखा चर्मनिर्मित नावो पर चढ़कर महासमुद्रकी भीषण तरङ्ग मालाओको पार करती हुई अस्ट्रेलिया पहुँची थी। इस जातिका यहा वास भी हो गया,और इन्हीके सन्तान आज भी यहाके मूल निवासी हैं।

अफ्रिकाः—

अफ्रिका हिन्दुओका बहु वर्षो तक उपनिवेश था। १६ वी शताब्दी मे बहुतसे अफ्रिकन जातिका भारतसे आन जान एवं हिन्दूधर्ममे दीक्षित होनेकी बात मिलती है। अभी कुछ दिन पूर्व गुजरात देशवासी वणिक समाज यहा व्यापारार्थ अपना उपनिवेश बनाये थे।

×देखिये—भागवत पुराण ५, २० । वायु पुराण ३६ अ० विष्णु पुराण १७५ और Asiatic Reserches Vol. VII P. 905

अमेरिका (U. S. of America) ।

यह एक महा-द्वीप है और मुख्यतः उत्तर अमेरीका, मध्य अमेरीका, तथा दक्षिणी अमेरिकाके नामोसे तीन भागोमें बॅटा हुआ है। उत्तरसे दक्षिण तक यह ४६०० मील, और पूर्वसे पश्चिम तक ३१२० मील तक लंबा और चौड़ा है। भू परिमाण प्रायः ८३,१६,७११ वर्ग मील पर्य्यन्त है।

वर्तमानमे यह देश संसारमे सबसे धनिक गिना जाता है। यहापर इस देशका कोई अन्य विषय सम्बन्धी बाते न लिखकर मै केवल इस महाद्वीपका भारतीय हिन्दुत्व सम्बन्धकी कुछ प्रामाणिक आलोचनाओपर ऐतिहासिक प्रकाश डालूंगा। इस महादेशको वर्तमानमें भौगोलिक गण पश्चिम गोलार्द्ध कहते हैं। इसका आधा भाग १००° द्राघिमाके पूर्व है।

जातिः—

अमेरिकाके आदिम नावासी ताम्र वर्णके होते हैं। आकार मेये बोने, ओठ. और गालके मोटे, तथा लबे-लवे काले बालो वाले हैं ये लोग अमेरिकामे सर्वत्र देखनेको मिलते हैं। अग्रेज लोग इसे रेड इण्डियन × (Red Indian) कहते हैं, और ये लोग हिन्दू-धर्मके महान् आदि देव भगवान् सूर्यके उपासक हैं।

यूरोपियनोमे सर्व प्रथम अमेरिका पहुँचनेवाले कोलम्बस × जब अमेरिकामे पहुचे थे, तो वहाके आदिम निवासियोने उनके प्रति सूर्य लोकसे भेजा गया देव दूत समझकर भक्ति प्रकट की थी।

उत्तर अमेरिकाकी प्राचीन जाति, इण्डियन, आजे तक, और एस क्विमोके नामोसे ३ भागोमे पृथक है। तीनोमे आजेत कही पुरानी जाति मानी गई है। १३ सौ वर्ष पहले "तोल तेक" नामक कोई सुसभ्य जाति इस देशके उत्तर अना-हु याक स्थानमे बस गई थी। अना-हु-याकको इस समय मेक्सिको (Mexico) कहा जाता है। विधिकी विडम्बना से कुछ दिनो बाद "तोलतेक" यहांसे चले गये, किंतु उनके द्वारा निर्मित यहाकी बड़ी-बड़ी चित्र विचित्र अट्टालिकाये अभी भी भग्न दशामे मिलती हैं। उस समय गृहादि पत्थरके बनते थे। मकानके ऊपर मदिरके गुम्बज बनाये जाते थे। मकानकी चित्रकारिया निश्चय प्राचीन भारतीय ढगकी होती थी। सूर्यदेव और भूट्टादेवकी मूर्तियाँ अतिशय सुन्दर और बड़ी तथा छोटी हैं।

शरीरमें लाल रग लगानेसे, ये लोग लाल (Red) इण्डियन कहे जाते हैं।

कोलम्बस १२ अक्टूबर १८=९२ ई० मे सर्व प्रथम अमेरीका आये।

पुरावृत्त ।

अमेरिकाके आदि आधिवासी समाजमें भगवान् रामचन्द्र और साध्वी श्रेष्ठा माता सीताका उत्सव अत्यन्त धूम-धामसे मनाया जाता है[१] अन्यान्य पुराणोमे और महाभारतादि ग्रन्थोमे इस देशको पाताल लोक कहा गया है। यहाका पेरू (Peru) देश वहु प्राचीन है। *

इसकी सभ्यता और समृद्धिका इतिहास भी निराले ढगका पुराना है। पेरूके उसीसुपुरातन समयको पाश्चात्य अन्वेषक लोग "इङ्क" पूर्वकाल कहते है। इङ्क शब्द पेरू वीय है, और इसका यथार्थ अर्थ सूर्य होता है। उक्त इङ्क पूर्व जाति सभ्यता, भाषा, धर्म और आचरणमें दक्षिण अमेरिकाकी और और जातियोसे श्रेष्ठ तथा समुन्नत थी। उन लोगोकी कला-निपुणता तथा भास्कर्य चित्रोके निदर्शन आज वहाके भग्न मंदिरादिकोमे देखनेको मिलते हैं।

पेरू देशके स्थान-स्थानपर ये भग्न मंदिर खडहरोके रूपमें पड़े और खड़े हैं।

टिटिका ह्रदके किनारे पर डिया-हुनाकुका का ध्वंशावशेष आज भी दर्शकोके हृदयको वरवस खींच लेता है। उसके प्रत्येक द्वार पत्थरके बने हैं, नापमे १० फीट ऊँचा और १३ फीट चौड़ा है। अन्दरके खंभे पत्थरके बने हैं, जो २२ फीटके है। मंदिरकी चारो ओर खुदी हुई देव मूर्तियाँ ३० फीटकी लम्बी हैं। दुर्भाग्य है कि इतनी बड़ी कला कुशलता की उन्नत दशाका सठीक इतिहास आज उपलब्ध नहीं है। इतिहासके न

१—Assiatic Researches, Vol, XI

* यह दक्षिण अमेरिकामें है।

मिलने पर भी यहाके मदिर, कला, सभ्यता, भाषा, आचरण, और देव मूर्तिया यह निश्चय दीखा देती हैं, कि यहा कभी हिन्दू सभ्यता उन्नत शिखर पर थी।

इस देशसे भारतवर्षमे प्रचूर सुवर्ण आया करते थे। जो सोना भारत मे मैक्सिका आता था, उसका नाम "माक्षिक सोना" है, और पेरूसे आनेवालेका नाम 'पारूज सोना' है।

अर्जुन-विवाह

महाभारतके देखनेसे पता चलता है कि महाराज अर्जुनका विवाह इस पाताल लोकमे हुआ था। जिस रमणीसे अर्जुनका विवाह हुआ था। उसका नाम उलूपी था, + इस देवीका विवाह आर्य रीतिसे हुआ था, अतएव निश्चय ही उस समय वहापर आर्य धर्म था।

पेरू शब्द यो तो भारत वर्षमे बहुत दिनोसे प्रसिद्ध है, और अनेक अर्थोमे है, किंतु इधर कुछ एतिहासिक अन्वेषक जो वेदोमे देश वाची नाम और इतिहास मानते हैं। वे कुछ वेद मन्त्रोमे पेरू शब्दको देखकर पेरूके साथ भारतीयोका पुराना सम्बन्ध स्थिर करते हैं। *

ऐरावत्कुलो जात., कौरव्यो नाम पन्नगः।
तस्याह दुहिता पार्थ, उलूपी नाम पन्नगी॥
महा० आ० अ० २०२, श्लो० १८॥

क्रोशन्ति गर्दा, कन्येवतुन्ना, पेरुतुञ्जानापत्येव जाया।
तै० सं० ३।११।४।

* शन्नो अपां नपात्पेरु रस्तु। ऋ० ७-३५,१२।
युक्तोह यद्वां तौग्राय पेरुः। ऋ० १,१५,३।
अपां पेरु जीवधनम्। ऋ० १०,३६,४।

अमेरिका और हिन्दुत्व

यहापर ईसवी संवत् की १३ वीं, शताब्दीके हिन्दू चिन्ह मिलते हैं। भगवान् कृष्ण और भगवान् बुद्धके आकारकी मूर्ति, शिर विहीन समाधिस्थ बुद्ध भगवान्‌की प्रतिमा (कूर्म पृष्ठ पर), स्वस्तिक चिन्ह, लम्बोदर गणेश की सूंड मुख प्रतिमा, भारतीय स्त्रियोकी मूर्ति, साधुओकी मूर्तिया आदि अनेक चिन्ह मध्य अमेरिका, मैक्सिको और दक्षिण अमेरिकाके पेरू (Peru) आदिमे पाये गये हैं। इन सब चिन्होको देखकर अमेरिका के व्यापार मडलके सुविख्यात् अध्यक्ष अलेक्जेन्डर डेर मार्कने × यहा ब्राह्मण धर्मका प्रचार 'माना है। यहापर भारतीय पंचाङ्गोके सदशही चन्द्र माससे मासोकी गणना और पचाङ्ग निर्माण होते थे। साथ साथ यहाके आचरण भी ठीक भारतीय आर्योके ही समान थे। एक हाथी पर बैठा पिलवान् (महावत) चित्र (खुदाईमें प्राप्त) बिल्कुल भारतीय वेष भूषाका है। उस समय यहा वाले चन्दनादि भी लगाया करते थे। स्त्रियो के श्रृङ्गार भी पूर्ण आर्य रमणियो जैसी ही थी।

सूर्य पूजाका इतिहास।

अमेरिकाकी प्राचीन इण्डियन जातिके बीच मय नामक जाति सूर्योपासना चमत्कार पूर्वक करती थी। सूर्यदेव यहांपर सामरिक देवताके

+ देखिये Indian Review (September 19-12) Historical and Statistical Information respecting the History, candition and Prospects of the Indian tribes of the United states, by H. R School croff, philodelphia, 1, 2, 3, pt.

महत्वपर प्रतिष्ठित थे, यहाँ वालोंका विश्वास था कि भगवान् सूर्यदेव अपनी पुष्टिके लिये मनुष्योंका रक्त चाहते हैं, और इसलिये सूर्यदेवके समीप युद्ध अवश्य करना चाहिये। युद्धका उद्देश्य शत्रुओंका विनाश न होकर, देव बलिके निमित्त ही विशेष आवश्यक माना जाता था। नर बलि * साधारण धर्मानुष्ठानका एक मुख्य अङ्ग था। बलि-प्राप्त मृतात्मा सूर्य लोक प्राप्त करता है, एव उसके लिये सबसे सरल मार्ग भी यही है, ऐसा साधारण जनोंका विश्वास था। सूर्य देवता लाल रंगके हैं, × अतः इस देवताकी प्रसन्नताके लिये प्रायः सभी लोग शरीरमें लाल रंग लगाते थे। पूजा आदि सूर्य देवताके धर्मानुष्ठान तथा बलिके लिये नियुक्त व्यक्तिको भी लाल रंगका वस्त्र पहनाया जाता था। उसमयके भग्न सूर्य मंदिर यहाके अत्यन्त बृहद् और आकर्षक हैं। सूर्यदेवको ये लोग जगत—सृष्टिकी आत्मा मानते थे।

* दूसरे कोएल नामक देवताको नर-बलि नहीं दी जाती थी।

× भारतीय धर्मग्रन्थोंमें भी सूर्यको लाल रंग (जवाकुसुम समकाशं) की आभावाला तथा इस देवकी आराधनामें लाल वस्त्र परिधानका विधान है।

ALL RIGHTS RESERVED